ओ३म्

दृष्टान्त-समुच्चय।

जिसमें

उत्तमोत्तम प्रत्येक विषय के १९४ में
दृष्टान्त सम्मिलित हैं

जिसको

श्री प० शिवशर्म्मा उपदेशक
श्रीमती आर्य्य-प्रतिनिधि सभा यू०पी० ने
अनेक विद्वानों के व्याख्यानों से
संग्रह किया।

और उसीको

प० शंकरदत्तशर्म्मा ने अपने
"शर्म्मा मशीन प्रिंटिंग प्रेस" मुरादाबाद में
छापकर प्रकाशित किया।

प्रथमवार १०००
सम्वत् १९७१
मूल्य १=)
डांकव्यय=)

भूमिका।

प्रिय पाठकगण ! इस संसार समुद्रमें देखो कैसे २ दृष्टा-
रूपी रत्नभरे हैं जिनका मूल्य कोई व्यक्ति देनहीं सकता सुव-
रूपी रत्न न्यूना धिक मूल्यपर मिलभी जावें, परन्तु यह अमूल
रत्न बड़े प्रयत्नसे प्राप्त होतेहैं इस ही कारण हमने उन रत्नों
को बड़े २ विद्वानों द्वारा संग्रह कर आपकी सेवामें उपस्थित
किया है। इस दृष्टान्त समुच्चय नामा पुस्तक में १६४ में दृष्टान्त
सम्मिलित हैं। दृष्टान्त (मिसाल) एक ऐसा पदार्थ है कि
उपदेष्टा (समझाने वाला) कठिनसे कठिन विषय कोभी
मिसाल द्वारा जिज्ञासुः (समझने वाले) को बहुत जल्द समझा
झादेता है। इसमें व्यर्थ हंसी दिल्लगी या समय के खोने के
दृष्टान्त नहीं हैं। किन्तु प्रत्येक दृष्टान्त कोई ईश्वर स्तुति, क.
धर्म विवेचन, कोई लोक, पर लोक, यज्ञ आदि विषयों की
उत्तमता को पूर्णतया दिखाते हैं। यदि आप लोगोंने इस पुस्तक
का गौरव बढ़ाया तो मैं द्वितीयभाग भी जल्दही सेवा में
उपस्थित करूंगा।

विनीत,

शिवशर्मा उपदेशक

श्रीमती आर्य्य प्रतिनिधि सभा०यूपी

दृष्टान्त समुच्चय

की

विषय सूची।

दृष्टान्त समुच्चय की विषय सूची।

दृष्टान्त समुच्चय की विषय सूची

ध्यान दीजिये !

श्रीमान् जी धोकेसे पुस्तक में पृष्ठ तीनकी जगह छः और छः की जगह तीन आगया है यानी इम्पोज़ ग़लत हो गया है पुस्तक पढ़ते समय इसे ठीक कर के पढ़ा कीजियेगा ।

ओ३म्

* जगद्विधात्रे नमः *

दृष्टान्तसमुच्चय

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराण-
स्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
वेत्ताऽसि वेद्यञ्च परञ्च धाम,
त्वया ततं विश्वमनन्तरूप ! ॥१॥

१-जैसा सुने वैसा ही करने वालेका मूल्य।

एक राजा ने, विद्वानों की परीक्षा करने के लिये, सोने की दो मूर्तियां इस प्रकार की बनवा रक्खी थीं कि, जिन के आकार, रूप और तौल इतने जचे हुए थे कि किसी प्रकार से भी उन दोनों में कोई भी अन्तर ज्ञात नहीं होता था। बहुत से समझदार लोग राजा के दरबार में आये और अनुत्तीर्ण (फेल) हो कर अपना सा मुंह लेकर चले गये। अन्त को एक योगी जी भी आ निकले और उनके सामने भी वही परीक्षा आ उपस्थित हुई। योगी जी उस समय तो उन दोनों

मूर्तियों का अन्तर कुछ भी नहीं बतासके। सोच साच कर यह बोले कि 'मुझे इन दोनों मूर्त्तियों को अपनी कुटी पर ले जाने दो, सम्भव है कि एकान्त में कुछ अन्तर समझ में आजावे।' राजा ने स्वीकार करलिया, और योगी जी दोनों मूर्त्तियों को अपनी कुटी पर लिवालाये। रात्रि को दीपक के सामने पुनः उद्योग करना आरम्भ किया। अकस्मात् चित्तमें यह बात आई कि कोई ऊपरी भेद तो मालूम होता नहीं कदाचित् कोई आन्तरिक (अन्दरूनी) भेद हो। इतना सोच कर एक तुनका लेकर कान के छेद में को डालने लगे। ऐसा करने पर तुनका आरपार होकर दूसरे कान के छेद में को जा निकला! इसीप्रकार दूसरी मूर्त्ति के कान में को डाला तो उस के दूसरे कान में को नहीं निकला, किन्तु उस के सिर में को चला गया। अब तो, यह बात देख कर, योगी जी अत्यन्त प्रसन्न हुए और प्रातः काल को प्रतीक्षा करने लगे। प्रातःकाल होते ही दोनों मूर्त्तियोंको लेकर योगी जी राजदरबार में पहुंचे। सभा एकत्रित हो गई, और योगी जी ने अन्तर बताना आरम्भ किया। आपने एक की छः कौड़ी और एक का छः करोड़ कीमत बताई। सारी सभा चकित हो गई। है! यह क्या? सोना समानभाव का, तोल समान, कारीगर एक, बनावट समान, फिर अन्तर कैसा? और

जारहे थे इन के बचनों को सुनकर उस पर दया दर्शाकर, सेठजीसे ये बचन कहे 'सेठजी चलो तुमको स्वर्ग में भेजदें' सेठजी ने योगी के वचन सुनकर कहाकि 'महाराज जी-तो मेरा स्वर्ग को जाने को बहुत दिनों से चाह रहा है, परन्तु मेरे पास जो धन है उसका कोई भोगने वाला नहीं है, यदि कोई सन्तान उत्पन्न हो जावे तो अवश्य ही आपके साथ स्वर्ग को चलूं। फिर कभी फेरा करना, मौका लगा तो चला ही चलूंगा। साधू जी इतना सुन कर वहां से चल दिये। इधर लालाजी के दो पुत्र उत्पन्न हो गये और साथ २ लाला जी भी इस अनित्य शरीर को छोड़कर चल बसे। कुछ काल के उपरान्त योगी जी को पुन: इस लाला की सुध आई, और इसकी दूकान पर आकर बूझने लगे कि " भाई यहां पर एक मोटेसे लाला बैठे हुए दाना दला करते थे, वे कहां चले गये" उन लड़कों ने उत्तर दिया कि वे तो स्वर्गवास करगये। योगी जी ने. योगबल से, उस का पता लगाया तो लाला जी को अपने ही घर में गाय का बछड़ा बना पाया। योगी जी ने समीप जाकर उस से (बछड़े से) कहा कि " सेठजी अब तो पशु होगये, चलो अब भी इच्छा हो तो स्वर्ग को ले चलें। बछड़ा बोला " महा-राज क्या कहूं। जी तो करता है परन्तु एक बात बड़े खिसारे की है कि मेरे बेटे जो प्रतिदिन पैंठ को जाया

मेरे समान धनी नहो। एक दिन एक साधू उसके पास आगये। सेठजी ने साधु जी को भोजन कराकर प्रसन्न कर दिया। प्रसन्न हुए साधु सेठ जी से बोले कि 'सेठ जी कहो तुम्हारी इच्छा क्या है'? सेठ जी हाथ जोड़ कर बोले कि महाराज! मेरी इच्छा यह है कि जिस वस्तु को मैं छू दूं वही सुवर्ण की हो जावे।' साधु बोले 'एवमस्तु'। अब तो सेठ जी की खुशी का पारावार नहीं रहा। प्रातःकाल होते ही सेठ जी अपने बाग में गये और फूलों को छूने लगे। वाह! क्या कहना है? अब तो जिसे छुआ वही तत्काल सोने का बन गया! क्या खूब! लाला जी के बाग में तो सोने के फूल लटक रहे हैं!! आहा! आम भी तो सोने के ही हैं!!! सेठ जी फल फूल सोने के! लिये घर को आरहे हैं। बच्चे देख कर मगन हो रहे हैं। खुशी२ में दोपहर हो गया। भोजन का थाल सामने आया। ज्यूं ही लाला जी ने पूरी छुई, त्यों ही सोने की बनगई! लड्डू छूते ही सोने का, हलवा छूते ही सोने का। फलतः जो भोजन छुआ वह सोने का हो गया। अब तो लगे भूखे मरने। इतने में ही दो बच्चे चाचा चाचा कहते आ गये और लगे लिपटने। यह तो भूखे पड़े थे, हाथ से हटाने लगे। ज्यों ही बच्चों को छुआ वे भी सोने के हो गये और मूर्ति के समान

बैठे के बैठे ही रह गये! अबतो घर में रोना पड़गया। लाला और उनकी स्त्री सब ही रोते हैं। लालाजी के पास आते सब डरते हैं, ऐसा नहो कि यह छू दें और सोने के हो जावें। इतने में साधु भी अकस्मात् आ निकले, और रोने पीटने का शब्द सुन कर दया से प्रेरित हो कर बोले कि 'कहो सेठ जी अब क्या दुःख है, जो सारा कुटुम्ब रोता है? सेठ जी पैरों पर गिर कर बोले कि 'महाराज! कृपा करके इस तासीर को मेरे हाथों से हटाइये, देखो इस ही से मेरे बच्चे सोने के हुए पड़े हैं। दिन भर भूखों मरते हो गया। सारा भोजन छूते ही सोना हो गया' साधु जी को उसकी दशा पर दया आई और साथ २ उस की अत्यन्त लोलुपता पर भी शोक हुआ। साधु जी ने फिर 'एवमस्तु' कह दिया। अब लाला जी होश में आये और रोटी खाकर शान्ति प्राप्त की।

= = =

३—मायामोह में फंसे हुए की दुर्गति।

एक दूकानदार दोपहरी में, दाना दलते जाते थे और दुःखी होकर यह कहते जाते थे कि "इस के बदले मौत होती तो अच्छा था, दाना दलते २ तो मरे जाते हैं" अकस्मात् एक योगी ने जो कि उस समय उस मार्ग से

फिर इतना ! योगी जी ने इस प्रकार शङ्का का समाधान करना आरम्भ किया:–' यह मूर्ति, जिस के एक कान से डाला हुआ तुनका आरपार होकर दूसरे कान में को निकल जाता है, उस मनुष्य के समान है जो सदुपदेश सुन कर अनसुना कर देता है—इस कान से दूसरे कान में को निकाल देता है; इस लिये छः कौड़ी को है। दूसरी मूर्ति छः करोड़ की इस लिये है कि यह उसमनुष्य के समान है जो सुनकर सोच विचार करता है,और उस पर अमल करता है ' सारी सभा सुन कर दंग रहगई और योगी जी की बड़ी प्रशंसा की।

फल—

मनुष्यों के शरीर के हाड़,मांस और कर्त्ता एक ही हैं, उनके गुणों में अन्तर है। जो वेद शास्त्र पढ़ और सुन कर उन पर चलता है वही सुख पावेगा अन्य नहीं।

= = =

२—धनकी अनुचित लालसा का बुरा परिणाम

एक सेठ, जिस के पास धन तो बहुत था, परन्तु फिर भी यही सोचा करता था कि किसी प्रकार मेरे पास इतना धन हो जावे कि कोई भी पुरुष संसार में

करते हैं, मेरी पीठ पर बोझा लादकर ले जाया करते हैं, यदि मैं स्वर्ग को चला जाऊं तो इनका बोझ किससे कौन ढोवेगा" साधु जी ने फिर भी उस से कुछ न कहा और चलते हुए। सेठजी ने बछड़े का शरीर छोड़कर, अब कुत्ते का शरीर धारण किया। कुछ काल के उपरान्त साधु जी को अपने कृपापात्र की फिर सुध आई। फिर उसी स्थानपर आकर लगे ढूंढने बद्धराज को। अनुसन्धान से पता लगाकि वह बैल तो मरगया। साधजी ने योगबलसे सेठजीको आत्मा कुत्तेमें जानपता जा लगाया। साधु जी ने बड़ी नम्रता से कहा कि लो अब तो चलो क्या इस से अधिक और दुर्दशा भोगनी हैं। कुत्ता बोला साधू जी! क्या कहूं? आपका आना बड़ा भारी मालूम पड़ता है परन्तु आप ही सोचें कि ऐसी अवस्था में भला, कहां जाना होता है। देखिये मेरे घर में इस समय कोई नहीं है। सब के सब ही बाजार गये हैं। मैं अकेला ही द्वार पर बैठा हूं। घर में बहू बेटियां लाखों का गहना पहने बैठी हैं। जो मैं स्वर्ग को चला जाऊं तो इनकी कौन रक्षा करे? फिर कभी फेरा करना, चलूंगा अवश्य। साधुजी फिर रम गये। एक वर्ष उपरान्त फिर साधु जी को अभागे सेठ की सुध आई, फिर उसी स्थान पर आढूंढा। अब तो विदित हुआ कि कुत्ता मरगया। साधु जी योगबल को काम में लाय और सेठजी को उसी घर

की मोरी का कीड़ा हुआ पाया। साधुजी बोले कहो अब क्या विचार है ? इस से अधिक अधोगति दरकार है क्या बस इतना सुनते ही सेठजी तो लाल पीले हो और क्रोध से कांपते हुए लगे कहने कि "क्या मेरे अतिरिक्त तुमको और कोई स्वर्ग में लेजाने को नहीं मिलता ? जाओ मैं नहीं जाता। यहां पर आनन्द से अपनी २ पोती परपोतियों का मुख देखता हूं। स्वर्ग में जाकर क्या तुम्हारा मुंह देखूंगा ? साधुजी मन में कहने लगे कि "मोहग्रसित ऐसे ही हुआ करते हैं" और चले गये ।

फल—मनुष्यों को इस लोक के अतिरिक्त परलोक का भी ध्यान रखना योग्य है।

४—एक निर्धन ब्राह्मण का सच्चा त्याग।

किसी धनी की कोठी पर एक सूर्य नाम के ब्राह्मण ३) रु० महीने पर नौकर थे। उस धनी की माता अतिवृद्धा थी। एक रात्रि को, जब कि २ बजे थे और वायु भी बहुत ठण्डा बह रहा था, उस माता की अवस्था बहुत बिगड़ गई। सब ने जान लिया कि माता बचने की नहीं ऐसे समय में पुत्रों ने माता से बूझा कि आपकी अन्तिम इच्छा क्या है ? माता ने उत्तर दिया कि "बेटा मैंने कभी एक लाख रुपयों की इकट्ठी ढेरी नहीं देखी, सो तुम मुझे अब मरते समय दिखादो" बेटोंने मुनीमजी को आज्ञा दी

और तत्काल १०० तोड़े माताजी की चारपाई के समीप लौटादिये गये, माता ने उन रुपयों को देख लिया। बेटों ने फिर बूझा कि "अब इनका क्या करें, रखवादें या कुछ दान करना चाहती हो? माता ने उत्तर दिया जैसी तुम्हारी इच्छा" माता के इस उत्तर से बेटों ने जानाकि माता ने दान करने को ही रुपये मंगाये हैं। पुरोहितजी की तलाश हुई। उन पुरोहित जी का ग्राम २ कोस पर था जिनके लिवा लाने में २ घण्टे लगते, परन्तु माता जी घड़ी दो घड़ी की महमान थीं। दान ब्राह्मण कोही देना था। यहां सिवाय सूर्य ब्राह्मण के कोई मौजूद नहीं था हार कर सूर्य ब्राह्मण ही बुलाये गये और उनसे कहा गया कि एक लक्ष रुपये आपको दिये जाते हैं सूर्य ने कहा " जो इच्छा " सूर्य से सङ्कल्प पढ़ने को कहागया ज्यों ही सूर्य " ओ३म् नमः आप परब्रह्मणे " कहना चाहते थे कि लालासाहब बोल उठेः।

"महाराज! तुमने ऐसे तो बहुत दानी देखे होंगे जिन्हो नेसमय २पर करोड़ों दान किये हों, परन्तु एक ही समय पर एक लक्ष का दान नहीं देखा होगा" सर्य ने जैसे ही ये वचन सुने सङ्कल्प पढ़ना बन्द कर दिया. और समझे कि धनी को अभिमान होगया। अभिमान का धन नहीं लेना चाहिये, और ये वचन कहे कि "सेठजी जिसके घर में करोड़ों रुपये नक़द रक्खे हों, उस के लिये

एक लक्ष रुपया एक समय में दान करदेना कुछ बड़ी बात नहीं, परन्तु जिसके घर में आज खाने को है और कल की फ़िक्र है, और वह १ लक्ष नक़द मिलता हुआ न ले, ऐसा नहीं देखा होगा ! सेठ जी जाइये, मैं आप का दान नहीं लेता । अब तो सेठ जी ब्राह्मण के त्याग को देखकर दंग रह गये । सेठजी और माता जी दोनों ही ने बहुत कुछ चाहा कि सूर्य दान ले ले, पर वह तो कहता था कि मैं त्याग चुका । दोनों ही ओर से दृढ़ता दिखाई जाती थी-सेठ जी कहते थे कि "हम दे चुके" और सूर्य कहते थे कि "हम त्याग चुके" अन्त में सच्चा त्यागी ब्राह्मण ही जीता । धन धर्मार्थ लगा दिया ।

फल—दान "त्यागे श्लाघाविपर्ययः" के अनुसार नामवरी की इच्छा को छोड़कर, करना उचित है । ब्राह्मण भी श्रेष्ठ दान लेने से सुकृति को प्राप्त करताहै ।

५—नेकी किसको कहते हैं ?

एक पिता के ३ पुत्र थे । जब बड़ा हुआ, तो उसने अपने तीनों पुत्रों से कहा कि:—"मेरे पास अति सुन्दर और कीमती एक अंगूठी है; इस अंगूठी को वह लड़का पावेगा जो सात दिनके भीतर नेकी का काम करेगा" यह सुनकर वे तीनों ही अंगूठी पाने को

लालसा में अपने घर से निकले। सात दिन के उपरान्त तीनों ने अपनी २ नेकी सुनानी आरम्भ की। एक बोलाः—"पूजनीय पिता! जब मैं घर से बाहर निकला तो मैंने सामने से एक ऐसे पुरुष को आते देखा कि जिसके १००) मेरे ऊपर चाहिये थे। मैंने बिनामांगे ही देदिये"। पिताने कहा "यह तो तुम्हारा धर्म था; तुम ने उसके साथ कोई नेकी नहीं की। दूसरा बोला "दयालु पिता! ज्योंही मैं घरसेबाहर जंगलमें जारहाथा किएक तालाबमें एक आदमी को पानीमें गोते खाते देखा मैं यदि कुछ भी विलम्ब करता तो वह डूबही जो जाता। पिताजी! मैंने झटही कपड़ों सहित पानी में कूदकर, उसको बाहर निकाल लिया"। वृद्ध पिता ने कहाकि "यह भी तुम्हारा धर्म था। यदि तुमऐसा न करते तो पापी होते"। अब सब से छोटेको बारी आई, और वह इस प्रकार सुनाने लगा कि—"हे धर्मात्मा पिता! यहां से चलकर मैं पहाड़ी पर पहुंचा, वहां पर मैंने देखाकि मेरा शत्रु एक ढलवां चट्टानपर बड़ी गहरी नींद में सो रहा है। मैं चाहता तो उसको थोड़े से इशारे में ही उस चट्टानसे नीचे गिरा देता। उसके गिरने की ओर इतनी गहरी खन्दक थी कि उसकी हड्डियों का भी पता न रहता। मैं यदि न भी गिराता, तो भी, करवट लेने पर वह उस गहरी खन्दक में गिर पड़ता। मैंने उस-

को जगाकर सचेत कर दिया, और मरन से बचादिया" पिताने इतना सुनते ही वह अंगूठी उसको दे दी, और कहने लगा कि "सच्ची नेकी तूने की है-तूने शत्रु पर दया दर्शाई है। तू उस को मारडालता या मरने देता तो तू अपराधी नहीं था, क्योंकि वह तेरा शत्रु था, पर तूने ऐसा नहीं किया! तुमको धन्य है। आओ तेरा मुख चूमूं"।

फल—अपने शत्रु से भी प्रेम करो। यह वैदिक शिक्षा है।

६—कर्मों पर विश्वास।

एक ब्राह्मण के इकलौते पुत्रको सर्पने काटखाया और वह मरगया। सारे कुटुम्ब में हाहाकार मचगया। पड़ोसी भी बिना आंसू बहाये नहीं रहे। इतने ही में एक सर्प पकड़ने वाला बहेलिया आगया, उसने हाहाकार शब्द को सुनकर बूझा कि "ऐसा क्यों होरहा है"? उत्तर में कहा गया कि ब्राह्मण के बेटे को सर्प ने काट लिया। उसने फिर बूझा कि "सर्प कहां पर निकला था"? किसी ने जाकर, जहां सर्प निकला था, वह स्थान बतादिया। बहेलिये ने जाकर सर्प को ढूंढ कर पकड़ लिया, और ब्राह्मण के पास लाकर कहने लगा कि "हे ब्राह्मण! इसी सर्प ने तेरे पुत्रको काटा है; लेत इसका "सिर कुचल दे"। यह सुनकर ब्राह्मण

ने कहा कि "क्या इसके मारे से मेरा पुत्र जीवित हो जावेगा"? उसने कहा कि जीवेगा तो नहीं; परन्तु तू इससे बदला तो लेलेगा"। ब्राह्मण ने इसे भी स्वीकार नहीं किया और कहा कि "तू इसे छोड़ दे; जो होना था सो हो गया"। उस बहेलिये ने यह सोच कर कि यह ब्राह्मण तो मूर्ख सा प्रतीत होता है; यदि मैं इसको न मारूं तो बड़ा अनर्थ होगा। ऐसा विचार जङ्गल में जाकर उस सर्प का सिर पत्थर पर रख कर स्वयं कुचलने को उद्यत हो गया। सर्प, अपना सिर कुचला जानकर बोला कि 'भाई! तुम मुझे क्यों मारते हो?' बहेलिया बोला 'अरे मूर्ख! तूने ब्राह्मण के इकलौते बेटे को काट कर मारा है, और पूछता है कि 'क्यों मारते हो?' सर्प ने कहा 'भाई तुम नहीं जानते। मेरा इस में कोई दोष नहीं है इसकी तो मृत्यु ही आगई थी। यदि दोष है तो 'मृत्यु का'। इतना सुन कर बहेलिये ने सोचा कि अगर मृत्यु मिल जाती तो उस ही का सिर कुचल देता, सारा संसार अमर हो जावे। इतने ही में मृत्यु भी आ खड़ा हुआ और कहने लगा कि "क्यों रे सांप! आप निर्दोषी रह कर मुझ पर दोष धरता है"? अरे! तुझे यह विदित नहीं कि मैं तो समयानुसार [illegible] आता हूं; इसका तो 'समय' [illegible] । [illegible] क्या दोष [illegible]

सुन कर बहेलिया द्विविधा में पड़ गया, और सोचने लगा कि वाह ! क्या खब ? यह भी दोष से पृथक् होना चाहता है। बहेलिये के दिल में यह विचार उत्पन्न हो ही रहे थे कि समय भी झट आविराजे और लगे मृत्यु को फटकारने कि 'क्योंरे ! बस सारे दोष हमारे ही सिर रक्खेगा, कुछ आगे की भी सुध है ?' 'देख ! हमतो कर्मानुसार फल देते हैं। यदि कुछ दोष है तो 'कर्मों' का।' अबतो बहेलिये को ज्ञान उत्पन्न हुआ, और सब को नमस्कार करके विदा किया। सर्प को भी छोड़ दिया।

फल

कर्मप्रधान विश्वकर राखा।
जो जस कीन तासु फल चाखा॥

परमात्मा पर जो मनुष्य सच्चा विश्वास रखताहै और पुरुषार्थ करताहै उसकी सम्पूर्ण अभिलाषाओं को परमेश्वर पूर्ण करते हैं यथा

एक अनाथ वेवा स्त्री जो अत्यन्त ही दीन और धर्मज्ञ थी उसके दो बालक एक ६ वर्षका द्वितीय ८ वर्ष का था बेचारी बेवा दीनता के कारण दूसर पुरुषों की सेवा पीसना कूटना किया करती थी उसी से अपने लड़कों का पालन पोषण किया करती थी परन्तुबच्चों को नित्य दूध बताशे उत्तम भोजन खिलाया क-

रतीं और उनके पढ़ने का पूर्ण प्रबन्ध तथा पढ़ने का व्यय भार भी उठा रक्खा था और अपना निर्वाह केवल सूखी रूखीरोटियों से करती थी और किसी २ दिवस वह भी पेटभर नहीं मिलती थीं बच्चे बड़े धर्मात्मा और सुशील थे नित्य जिस समय पाठशाला से पाठ पढ़के आया करते थे तो आते ही माता से दूध बताशे मांगते थे एक दिन ऐसा समय आया कि माता को कहीं काम न लगने के कारण कुछ न मिला और बच्चों नेपाठशाला से आते ही दूध बताशे नित्य की भांति माता से मागे माता ने उत्तर दिया कि बेटा आज तो मेरे पास कुछ नहीं आज तो तुम्है परमेश्वर दूध बताशे देगा तो मिलेगा नहीं तो मेरा कोई उपाय नहीं बच्चों ने पछा माता परमेश्वर कौन है माता ने कहा बेटा वहसबका पिता सब का पालन पोषण करने हारा है बच्चों ने यह सुन कहा तो माता वह हमें दूध बताशे देगा माता ने कहा अवश्य अब तो बच्चों के हृदय में सच्चा बिश्वास होगया कि माता ही दूध बताशे देनेवाली नहीं किन्तु माता के इतर और दूसरा परमेश्वर भी देने वाला है बच्चो ने पुनः माता से पूछा कि माता परमेश्वर कहां रहता है माता ने साधारण ही ऊपर को अंगुली उठादी बच्चे चुपचाप पुस्तक उठा पाठशाला को चल दिये और माग में परस्पर दोनो भाई यह सम्मति करते जाते थे कि भाई उस परमेश्वर तक ऊपर कैसे चलें

कि जा उससे दूध बनाशे मांग दूसरे ने कहा भाई ऊपर पहुंचना तो कठिन है परन्तु हमने एक बात सोची है पर परमेश्वर को हम तुम दोनों एक चिट्ठी लिखें और प० जी से छुट्टी मांग चलके डाक में डाल आवें पहिले ने कहा ये बहुत ही ठीक है दोनों पाठशाला पहुंच पत्र लिखने लगे ।

पत्र ।

हे पिता परमात्मा आप सब के पालन पोषण करने हारे हो हम दोनों भाई आप को नमस्कार करते हैं और प्रार्थना यह है कि, आधसेर दूध और एक छटांक बताशे हम दोनों भाइयों को कृपाकर नित्य भेज दिया कीजिये हम आपके बच्चे हैं हमें आपने बनाया है इस से हमारा पालन भी कीजिये । अस्तु

आपके—सेवक दो बच्चे जिनको आप जानते हैं।

(चिट्ठी का सिरनामा यानी पता)

चिट्ठी पहुंचे पिता परमात्मा के पास ।

बच्चे पं० जी से छुट्टी मांग पोस्टाफिस में चिट्ठी डालने गए [illegible] बाबू से पूछा बाबू जी ये चिट्ठी कहां डालें बाबू [illegible] कहा [illegible] डाल दो लड़कों का [illegible] था और [illegible] ऊंचे पर गड़ा हुआ था बच्चे ऊपर को [illegible] चिट्ठी डालने लगे

परन्तु चिट्ठी लेटरबक्स में न डाल सके बाबूने लड़कों को देख कहा-लाओ हम तुम्हारी चिट्ठी डालदेंगे, बच्चों ने चिट्ठी देदी। बाबू पत्र हाथ में ले पता पढ़ के अत्यन्त ही चकित हुआ और बच्चों की ओर देखा। बच्चे सारे दिन के भूखे, मखमलीन, अति दुःखित थे, बाबू ने कहा तुम किस के बेटे हो, यह चिट्ठी किसने लिखी है? बच्चों ने कहा हम अमुक बेवा के लड़के हैं। हम घर में नित्य दूध बताशे पाते थे। आज हम दोनों घर गये और माता से दूध बताशे मांगे तो माता ने कहा बेटा! आज तो तुम्हें परमेश्वर ही दूध बताशे देगा तो मिलेंगे, नहीं तो मेरे पास नहीं। हम दोनोंने आज कुछ भोजन भी नहीं खाया और घर से भूखे ही दोनों पाठशाला को चल दिये और पाठशाला में आ हम दोनों ने पिता परमात्मा को यह पत्र लिखा है सो डालने आये थे।

बाबू! तुम जानते हो परमेश्वर कहां है?

बच्चे—माता ने बताया है कि ऊपर है।

बाबू—क्या हम तुम्हारे इस पत्र को खोल पढ़लें।

बच्चे—हां! बाबू ने खोल के पत्र पढ़ा, बच्चों को दुखी देख, बाबू ने कहा कि तुम दोनों नित्य आधसेर दूध और बताशे हम से लेजाया करो॥

दूरस्थं नातिचेष्टेन सा हि धात्रैव निर्मिता।

गर्भादुत्पतिते जन्तौ मातुः प्रस्रवतःस्तनौ ॥

—❧❀☙—

झूंठा धर्म आडम्बर करने से जब हम इतने पुजते और प्रतिष्ठा पाते हैं तो सच्चा करने से जाने कितना पुजें और परलोक भी बनेगा।

८— एक कुम्हार का युवा लड़का एक राजा के यहां पात्र देने गया। वहां राजा की युवक मनमोहिनी राजपुत्री को छतपर देख चकित हो गया और उस के हृदय में इस प्रकार कामबाण लगे कि घर आके मोहिनी के शोक में व्याकुल हो लेट रहा और खान पान सभी भुला कर केवल उस मोहिनी के ध्यान में हाय हाय कर रहा था। इसके सम्पूर्ण घर के लोगों ने जाकर पूछा कि तुम्हारी क्या दशा है? क्या हो गया? क्या कुछ रोग है? परन्तु युवक ने किसी से कुछ न कहा। पुनः कुछ काल के बाद उसकी माताने जाकर पूछा तो उस ने अपनी माता से सच्चा सच्चा वृत्तान्त कह सुनाया कि मैं आज राजा के यहां पात्र देने गया था, वहां राजा की राजपुत्री को देख मेरी यह दशा हो गई, सो चाहे मेरे प्राण चले जायें परन्तु जब तक मुझे उस राजपुत्री के पुनः दर्शन न मिलेंगे तबतक भोजन न करूंगा। माता ने कहा उठो, आज भोजन करो, आज से ६ माह के पश्चात् मैं तुम्हें राजपुत्री का दर्शन करा दूंगी।

भोजन करने के पश्चात् उसकी माता ने कहा कि तुम यहां से कहीं ६ माह के लिये चले जाओ और ६ माह के बाद जब आना तो साधु का भेप रख के आना और राजा की फुलवारी में आके ठहरना, तुम्हें राजपुत्री के दर्शन हो जायंगे। कुम्हार के बच्चे ने वैसा ही किया अब ६ मास के पश्चात् राजा की वाटिका में साधु आया तो एक मनुष्य को भेज अपनी माता को बुलवा, कहा-अब राजपुत्री के दर्शन कराओ। माता ने कहा तुम आंखें बन्द कर ध्यान से बैठ जाओ, मैं अभी तुम्हें दर्शन करातो हूं। उस कुम्हार की माता ने कुल ग्राम में यह हल्ला करदिया कि एक बडे पहुंचे महात्मा आये हुये हैं और उनसे जो मांगो सो देते हैं। यह सुन कर ग्राम के सम्पूर्ण नर नारी जाने लगे। यह बात राजा तक तथा राजमहलों में भी पहुंची कि एक महात्मा बड़े योग्य हमारी फुलवाड़ी में आये हैं। राजा यह सुनकर अपनी रानी तथा राजपुत्रीके साथ दर्शनोंको गये। ज्यों ही राजा रानी और राजपुत्री इसके सामने पहुंचे तो कुम्हार की माता ने पीछे से संकेत किया कि बेटा! राजा रानी और राजपुत्री आगे खड़े हैं, अब दर्शन करलो वो कुम्हार के लड़के ने सोचा कि आज जब कि मैं झूंठा साधु महात्मा बना हुआ हूं तो मेरे आगे तमाम गांव के नर, नारी तथा राजा रानी राजपुत्री

खड़े हैं और यदि मैं सच्चा साधु महात्मा बनजाऊं तो न जाने मुझे क्या क्या फल प्राप्त होंगे। ऐसा सोच कुम्हार के लड़के ने पुनः ध्यानसे आंखें न खोल सम्पूर्ण आयु के लिये परमात्मा से ध्यान लगाया।

असतो मा सद् गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय मृत्योर्मा अमृतं गमयेति ॥

—******—

श्लोक ॥

६—यो यमर्थं प्रार्थयते यमर्थं घटते च यः।
सोऽवश्यं तमवाप्नोति न चेच्छ्रान्तो निवर्त्तते ॥

चौपाई ॥

जापर जेहि कर सत्य सनेहू।
सो तेहि मिले न कछु सन्देहू ॥

एक राजा के बहुतसी रानियां थीं। राजा जी किसी कार्य्यवश विदेश को गये। वहां बहुत कालपर्यन्त रहना पड़ा। रानियों ने सुना कि राजा जिस देश में है वहां की अमुक २ वस्तुयें अच्छी होती हैं। ऐसा सुन किसी रानी ने महाराजको लिखा कि वहां की कण्ठश्री बहुत अच्छी होती है आप हमें अवश्य लायें, किसी ने लिखा कि वहां की पचलरी बहुत अच्छी होती है आप अवश्य लायें, किसी ने लिखा वहां की फुलवर बहुत अच्छी

होती है आप अवश्य लावें, इस प्रकार सम्पूर्ण रानियों ने नानाप्रकार की वस्तुयें लिखीं पर एक रानी ने यह लिखा कि मुझे वस्तु की आवश्यकता नहीं, मुझे तो बहुत काल से आप के दर्शन नहीं मिले सो आप के दर्शनों की आवश्यकता है सो दासी को आकर कृतार्थ कीजिये। राजा ने सम्पूर्ण रानियों के पत्र पढ़ २ उनकी याचनाओं के अनुसार भृत्यों से वस्तुयें लिवा कर और और भी अपनी इच्छानुसार जो चाहा वह मंगवा कर घर आते ही सम्पूर्ण रानियों के प्रार्थनापत्र खोल कर जिस जिस रानी की जो २ प्रार्थना थी वह २ वस्तुयें उन के यहां भिजवा कर पश्चात् और बहुतसी बचीं वस्तुयें जो राजा अपनी इच्छानुसार लाये थे, महाराज उन सब वस्तुओं को लेकर उस रानी के गृहमें गये जिस ने लिखा था कि मैं केवल आप को चाहती हूं, तब तो अन्य रानियों ने बहुत कुछ ईर्षा की और जा जा के महाराज से कहा कि महाराज हम लोगों ने क्या अपराध किया था कि आप हमारे यहां न आये और हमको क्यों एक ही एक वस्तु दी गई? इस रानी को क्यों बहुतसी वस्तुयें दीं। महाराज ने उत्तर दिया कि तुम अपने २ प्रार्थनापत्र देखो। तुमने जिसे चाहा वह तुम्हें मिला और इस रानी का प्रार्थना पत्र देखो, इस रानी ने जिसे चाहा वह इसे मिला। बस

इसी भांति संसार में जो जो मनुष्य जिस जिस वस्तु की उपासना करता है उसको परमेश्वर वही वही वस्तु देता है। यानी रुपये की उपासना वाले को रुपया, स्त्री की उपासना वाले को स्त्री, मिट्टी की उपासना वाले को मिट्टी, जल की उपासना वाले को जल, और पत्थर की उपासना वाले को पत्थर। परमात्मा के उपासक को अन्य वस्तुओं की उपासना छोड़, परमात्मा की उपासना करनी चाहिये।

(९—ईश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है)

एक राजा के मन्त्री का यह सच्चा विश्वास था कि "ईश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है"। एक बार राजा और मन्त्री महाराज आखेट के हेतु किसी भयानक वनमें पहुंचे, वहां शिकार पर शस्त्र प्रहार करने से राजा की एक अंगुली कट गई। राजा ने मन्त्री जी से कहा—मन्त्री जी! हमारी अंगुली शस्त्र से कट गई। मन्त्री जी ने कहा—"परमेश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है"। राजा यह वाक्य सुन बहुत अप्रसन्न हुए और कहाकि हमारी तो अंगुली कटगई और यह कहता है कि परमेश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है। इससे मन्त्री को उसी समय निकाल दिया। मन्त्री उस वनसे लौट अपने घर आया और राजा आखेट खेलते खेलते एक दूसरे राज्य में

पहुंचे। वहां के राजा को बलिप्रदान के लिये एक मनुष्य की आवश्यकता थी (मूर्ख तथा नीच लोगों में यह परिपाटी थी) दूत इन राजाजी को पकड़ लेगये। जब वहां के पण्डितों ने इन महाराजा को देखा तो इनकी अंगुलि कटी हुई थी, तब तो पण्डितों नें कहा यह तो मनुष्य अङ्गभङ्ग है, अङ्गभङ्ग की बलि नहीं दी जाती, अतः राजा जी छोड दिये गये और यह प्राण बचा घर को चले। मार्ग में सोचा कि मंत्री सत्य कहता था कि, (ईश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है) यदि मेरी अंगुली आज न कट गई होती तो मैं बलिप्रदान दे दिया जाता। ऐसा समझ, घर आतेही मन्त्री जी को बुलवाया। मंत्री जी डरते डरते आये कि राजा जाने मेरा क्या करे। मन्त्री राजा के समीप आये और प्रणाम कर बैठगये, तबराजा ने मंत्री जी से कहा—मन्त्री जी! तुम्हारा यह कहना नितान्त सत्य है कि ईश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है, क्योंकि जब हमने वन से आप को निकाल दिया तो हम आखेट खेलते खेलते एक राज्य में पहुंचे। वहां के राजा को बलिप्रदान के लिये एक मनुष्य की आवश्यकता थी इससे वहां के राजा के दूत मुझे पकड़ लेगये पर मेरी अंगुली कटी होने से वहां के पण्डितों ने मुझे अङ्गभङ्ग जान छोड़ दिया। मेरी अंगुली कटने से तो यह ईश्वर ने

अच्छा किया कि मेरे प्राण बचे पर आप को जो मैंने निकाल दिया और इतने दिन तक नौकरी से पृथक् रक्खा तो आपके लिये ईश्वर ने क्या अच्छा किया? मन्त्री ने कहा महाराज! यदि आप मुझे न निकाल देते और मैं आप के साथ रहता तो वहां आप तो अङ्ग भंग होने से बलिप्रदान से बच आये पर मैं अङ्गभङ्ग न होने से बलिप्रदान से कभी न बचता ॥

१०—ईश्वर हमारा सुख देख न सका ।

एक सिपाहीराम २० वर्ष नौकरी करके घर आ रहे थे। घर के लिये एक कच्चे रङ्ग की चुनरी अपनी स्त्री के लिये और कच्चे ही रंग के खिलोने अपने लड़कों के लिये और कुछ बताशे भी लाये थे पर मार्ग में वर्षा होने लगी इससे सिपाहीराम की चुनरी और खिलौने का रङ्ग छूट २ कर बहने लगा और बताशे सब पानी में घुल गये। यह दशा देख, सिपाहीराम ने कहा (ससुरौ अबहीं सरग करिबे करहै) हाय २० वर्ष के पश्चात् एक कच्ची चुनरी, २ खिलौने, कुछ बताशे बच्चों को लाये वह भी परमेश्वर से न देखा गया। थोड़ी ही दूर चलकर क्या देखता है कि एक नाले में २ डाकू बैठे हैं और वे इसके ऊपर बंदूक की गोली चलाना चाहते हैं पर बंदूक टोपीदार है और पानी व

सने के कारण बन्दूक रंजक खा गई, गोली नहीं चल-
ती तब तो कहते हैं धन्य हो परमात्मा, यदि इस समय
वर्षा न होती तो हमारे प्राण ही जाते और हम अपने
बाल बच्चों का मुख भी न देख पाते, यह चुनरी खि-
लौना यहीं पड़े रहते, अब ये रङ्ग छूटे तो घर पहुंचेंगे
और मैं तो कुशल प्रसन्न अपने बाल बच्चों से मिलूंगा,
इस लिये मैंने जो अज्ञानता में आप को कुछ कहा हो
उस अपराध को क्षमा कीजिये ॥

स एव धन्यो विपदि स्वरूपं यो न मुञ्चति ।
त्यजत्यर्ककरैस्तप्तं हिमदेहं न शान्तिताम् ॥

——*——

१२—[मुख्यकोप की प्राप्ति]

एक महादरिद्र पुरुष था, द्रव्य की अभिलाषा में उस बेचारे
ने चारों ओर बड़े २ नीच ऊंच दुर्गम से दुर्गम
स्थानों में टक्कर मारीं पर उसे एक कौड़ी भी कहीं
प्राप्त न हुई कि जिससे महाक्लेशित हो घर की ओर
निराश हो, लौटा आ रहा था । अनायास मार्ग में एक
महात्मा से भेट होगई । उस दीन पुरुष ने महात्मा जी
को प्रणाम कर, महात्मा जी के पूछने पर सम्पूर्ण वृत्तान्त
कह सुनाया । महात्मा जी ने उस दीन की दशा देख कर
कहा कि तुम यह मन्दिर जो सामने गिरा पड़ा है उस

को एक कुदारी और एक तलवार ले कुदारी से मन्दिर को खोद और तलवार से जो तेरे इस कार्य में बाधक हों उनको बध करता जा, अन्त में तुझे एक बड़ा भारी कोष प्राप्त होगा। दीन पुरुष ने कुदार और तलवार ले मन्दिर को खोदना प्रारम्भ किया। थोड़ा खोदा ही था कि उसमें से एक स्त्री निकली जिस को देख दीन ने पूछा तू कौन है और कहां रहती है? स्त्रीने उत्तर दिया कि मैं ब्राह्मणी हूं और मेरा नाम लज्जा है और नेत्र-शाला में रहती हूं। यह सुन दीन ने कहा कि तू पृथक् बैठ और पुनः खोदने लगा। थोड़ी ही देर के पश्चात् एक और स्त्री निकली, उस से भी दीन ने प्रश्न किया कि तू कौन है और तेरा क्या नाम तथा कहां रहती है? स्त्री ने उत्तर दिया मैं ब्राह्मणी और मेरा नाम दया और द्वारपुर में रहती हूं। उस से भी कहा कि तू पृथक् बैठ ऐसा कह दीन पुनः अपनी कामधुनि में लगगया। कुछ ही खोदने के पश्चात् एक तीसरी स्त्री निकली। दीन ने देख उस से भी वैसे ही प्रश्न किये। स्त्री ने उत्तर दिया कि मैं ब्राह्मणी और मेरा नाम कीर्ति और अन्तःपुरकी निवासिनी हूं। दीन उसे भी पृथक् बैठा अपना कार्य करने लगा कि कुछ काल के पश्चात् चौथी एक और स्त्री निकली और दीन ने उससे भी उसी भांति पूछा। स्त्री ने उत्तरदिया कि मैं ब्राह्मणी हूं। मेरा

नाम धृति और मैं मनुआंपुर की निवासिनी हूं। इसे भी दीन ने अलग बिठा, खोदना आरम्भ किया, परन्तु उस बीमारी ने पीछा न छोड़ा और अब के स्त्री के स्थान में एक बिल्लड़ दास हाथ पैर मारते हुये निकले। दीन ने प्रश्न किया कि आप कौन हैं, कहां आपका निवास है? पुरुष ने उत्तर दिया मेरी जाति पांति का तो कुछ ठीक नहीं, परन्तु हां मेरा नाम काम है और मैं नत्रशाला का बासी हूं। पुनः दीन ने कहा वहां तो एक स्त्री जिनका नाम लज्जा है, रहती है। यह सुन काम ने कहा कि वह तो मेरी स्त्री ही है। पुनः दीनने कहा रे दुष्ट! जहां लज्जा वहां तेरा क्या काम? ऐसा कह शीघ्र तलवार के द्वारा धड़ से सिर अलग किया और पुनः कुदारी ले, खोदने लगा। कुछ ही काल में जीर्ण रोग ने पुनः आक्रमण किया, वह यह कि एक मुस्टण्डराम लाल आंखें किये, होंठ फरफराते हुये निकले। दीन ने इस भयङ्कर मूर्ति को देखकर इनसे भी वही प्रश्न किया। इन्हों ने कहा हम जाति के चण्डाल और हमारा नाम क्रोध और द्वारपुर का वासी हूं। दीन ने कहा कि वहां तो एक स्त्री जिसका नाम दया है बसती है। पुनः क्रोध ने कहा कि वह तो मेरी स्त्री ही है, तब तो दीन ने कहा कि रे दुष्ट! जहां दया रहतीहै वहां तेरा क्या काम? ऐसा कह इन्हें भी तलवार की धार से अलग किया और

पुनः खोदना आरम्भ किया। कुछ ही खोदने के बाद उपर्युक्त रोग ने पीछा न छोड़ा, वह यह कि एक और घिङ्गड़नाथ चकमक देखते हुए आ विराजे। दीन ने इनको देख वही अपना पुराना प्रश्न किया। घिङ्गड़ जी ने उत्तर दिया कि हम जाति के वैश्य (आजकल के) और मेरा नाम लोभ और मैं अन्तःपुर का वासी हूं। यह सुन दीन ने कहा कि वहां तो एक स्त्री कि जिस का नाम कीर्ति है वहां रहा करती है। तब लोभ ने कहा कि वह तो मेरी स्त्री है। तब तो दीन ने कहा कि ऐ नीच! जहां कीर्त्ति वहां तेरा क्या काम? ऐसा कह तलवार से इन्हें भी मौत के समर्पण किया और फिर खोदना आरम्भ किया कि थोड़ा ही देर में एक वृद्ध और निकल खड़े हुए। उन्हें देख दीनने पूर्ववत् प्रश्न किये। पुनः वृद्ध ने उत्तर दिया कि मैं जातिका भिल्ल और मेरा नाम मोह और मनुआंपुरका वासी हूं। यह सुन दीन ने कहा कि वहां तो एक स्त्री जिसका नाम धृति है रहती है। पुनः मोहने कहा कि वह तो मेरी ही स्त्री है। तब तो दीन ने कहा रे मूर्ख! जहां धृति वहां तेरा क्या काम? ऐसा कह इन्हें भी तलवार से उड़ाकर सोचने लगा कि ये स्त्रियां क्या मेरा साथ देंगी किन्तु इन से कार्य में हानि और दीखती है कि मैं कभी कभी इन की ओर देखने लगता हूं और पुनः यह भी

कि जब एक ही स्त्री से आपत्ति होती है फिर चार चार कौन निबा हैं ऐसा सोच समझ कहा कि लज्जा भी कभी कभी पाप करा देती है यथा सम्बन्धियो के भय से बरातों में नाच इत्यादि लेजाना और कीर्ति भी दोष उत्पन्न कर देती है तथा दया भी कभी कभी अधर्म तथा बन्धन का हेतु बन जाती है यथाः—

(असाधनानुचिन्तनं बन्धाय भरतवत्)

सो इस लिये इन तीनों को तलवार से मार धृति को अपने साथ ले अब आगे एक अत्यन्त ही कठिन वज्रवत् जो शिला आ पड़ी थी खोदने लगा। कुछ काल के बाद वह शिला लौट गई और उसे एक महान् कोष प्राप्त हुआ जिसे पा वह आनन्दपूर्वक घर आ अपने जीवन को व्यतीत करने लगा।

यह तो दृष्टान्त हुआ पर इस का दार्ष्टान्त यों है कि यह दीनरूप विवेकाश्रम जी मोक्षरूपी मुख्य कोष की प्राप्ति के लिये यत्र तत्र भटकते हुये व्याकुल था कि इतने में एक पहुंचे हुये पूर्ण योगी मिले और इस से कहा कि तुम इधर उधर व्यर्थ परिश्रम क्यों करते हो तुम इस शरीररूप मन्दिर में ही ज्ञानरूपी कुदार और वैराग्यरूपी तलवार ले खोदना प्रारम्भ करो और तुम्हारे शत्रु जो इस कार्य में बाधा डालने वाले मिले उनको

वैराग्यरूपी तलवार से काटते हुये अपने कार्यसाधन में लगे रहना ऐसा सुन विवेकाश्रम इधर उधर भटकना छोड़ ज्ञानमयी कुदार ले आत्मा में ही परमात्मा की प्राप्ति का यत्न करने लगे। जब उस यत्न में इनको काम क्रोध लोभ मोह आदि ने सताया तब इन्हों ने इन चारों को वैराग्यरूपी तलवार से काटडाला अब आगे विवेकाश्रम जी को लज्जा, कीर्ति, धृति आदिकों ने भी आ घेरा तब तो इन्हों ने लज्जा, दया, कीर्ति इन तीनों से हानि समझ इन्हें भी उसी वैराग्यरूपी तलवार से काट केवल धृति को साथ लेकर जो आगे अहङ्काररूपी वज्रवत् शिला जमीहुई थी उसको ज्ञानरूपी कुदार से काटना प्रारम्भ किया, क्योंकि इसी शिला के बाद वह ब्रह्मरूप कोश जिस के लिये मुण्डक में कहा है :—

हिरण्मये परे कोशे विरजं ब्रह्म निष्कलम्
तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद्यदात्मविदो विदुः ॥

तथापि हिरण्यरूपनिधिं निहित अक्षेत्रज्ञा उपरि उपरि सञ्चरन्तोन विन्देयु : एवमेव इमा : सर्वा : प्रजा अहरहर्गच्छन्त्य हता : एवं ब्रह्मलोकं न विन्दन्ति अनृते नहि छां ० उ ० प्रत्यूढा : इति ॥

[अर्थ] चमकीले पदार्थ के परे अहङ्काररूपी शिला

के नीचे भीतरी हृदयकोश अविद्यादि दोषों से रहित निरवयव वह शुद्ध ब्रह्म ज्योतिओं का भी ज्योति और विद्वानों के जानने योग्य है। पुनः विवेकाश्रम जी की शिला कट जाने पर ब्रह्मानन्दरूपी मुख्यकोश प्राप्त कर मोक्ष सुख में आनन्द करने लगे। इससे आप लोग भी विवेकाश्रम की भांती हृदयरूप मन्दिर में ही परमेश्वर को प्राप्त कीजिये। एक भाषा के कवि ने क्याही अच्छा कहा है:—

व्यापक ब्रह्म सदा सब ठौर।
व्यर्थ चार धामों की दौर॥
देखु न कस हृद नैन उघारी।
कनियां लाड़िका गांव गोहारि॥

१३-धर्म के सिवा और हमारा संसार में दूसरा साथी नहीं।

एक साहूकार का लड़का सर्वगुणसम्पन्न था अर्थात् ऐसा कोई दुराचार न होगा कि जो आप रूप में न हों। एकदिन आप की पतंग टूट उड़ते २ एक महात्मा के पास एक बनमें जा गिरी। यह साहूकार का लड़का पतंग के पीछे महात्मा जीके पास पहुंचा और महात्मा को देख, पतंग भूल, महात्मा जी के सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो

गया । कुछ काल में जब महात्मा जी ने ध्यान से कपाट खोले तो इन की ओर दृष्टि पड़ी । उन्हें हाथ जोड़े देख पूछा कि बच्चा तुम कौन हो? यहां कहां आये? तब तो साहूकार के बेटे के हृदय में महात्मा को देख कुछ श्रद्धा उत्पन्न हो गई और उस ने सम्पूर्ण सच्चा २ वृत्तान्त कह दिया और अन्त में नेत्रों में जल भर के गदगद हो बोला कि महाराज! मुझे कोई ऐसा उपाय बतलाइये कि जिस से इन सम्पूर्ण कुकर्मों से बचकर सत्कर्मों का अनुष्ठान करूं । महात्मा ने कहा बच्चा जैसा तुम इस समय मेरे सामने सत्य बोले हो ऐसे ही सर्वत्र सदैव बोला करो, यही तुम्हें सम्पूर्ण दुष्कर्मों से बचायेगा। साहूकार के लड़के ने वहीं से प्रतिज्ञा की कि मैं आज से चाहे कुछ ही हो असत्य कभी न बोलूंगा । दूसरे दिन घर आ, शराब की बोतल ले, आबकारी की दूकान को चला । मार्ग में उस का बड़ा भाई मिला और उसने उस से कहा भय्या ! कहां जाते हो? इस प्रश्न के होते ही इन्हें बड़ा सङ्कट पड़ा, उन्होंने सोचा कि मैं यदि सत्य कहता हूं तो भाई जी फजीता करेंगे और झूठ कहताहूं तो व्रत छूटता, अतः उत्तर न दे वहीं से लौट आया। इसी प्रकार तीसरे दिन रण्डी के घर जा रहे थे कि मार्ग में चचा मिला, उसने कहा बेटा! कहां जाते हो? यह पुनः उसी प्रकार के असमंजस

में पड़ा, उत्तर न दे लौट आया और इसी प्रकार धीरे धीरे इसके सम्पूर्ण दुराचार छूट गये। दुराचार छूटते ही इसके हृदय में कुछ ज्ञान का प्रकाश हुआ और आत्मा ने चाहा कि महात्मा की कृपा से ये सब दुराचार छूटे हैं पुनः उन्हीं की सेवा में चलें और उनसे पूछें कि महाराज अब हम क्या करें। साहूकार का बेटा महात्मा के पास गया और क्रमपूर्वक अपने प्रश्न पूछता रहा। महात्मा ने इसे शौच दन्तधावन स्नान सन्ध्या अग्निहोत्र आदि पञ्चयज्ञ पञ्चदेव पूजा मातापिता गुरु अतिथि ईश्वरआदि की बताई पुनः अष्टाङ्गयोग सिखाना प्रारम्भ किया। यह साहूकारका बेटा ७ सात अङ्गों तक तो करता चला गया पर आठवां अङ्ग समाधि के लिये महात्माने इसका कुछ विशेष मोह माता पितादि कुटुम्बियों में देख कहा कि समाधि तुझे तब बताऊंगा कि जब तू मेरी एक बात मान लेगा। साहूकार के बेटे ने कहा महात्मा जी! कहिये। महात्माजीने कहाकि तुम आज अपने घर जा अपनी माता आदिसे कहना कि माता आज तो मानो हमारे प्राण रोम२से निकल रहे हैं, यदि मेरे जीवनमें कुछ बाधा आपड़े तो जबतक अमुक महात्माजी जो अमुक वनमेंरहा करते हैं न बुलालेना तबतक हमारा (शव) अर्थात् मृत शरीर न जाने पावे, ऐसा कह प्राणायाम लगा लेटजाना। साहूकार के बेटे ने घर आके वैसाही किया। माता से

कहा कि मा! आज मेरे प्राण रोम रोम से मानो निकल रहे हैं। माता ने कहा—बेटा यह क्या कुशब्द बोल रहे हो, परमेश्वर तुम्हारे शत्रुको भी मौत न दे। पुनः बेटे ने कहा कि कदाचित् ऐसा हो जाय तो जबतक अमुक महात्मा को अमुक स्थान से न बुला लेना हमारा (शव) अर्थात् मृतक शरीर न जाने देना। ऐसा कह, प्राणायाम लगा ध्यान में सो गया। साहूकार के बेटे की माता पिता स्त्री बहन सब,हैं,ये क्या? कहते कहतेही देखा कि हमारा एकलौता बेटा नहीं रहा? ऐसा कह बहुत कुछ रोना पीटना प्रारम्भ किया। रोने की ध्वनि सुन टोला महल्ला के लोग भी साहूकार जी के धनिक होने के कारण बहुत कुछ इकट्ठे हो गये। अब तो छोटी मोटी अमावस्या का सा मेला इकट्ठा हो गया और वे सब के सब ही ऐसा कह कह रोने लगे—बाबा,बेटा! हाय मुझ अभागिनी को मौत नहीं और तुम्हारी यह दशा! हाय चाहे मैं मरजाती पर तुम बचजाते, इसी भांति पिता स्त्री बहन टोला महल्ला वाले भी कह कह रो रहे थे पश्चात् ये ठहरी कि अब इस के (शव) को स्मशान ले चलें, यह सोच उस के पिता तथा पड़ोसियों ने विमान बना उस पर साहूकार के बेटे को रख इसे बांध कर उठाकर ले चलें कि इतने में साहूकार के बेटे की मा को याद आया औ कहा कि आप लोग कृपा कर कुछ काल इस शव कर

रख दीजिये और उसने अपने पति यानी बेटे के पिता से कहा कि बेटा ने मरते समय यह कहा था कि यदि मैं मरजाऊं तो अमुक स्थान से अमुक महात्मा को जब तक न बुलवा लेना तब तक मेरा मृतक शरीर स्मशान को न जाने देना। पिता यह सुन कर नङ्गे पैरों महात्मा जीके पास को दौड़ा पर महात्माजी तो आगेसे ही जानते थे इस से उन्होंने एक पुड़िया में आधपाव मिसरी बहुत बारीक पीसकर रख छाड़ी थी। साहूकार के बेटे का पिता आ महात्माजी के चरणों में गिरपड़ा और कहा-महाराज! मेरे बेटे का यह हाल हुआ। उसने मरते समय यह कहा था कि जबतक अमुक महात्मा को अमुक स्थान से न बुला लेना तब तक हमारे मृतक शरीर को स्मशान न जाने देना सो महाराज! यदि आपका कुछ उपाय हो तो कीजिये। महाराज! उस बेटे के बिना तो हमारा सब नाश हुआ जाता है। महाराज! चाहे हम मर-जाते पर हमारा बेटा बना रहता! महात्माजी ने कहा धीरज धरो, घबड़ाओ नहीं, मैं अभी चलता हूं। अब तो महात्माजी मिश्री की पुड़िया उठा साहूकार के साथ चल दिये। महात्माजी ज्योंहीं साहूकार के घर आये त्योंहीं उस बेटे मा बहन स्त्री कुटुम्बी पड़ोसी सभी रोने और यह कहने लगे कि महात्माजी चाहे हम लोग मरजांय पर ये साहूकार का बेटा जी जाये। महात्मा जी ने सब को

धैर्य दे कहा कि पाव भर कपिला गौका दूध शीघ्र ले आओ। जब दूध आया तो उस में जो पिसी हुई मिश्री की पुड़िया महात्माजी के हाथ में थी सब को दिखा-कर और कहा कि ये संखिया है, दूध में डाल प्रथम लड़के की माता को बुलाय और कहा कि तुम अभी कहती थीं कि चाहै हम मरजायें पर हमारा बेटा जी जाये इस ले जहर को तुम पीलो सो तुम तो अभी मर-जावोगी और तुम्हारा बेटा अभी जी जायगा। माताने कहा महाराज! हमारी जन्मपत्री तो देखो हमारे और बेटे होंगे या नहीं? महात्माजी ने कहा तुमने इसे नौमास पेट में रक्खा और पाला पोषा है इस से (गोद का जाय और पेट का आसरा) बात मत करो, इस दूध को पीलो। माताने कहा महाराज हमें आप पहिले यह बतादें कि हमारे और बेटे होंगे या नहीं? महात्माजी ने यह समझ लिया कि ये दूध नहीं पी सक्ती, बातों में टाल-रही है, अतः माता को अलग कर पिता को बुलाया और कहा कि आप हमारे यहां दौड़े गये थे और यं कहते थे कि चाहै हम मरजायें पर हमारा बेटा जी जाये इस लिए आप इस दूध को पीलें सो आप तो अभी मर जायंगे पर बेटा आप का जी जायगा। पिताने कहा महाराज! महारी अवस्था तो अभी इस प्रकार की है कि और बच्चे हो सकते हैं। महात्मा ने इन्हें भी पीछे हटा

साहूकार के बेटे की स्त्री को बुलवा कहा कि तुमने इस के साथ भांवरे फिरी हैं और तुम्हारी शोभा इसी से है और तुमभी अभी यही कहती थीं कि चाहै हम मरजायें पर हमारा पति जी जाये इस लिये तुम इस दूध को पीलो सो तुम तो अभी मरजावोगी और पति तुम्हारा जी उठेगा। स्त्रीने कहा महाराज! ये जिया न जिया इस लिये अब हम हमारे मा बाप के यहां बहुत धन है, वहां चली जांयगी और वहीं अपना जीवन व्यतीत करदेंगी। महात्मा ने उसे भी अलग किया। अब टोला महल्ला वालों ने सोचा कि साहूकार के माता पिता स्त्री सब से तो महात्माजी कह चुके अब हम लोगों की भी आई इस कारण सब के सभी टरक गये। अब केवल वहां ५ मनुष्य शेष रहगये महात्मा, साहूकार का बेटा, उसकी माता, पिता और स्त्री तब तो महात्माजी ने यह सब देख कहा कि दूध हम पीलें? माता पितादिकों ने उत्तर दिया कि महाराज महात्माओं का तो परोपकार केही लिये जीवन होता है। तब महात्माने बेटेकी माता से कहा कि यदि तुम ये प्रतिज्ञा करो कि यदि हमारा बेटा जी उठेगा तो ये सब वृत्तान्त हम सब यथार्थ अपने बेटे से कहदेंगी तो हम दूध पीलें। माता ने प्रतिज्ञा की, महात्माने मिश्री पड़ा दूध आनन्दमें पीलिया, कुछ उस में जहर तो था ही नहीं। साहूकार के बेटे को प्राणायाम

से जगा दिया और उस की माता से कहा कि अब इस से सम्पूर्ण वृत्तान्त यथार्थ यथार्थ कहो। माताने कुछ कहने में संकोच किया। महात्माने कहा यदि तुम संकोच करोगी तो ऐसा शाप दूंगा कि तुम को तुम्हारे पति बहू तथा इस बेटे को सब को अभी भस्म कर दूंगा ऐसा सुन साहूकार के बेटे की मा को विवश हो सब कहना पड़ा। बच्चे ने सुन के यह समझ लिया कि—

एकः पापानि कुरुते फलं भुंक्ते महाजनः।
भोक्तारो विप्रमुच्यन्ते कर्त्ता दोषेण लिप्यते॥

संसार में सिवा धर्म तथा ईश्वरके सचमुच अपना कोई नहीं ऐसा जान, इन से मोह छोड़,महात्मा जी के साथ जा, समाधि लगा मोक्षसुख को प्राप्त किया। सच है भर्त्तृहरि जी ने कहा है किः—

श्लोक

प्राप्ताः श्रियः सकलकामदुघास्ततः किं,
दत्तं पदं शिरसि विद्विषतां ततः किम्।
संमानिताः प्रणयिनो विभवैस्ततः किं,
कल्पं स्थितं तनुभृतां तनुभिस्ततः किम्॥

अर्थ—इन नश्वर शरीरधारियों ने सब कामनाओं

की दहने वाली लक्ष्मी पाई तो क्या, शत्रुओं के शिर पर पग दिया तो क्या, धन से मित्रों का सम्मान किया तो क्या, फिर इस देह से कल्पभर जिये तो क्या अर्थात् परलोक न बनाया तो कुछ न किया ॥

जीर्णा कंथा ततः किं सितममलपटं पट्टसूत्रं ततः किं। एका भार्या ततः किं हय-करि-सुगणैरावृतो वा ततः किम्॥ भक्तं भुक्तं ततः किं कदशनमथवा वासरान्ते ततः किं। व्यक्त-ज्योतिर्नवांतर्मथित भवभयं वैभवं वा ततः किम्॥

अर्थ—पुरानी गुदड़ी धारण की तो क्या, उज्ज्वल निर्मल वस्त्र वा पीताम्बर धारण किया तो क्या, एक ही स्त्री पास रही तो क्या, अथवा घोड़े हाथी सहित करोड़ स्त्रियां रहीं तो क्या, अच्छे व्यञ्जन भोजन किये वा कुत्सित अन्न सायंकाल को खाये तो क्या, जिस से भवभय नष्ट होजाय ऐसी ब्रह्म की ज्योति हृदय में न जानी तो बड़ा विभव पाया ही तो क्या ॥

(१२) परमात्मा को पाप पुण्यका द्रष्टा और दण्डदाता जान पापों से क्यों न बचो।

[यह पापों की पूंजी कभी पच नहीं सक्ती]

एक माली ने एक बाग बहुत ही अच्छा लगा रक्खा था जिसमें हर प्रकार के फल फूल उपस्थित थे और माली स्वयमेव अपने बाग का रक्षक था। एक बाबू साहब एक बहुत ही अच्छा कोट जिसमें कई एक पाकिट भीतरी चोरगल्ले तथा कई पाकिट बाहर भी थे और पतलून भी बड़ी बढ़िया पहिने हुये एक कीमती टोपी दिये तथा हाथ में छड़ी लिये हुये उस बागीचे को देखने के लिये पहुंचे और माली से पूछा कि हम आपके बागीचे को देखना चाहते हैं। मालीने कहा आप बागीचे को प्रसन्नता पूर्वक देखियेगा परन्तु आप कृपाकर उसमें से कोई फूल न तोड़ें। बाबू साहबने कहा बाहजी ये भी कोई भले मानसों की बातें हैं, भला यह आप क्या कहते हैं, कभी ऐसा हो सक्ता है? बाबू साहब बागीचे के भीतर जा सड़कों पर टहलने लगे और बाबू नाना प्रकार के वृक्ष पत्र पुष्प फल देख बाबू साहब का मन ललचाया और बाबू साहब ने ये सोचा कि यदि हम कुछ फल तोड़ अपने भीतरी चोरगल्लों में रक्खें तो वहां माली किसी भांति न देख सकेगा अतः बाबू साहब ने फूल तोड़ तोड़ भीतरी चोरगल्ले तो खूब ही ठांस ठांस कर भरे और बाहरी पाकिटों में यह समझ कि यदि हम इन में कुछ २ फल डालेंगे तो ये मालूम पड़ेगा कि कपड़ा फूला हुआ है ऐसा

सोच कुछ उन में भी तोड़ तोड़ कर डाल बागीचे से चल कर निकलने लगे तो बागीचे का माली जो बगीचे के दरवाजे पर बैठा था उसने कहा बाबू साहब ! इस बागीचे का ये नियम है कि जो मनुष्य देखने जाता है बिना झारा लिये नहीं जाने पाता है। बाबू साहब ने कहा आप देख लीजिये मैं खड़ा हूं तब तो मालीने कहा इस प्रकार झारा नहीं लिया जाता यह तो आप इस कोट को उतार के अलग रखिये और इस के एक एक पाकिट में हाथ डाल के देखूंगा। अबतो बाबू साहब हें हें करने लगे, मालीने कहा हें हें से कुछ न होगा इस कोट को उतारिये अतः बाबू साहब को विवश हो कोट उतारना पड़ा और जब मालीने पाकटों में हाथ डाल देखा तो फल तो मौजूद ही थे अब तो मालीने बाबू साहब को पकड़ अपने नियम के अनुसार बाबू साहब को दण्ड दे पुलिस के हवालेकर जेल को भेज दिया।

सभ्यगणो! दृष्टान्त तो यह हुआ परन्तु दार्ष्टान्त इस का यह है परमात्मारूपी माली ने प्रकृतिरूप बीज को लेकर

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां,
बह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः।
अजोह्येको जुषमाणोऽनुशेते,
जहात्येनां भुक्तभोगामजोऽन्यः॥

नाना भांति का संसार रूपी बागीचा रचकर स्वयमेव अपने आप ही संसार का रक्षक हो रहा है। ये जीवात्मा शरीर रूपी कोट पहिर बागीचे की सैर करने आता है परन्तु उस माली ने कहा था कि:—

ईशावास्यमिदꣳसर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मागृधः कस्यस्विद्धनम्॥

य० अ० ४०

बगीचा तो देखने जाते हो पर ये जो कुछ संसार रूपी बाग है सब मुझ से भरा है अतः बागीचे में जा किसी वस्तु पर हाथ न डालना ऐसा कह पुनः आज्ञा दी कि:—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥

य० अ० ४०

ऐसा जानकर ये स्मरण रखते हुये कि बागीचे में किसी वस्तु को न छूयें सैर कर आइये पर इसने यहां आकर नाना भांति के मद्य मांस हिंसा चोरी जारी आदि कुकर्मों से खूब ही पेट रूप चोरगल्ले भरे। इसने सोचा कि यहां मुझे कोई देखने वाला थोड़ा है, यह न सोचा कि—

एकोऽहमस्मीत्यात्मानं यत्त्वं कल्याण मन्यसे।
नित्यं हृद्यन्तरस्थो हि पुण्यपापेक्षिता मुनिः॥

वह परमात्मा सर्वत्र तथा आत्मा में भी पुण्य पाप का देखने वाला मौजूद है। जीवात्मारूप बाबू बागीचे के बाहर चलके माली नाना भांति के रूप बना अपनेको यह दर्शाकर कि बड़ा धर्मात्मा है बागीचे से अच्छी तरह निकलना चाहता है पर यह साधारण मनुष्यों में तो चल जाती है कि चाहे जैसे अधर्म करो पर एक उत्तम सफेद पोशाक पहिरने, रूप बनाने, धन होने से सांसारिक लोग प्रतिष्ठा देदिया करते हैं क्योंकि सांसारिक मनुष्य तो व्यापक नहीं जो तुम्हारी भीतरी दशा जान सकें परन्तु परमात्मा के यहां यह आडम्बर नहीं चलता जिस समय में संसाररूपी बागीचे के चिता रूप द्वार पर पहुंचता है तो इस का यह शरीररूपी कोट माली उतरवा के अलग रखवा लेता और एक एक पाकिट हड्डी पुरजे देखता यदि कोई चोरी नहीं तो उसे पारितोषिक और यदि कुछ फल फूल तलाशी में बरामद हुये तो दण्ड दे नाना प्रकार योनिरूपी जेल खानों में अपने नियमरूपी दूतों के हाथ भेज कर्म फल देता है॥

(१४) पारसमणि की बटिया॥

एक महात्माने एक साहूकार को एक ऐसी पारस

मणि की वटिया दी कि जिसको लोहे में छुआते ही लोहा सोना बनजाता था, परन्तु महात्माने यह कहा था कि वटिया मैं तुम्हें ७ सात दिवस के लिये देता हूं, सातही दिन में तुझ से यह वटिया लेलूंगा। साहूकार ने वटिया पाते ही सोचा कि मेरे घर में तो लोहा सिवाय और हसिया, खुरपी, फावड़ा और कुदार के और कुछ है ही नहीं, और वटिया केवल सातही दिन को मिली है। अतः उसने सोचा कि अभी दिन तो सात पड़े हैं इतने में लोहा खरीद कर लाया जा सक्ता है। ऐसा समझ एक आदमी कलकत्ता, दूसरा बाम्बे भेजा और उन आदमियों से कहा लोहा जल्दी खरीद कर लाना। दो दिन में गाड़ी कलकत्ता आई, २ या २॥ दिन में गाड़ी बम्बई पहुंची, पुनः वहां लोहा खरीदते गाड़ियों में लदाते हुये २ दिवस व्यतीत हो गये पुनः २ दिन में फिर यहां रेल गाड़ियां आईं इस भांति छः दिवस बीत गये। सातवें दिन साहूकारने माल गाड़ियों से माल उतरवा कर सोचा कि यदि पारस पथरी छुआये देते हैं तो तांतियां भील या दराव सरीखे डाकू सब लूट लेंगे, अतः लोहे को घर में भरकर तब पारस पथरी छुआयें। ऐसा समझ लोहा बैल गाड़ियों में भरा घर लाये। लोहा बैल गाड़ियों से उतरवा उतरवा घर में भर रहे थे। यह समय सातवें दिन बारह बजे रात का

था, तब तक महात्माजी बटिया लेने वाले आगये। साहूकार ने महात्माजी का बहुत कुछ आदर सत्कार किया। महात्मा जीने कहा वह बटिया लाइये। साहूकारने कहा "महाराज! अब तक तो हम लोहा ही खरीदते रहे, कुछ काल गम खाइये'। महात्माजी ने कहा मैं एक मिनट भी नहीं गम खा सकता। बटिया लाइये' साहूकारने कहा' महाराज! अच्छा हम अभी जाकर लोहे में छुआये लेते हैं' 'महात्मा जी ने कहा "बस आपकी अवधि हो गई, बस अब बटिया दे दीजिये'। साहूकार ने कहा "अच्छा, हम ये लोहा छुआ लेते हैं" महात्मा ने हाथ पकड़ बटिया छीन ली। महाशयो! दृष्टान्त तो ये हुआ, दार्ष्टान्त यह है कि जीवात्मा रूप साहूकार को परमात्मा रूपी महात्मा ने यह शरीर रूपी पारस मणि की पथरी सात दिन के लिये [सात दिन का तात्पर्य्य यह है कि दिन सात ही होते हैं] दी थी कि इस पारसमणि पथरी से माया-जंजाल विषयों से अलग हो मोक्षरूपी सोना बनाले पर यह जीवात्मा रूपी साहूकार सातों दिन यानी सदैव लोहा ही खरीदता रहा अर्थात् विषयों में ही फंसा रहा। जब महात्मा इन से, अवधि आने पर, बटिया लेने गया, तब कहते हैं "परमेश्वर २ वर्ष या एक वर्ष या छः मासकी और आयु दे, तो हम कुआ बनवालें, यज्ञ करलें, योग साधन करलें" परन्तु वहां के मृत्यु समय आने पर

१मिनट की भी मोहलत नहीं मिलसकती। जैसा किसी कविने कहा है :-

कल करन्ता आज कर और आजकरन्ता अब।
छिन २ आयु घटत है फेर करैगा कब?

१५-(कुछ आगे के लिये भी भेजिये)

एक राजा के राज्य में यह नियम था कि एक राजा १० वर्ष राज्य करने के पश्चात् वन को भेज दिया जाता था। एक राजा उस गद्दीपर बैठे,परन्तु इस से इतने दुखी थे कि जिस का पारावार नहीं। वे सोचते रहते थे कि यह सम्पर्ण समान हमारे पास ४ वर्ष के लिये है, २ वर्ष के लिये है, १ वर्ष के लिये है, ६ मास के लि है, इस दुःख से उन का खाना पीना और आनन्द सभी बन्द थे। अनायास राजा साहब के यहां एक महात्मा आगये। महात्मा ने कहा "राजा इतना दुःखी क्यों? राजा ने कहा महाराज! ६ मास के पश्चात् वन को भेज दिया जाऊंगा, और ये राज्य के सम्पूर्ण पदार्थ छूट जायगे। तब मुझे बड़ा कष्ट होगा, इस कारण दुःखी रहता हूं। महात्माने कहा "राजन्! इस के लिये इतना दुःख क्यों है! यह तो थोड़ी सी बात है कि आप को ६ मास के बाद जिस वन को जाना है अभी से सम्पूर्ण पदार्थ राज्य के क्यों नहीं धीरे २ उस वनको भेज देते हो ताकि वहां कष्ट न हो।

राजाने वैसाही, किया और वन में जा आनन्द भोगने लगा। इस का दार्ष्टान्त यों है कि इस जीवात्मारूपा राजा की बदली कुछ दिनों के पश्चात् अन्य योनियों में हुआ करती है यह प्राणी मनुष्यशरीररूपी पदार्थ छूटते जान कर शोकित होता है कि जाने दूसरे जन्म में मनुष्य शरीर मिले या नहीं। महात्मा ने इस के लिये बतलाया कि यज्ञादिक तथा दान धर्म द्वारा क्यों न तू अपने पदार्थ धीरे २ पहुंचा दे ताकि तुझे पुनर्जन्म में पुनः सम्पूर्ण पदार्थ प्राप्त हों॥

एक कवि का वाक्य है :—

धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते।
अजागलस्तनस्येव तस्य जन्म निरर्थकम्॥

१६-(देहमें खुजली)

एक अन्धा किसी बड़े भारी मकान के भीतर पड़ गया। अब बेचारे को मार्ग मिलना कठिन हो गया। परन्तु अन्धे ने एक युक्ति सोची कि यदि दीवार पकड़े २ इस के सहारे मैं चलूं तो दरवाजा अवश्य मिल जाय गा, और अन्धे ने ऐसा ही किया, परन्तु दीवार पकड़े पकड़े जबही दरवाजे के सामने आता था तबही उसकी देह में खुजली उठ आती थी। तब तो अन्धा, दोनों हाथों से दीवार का सहारा छोड़, खुजलाने लगता था,

और इस भांति एक बार क्या वरन सैकड़ों बार दरवाजा निकल जाता था, और वह यों ही हाथ मीजते रह जाता था।

फल—मनुष्यशरीर को पाकर विषयरूपी खुजली में लिप्त मत हो, नहीं तो मुक्तिद्वार न पा सकोगे।

१७-(देहाभिमान का त्याग)

एक बार महाराजा जनक के मंत्री ने महाराज जनक जी से पूछा कि 'महाराज! आप के देह होते हुये भी विदेह नाम क्यों है?" महाराज ने कहा इसका उत्तर हम तुम्हें कुछ दिवस के बाद देंगे। जब कुछ दिन व्यतीत हुए तो महाराज ने एक दिन उस मन्त्री का निमन्त्रण किया और घर में सम्पूर्ण पदार्थ ऐसे बनवाये कि जिन में किसी में भी नमक न पड़ा था। मन्त्री जी के भोजन करने के प्रथम ही एक ढंढोरा इस प्रकार का पिटवा दिया कि 'आज ४ बजे उक्त मन्त्री को फांसी दी जायगी' और ढंढोरा पीटने वाले से कहा कि 'मन्त्री जी के द्वार पर तीन आवाजें लगा देना कि जिस में मन्त्री जी सुनलें।' ऐसा ही हुआ। पश्चात् २ बजे महाराज जनकजी ने उसे भोजनों के निमित्त बुलाया और बड़े आदर से ले जाकर भोजन कराया। जब मन्त्रीजी भोजन करके निकले तब महाराज जनक जी ने कहा कि 'मन्त्री जी! यदि आप हमें यह

बतादें कि किस किस भोजन में कैसा कैसा लवण था तो मैं आप को सूली से मुक्त करदूं"।

मन्त्री जी ने उत्तर दिया कि "महाराज ! मुझे मौत के भय से यह ज्ञान न रहा कि किसी में लवण है या नहीं। मैं कैसे बताऊं" ? तब तो महाराज जनक जी ने मन्त्री से कहा "सुनिये आप को सूली का समय यद्यपि ४ बजे था और दो बजे आप भोजन करने बैठे थे यानी भोजन के समय से मौत के समय तक २ घण्टे जिन्दगी की पूर्ण आशा थी परन्तु फिर भी आप को लवण का ज्ञान शरीर, स्मरणशक्ति, जिह्वा और ज्ञान आदि के होते हुए भी, न रहा फिर मुझे तो एक मिनट की भी पूर्ण आशा जिन्दगी की नहीं। बस जैसे तुम २ घण्टे का समय और देह होते हुये भी विदेह हो गये, इसी प्रकार १ मिनट की भी आयु की आशा न रखता हुआ मैं सदैव विदेह रहता हूं"।

१८-(विषयों की असलियत)

एक राजपुत्र एक दिन अपने ग्राम में घूमने गया। एका एक राजपुत्र की दृष्टि एक महल के ऊपर पड़ी। महल पर एक सोलह वर्ष की कन्या अत्यन्त ही रूपवती स्नान किये हुये अपने केश सुखा रही थी, और वह

कन्या उसी राजपुत्र के पिता राजा साहब के मन्त्री जी की थी, राजपुत्र उसे देख तुरन्त ही मूर्छित हो गया। कुछ काल के पश्चात् जब इस की मूर्छा जागी तो फिर इस की दृष्टि महल की ओर गई, परन्तु फिर इसे वहां वह रूपवती न दिखलाई पड़ी। राजपुत्र अपने घर लौट आया और घर आ कर सब खान पान एकदम छोड़ शोकभवन में जा लेटा! बहुत कुछ पूछने पर इसने सच्चा २ हाल कह दिया। राजा अपने पुत्र की यह दशा देख बड़े ही शोक में पड़गया। मन्त्री राजाजी की यह दशा देख अपने घर गया और अपनी कन्या से सम्पूर्ण वृत्तान्त कहा। कन्याने अपने पितासे कहा "पिता! इस के लिये राजा और राजपुत्र क्यों दुखी हैं? तुम जाके कहदो कि आप उठिये स्नान भोजन कीजिए मेरी कन्या आप से परसों मिलेगी"। राजपुत्रने अत्यन्त प्रसन्न हो, उठकर स्नान भोजन किया। वहां जिस समय मन्त्रीजी अपने घर गए, तो उस कन्या ने अपने पिता से कहा कि "पिताजी! मुझे एक जमालगोटा और ८० कूंडे मिट्टी के, और ८० रुमाल रेशमी आज ही मंगवा दीजिये"। पिताने उसी समय ये सब चीजें मंगवा दीं। रूपवतीने ज्योंही जमालगोटे का जुल्लाब लिया कि दस्त पर दस्त आने प्रारम्भ हो गये। रूप-

वह्रो हरबार उन्हीं कूंडों में पाखाने जाती और हर कूंड़े पर, जिस में कि पाखाने हो आती थी, एक रेशमी रूमाल बड़ा कीमती ओढ़ा दिया करती थी, इस प्रकार वह सभी कूंड़े सज गए। रूपवती की यह दशा हो गई कि शरीर सम्पूर्ण पीला पड़ गया, और दुबली ऐसी हो गई कि मानो चारपाई में लगगई थी। टटी सी खाट पर लेटी हुई मक्खियां चारों ओर भिनक रहीं थीं। मलमूत्र सने कपड़े पहन रही थी। इस अवस्था में स्थित अपने पिता मन्त्रीसे कहा कि "पिताजी! अब आप राजपुत्र को ले आइये" राजपुत्र, पूर्णरूप से सज धज बड़ी उमंग के साथ, मन्त्री के साथ चलदिये। जब मन्त्रीजी के महलों में प्रवेश कर ज्योंहीं भीतर पहुंचे, तो कुछ दुर्गन्ध आई। राजपुत्रने रूमाल से अपनी नाक दबा कहा "मन्त्रीजी! दुर्गन्ध काहे की आती है"? मन्त्रीजी ने कहा "होगी किसी चीज़ की, आप चले आइये।" बड़ी कठिनता से दुर्गन्ध सहन करतेहुए राजपुत्र रूपवती तक पहुंचे। रूपवती की वह दशा देख राजपुत्र दंग रह गया, कि "अरे रे रे; इस की क्या दशा हो गई? मैंने परसों इसे, उस रूप में देखा आज क्या हो गया"? रूपवती ने कहा "महाराज आइये" परन्तु राजपुत्र को रूपवती के पास जाना तो क्या बल्कि

वहां खड़े रहने में मिनट मिनट में इतनी तकलीफ़ हो रही थी कि जिस का पारावार नहीं। रूपवती ने कहा "महाराज ! यदि आप की प्रीति मुझ से थी तब तो यह दासी आप की सेवा में उपस्थित है, और यदि मेरी ख़ूबसूरती से प्रेम था तो वह कूंड़ों में भरी रक्खी है।" परन्तु इस मूढ़ राजपुत्र को फिर भी बोध न हुआ; इस ने समझा कि ख़ूबसूरती कोई वस्तु होगी जो कूंड़ों में भरी रक्खी होगी। ऊपर रेशमी रुमाल देख इसे ख्याल हुआ कि ख़ूबसूरती कोई बड़ी उत्तम वस्तु होगी, जिसपर कि रेशमी रुमाल पडे हैं। राजपुत्र ने जा कर ज्योंही रुमाल खोले, तो वहां पाखाना देख नाक दबाकर चल पड़ा और पुनः इस को ऐसा वैराग्य हुआ कि इसने तमाम उमर योगके अङ्गों का पालन कर मोक्ष प्राप्त किया। बस आप लोगोंने संसार के पदार्थों की ख़ूबसूरती तथा चमकीले पन को असलियत समझ ली होगी।

१६-(अष्टावक्र)

एक बार महाराज जनक जी ने एक सभा करके बडे २ विद्वानों को बुलाया और यह कहा कि हमको कोई ऐसा उपाय बताओ कि जिस से २ घंटे में ईश्वर प्राप्त हो जाय। उस समय वहां बहुत

पण्डित एकत्र थे, उसी सभा में महाराज अष्टावक्र के पिता भी गये थे। अष्टावक्र महाराज, जिस समय बाहर से घरमें आये, तो अपनी मातासे पूछा कि "माताजी! आज पिताजी नहीं दिखलाई पड़ते; कहां गये है" ? माताने कहा कि "आज महाराज जनक की सभा मे इस प्रकार का विषय प्रविष्ट है, आप के पिता वहां गये हैं"। महाराज अष्टावक्र ने कहा "माताजी ! भोजन के पश्चात् हम भी राजा जनक की वह सभा देखआवें"? माताने अष्टावक्र से कहा कि "बेटा! प्रथम तो तुम्हारी आठों गाठें टेढ़ी, हाथ पैर से अपाहिज, कहां किढ़-लते हुये जावोगे ? दूसरे तुम्हें देख सब हंसेगे" पर अष्टावक्रजी तो बडे़ विद्वान् थे, अतः माता से आज्ञा ले, राजा जनक की सभा में जा पहुंचे। इन के पहुंचते ही इन्हें आठों गांठ टेढ़ा देख सम्पूर्ण सभा के लोग हंस पड़े, परन्तु महाराज अष्टावक्र जी सभा के लोगों से दुगुण हंसे। तब तो सभाके लोगोंने महाराज अष्टाव-क्रजी से पूछा कि 'आप क्यों हंसे' ? महाराज अष्टा-वक्रजी ने सभा के लोगों से कहा "आप क्यों हसे"? तब सभा के लोगों ने कहा "हम तो आप का आठों गांठ टेढ़ा रूप देखकर हंसे"। तब तो महाराज अष्टा-वक्र ने कहा 'हम यों हंसे कि तुम सब चमार हो;

क्योंकि हड्डी चमड़े की परीक्षा चमार ही का होती है'। यह सुन कर राजा जनक ने महाराज अष्टावक्र जी का बड़ा सत्कार किया, और अपना प्रश्न महाराज अष्टावक्र जी से भी कहा। महाराज अष्टावक्र जी ने कहा कि 'राजन्! यदि हम आपको २ घंटे में ईश्वर प्राप्त करा दें तो आप हमें क्या देंगे'? महाराज जनकने कहा "हम तुमको अपना सम्पूर्ण राज्य देदेंगे"। महाराज अष्टावक्र ने कहा 'राज्य तुम्हारा है? क्या जिस समय आप पैदा हुये थे राज्य को साथ लाये थे? क्या खाली हाथ 'कहां कहां करते हुए उत्पन्न नहीं हुये थे'? तब तो महाराज जनक ने कहा कि 'महाराज! राज्य के सिवाय तो हमारे पास कुछ नहीं है, महाराज! हम आप को क्या दें'? महाराज अष्टावक्र ने कहा कि "आप अपनी चीज़ दे दीजिये"। तब महाराज जनक ने कहा 'और हमारे पास हमारी चीज़ क्या है'? तब महाराज अष्टावक्र ने कहा 'आप अपना मन हमको देदीजिये तो हम आपसे ईश्वरको मिलादें"। बस जैसे ही महाराज जनक ने अपना मन ठहराया वैसेही महाराज को ब्रह्मानन्द का अनुभव होने लगा, और बड़ा ही आनन्द प्राप्त हुआ, क्योंकि कठ उपनिषद् में कहा भी है:—

मनसैवेदमाप्तव्यं नेह नानास्ति किंचन।

मृत्योःस मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति ॥

अर्थात् वह एक ब्रह्म मनके शान्त होने पर ही जाना जाता है, उसमें नानात्व नहीं

२०-(क्या करें फुरसत नहीं मिलती)

एक लालाजो से, एक महात्मा जी जब कभी, यह कहते थे कि लाला जी ! कुछ सन्ध्या—गायत्री, होम-यज्ञ और परमेश्वर का भजन किया करो, तब लालाजो तुरन्त ही यह उत्तर दे देते थे कि 'क्या करें, जनाब फुरसत नहीं मिलती'। महात्मा ने यह सोचा कि यह इस तरह नहीं मानेगा, अतः एकदिन लाला पाखाने जा रहे थे इतने में महात्माने गांवमें जाकर यह शोर करदिया कि 'एक शैतान इस किस्म का लाला के हुलये का आया है, उसने गांव के समीपके कितनेही मनुष्य मार-डाले, और खागया। वह शैतान जब गांव में घुस जाता है तो फिर निकाले नहीं निकलता, इस लिये सब गांव के लोगो ! तय्यार हो जाओ'। बस गांववाले कोई लाठो, कोई डण्डा, कोई डल लेले कर तय्यार हो गये। ज्यों ही लालाजी आये त्यों ही गांव के लोगों ने लाला जी को बेहद पीटना आरम्भ कर दिया। लाला जी ने सब कुछ कहा कि 'मैं इसी गांव का रहने वाला

लाला हूं लेकिन किसी ने न सुना। यहां तक कि लाला जी के घरवालों ने भी न पहिचाना और लाला जी को मारते ही रहे। जब लाला जी ने देखा कि अब प्राण ही जाते हैं, तब भाग ही खड़े हुये, और वन में जाकर एक स्थान में बैठ रहे। पश्चात् महात्मा जी, जिस ओर लाला जी भग कर गये थे, जाकर लाला जी से मिले और कहा 'कहो लाला जी! फुरसत है'? लाला जी ने महात्मासे कहा ' महाराज! हम सेजो कहो सो करें, हमें तमाम दिन फुरसत है, पर अब ऐसा उपाय कीजिये कि जिससे मैं अपने घर तो जाने पाऊं'। महात्मा ने कहा कि ' तो प्रतिज्ञा करो कि हम, आज से नित्य, पाठ—पूजा, सन्ध्या—अग्निहोत्र और परमात्मा का भजन किया करेंगे'। लाला जी ने प्रतिज्ञा की। तब तो महात्मा जी ने लाला जी को अपने साथ ले कर उन के घर पहुंचा दिया।

फल—सायंप्रातः सब काम छोड़कर परमात्मा का भजन भी करना चाहिये।

२१-(ऋषिसन्तानों का त्याग)

महात्मा कणाद जब सब काश्तकार अपने खेत काट लेते थे और उनका शीला बीन लिया जाता था, तब एक एक २ कण बीन कर अपना निर्वाह किया

करते थे। इस लिये उनका नाम 'कणाद' अर्थात् कणान् अत्तीति कणादः जो कण बीन २ कर खाये था। इस भांति महात्मा निर्वाह करके हमारे लिये 'वैशेषिक दर्शन' सा रत्न भारी कष्ट उठा कर रच गया। शोक! हम आज उसे पढ़ते भी नहीं। ये महात्मा, केवल शरीर में एक लंगोटी लगाये, नङ्ग धड़ंग वनमें रहा करते थे। जिस राजा के वन में यह रहा करते थे जब उस राजा के यहां यह खबर पहुंची कि आप के राज्य में एक इस इस प्रकार के महात्मा इस प्रकार से रहा करते हैं। शास्त्रों में यह लिखा है कि यदि किसी राजा के राज्य में कोई सच्चा महात्मा कष्टित रहे, तो राजा का सम्पूर्ण राज्य तथा दान, पुण्य, धर्म तप सबका सभी नष्ट हो जाता है। ऐसा जान, राजाजी ने, अपने कामदारों के हाथ कुछ द्रव्य महात्मा कणाद की सेवा में भेजा। ये कामदार, द्रव्य ले सामने खड़े हो गये। जब कुछ काल के पश्चात् महात्मा ने कपाट खोले तो पछा—'तुम कौन हो, और कहां से आये हो'? तब तो कामदारों ने कहा महाराज! आप के लिये यहां के राजा साहब ने कुछ द्रव्य भेजा है।" महात्माजी ने कहा "तुम जाके किसी कंगले को देदो"। कामदार यह शब्द सुन हैरान थे कि इस महात्मा के पास केवल एक लंगोटी है, पर ये कहता है कि तुम यह द्रव्य जाके

किसी कंगले को देदो । कामदारों ने राजा से आ कर वैसाही कह दिया । राजाने इस बात को अपनी सभा में प्रविष्ट किया । वहां से यह निश्चय हुआ कि "राजा साहब ! आप की हैसियत के अनुसार ये सत्कार न था, इस लिये महात्माजी ने लौटा दिया है, ऐसा जान उस द्रव्य को दुगुण कर पुनः कामदारों को राजा साहबने भेजा, महात्माजीने फिर भी वही कहा कि तुम जाके किसी कंगले को देदो"। राजा साहब ने पुनः इस बात को सभा में प्रविष्ट किया । अबकी बार यह निश्चय हुआ कि राजा साहब स्वयमेव इस का चौगुना द्रव्य और बहुत से सामान दुशाले आदि लेके जांये" और ऐसा ही हुआ । जब राजासाहब पहुंचे तो महात्माजी ने राजासाहब के कहने पर कि महाराज ! हम आप के लिये ये सब सामान लाये हैं । महात्माजी ने कहा "तुम इस सामान को जाके किसी कंगले को देदो" । राजाने हाथ जोड़ के कहा "महात्माजी ! अपराध क्षमा हो आप के पास सिवाय एक लंगोटी के और कुछ तो दीखता नहीं, और आप इस सामान के लिये यह कह रहे हो कि तुम जाके किसी कंगले को देदो, हमें तो आप से विशेष कंगला और कोई दीखता नहीं"। महात्माने फिर वही कहा कि "तुम जाके किसी

कंगले को देदो"। राजा विवश हो लौट आया। और जब रात में अपनी चित्रसारी पर जाकर लेटा तो अपनी रानी से यह सम्पूर्ण वृतान्त कहा। रानीजी ने कहा कि आपने बड़ो भूल की, ऐसे विद्वान् तत्वदर्शी को आप द्रव्य और दुशाले दिखलाने गये थे। उन के पास क्या नहीं है, और दूसरी भूल यह की कि ऐसे महात्मा के पास पहुंचकर कुछ रसायन-विद्या नहीं सीख आये जिस से कि राज्य के सैकड़ों गरीबों का काम चलता। इस से अबभी कुशल है कि आप महात्मा के पास जा के पूछ आइये। आधीरात का समय है, राजा उसी समय उठके महात्माजी के पास गया। ज्योंही राजाजी पहुंचे कि महात्माजी ने पूछा "कौन है?" राजा ने उत्तर दिया कि वही दिनवाला आप का सेवक राजा है। महात्मा ने कहा "आप इस समय क्यों आये?" राजा ने कहा "महाराज! हमारा अपराध क्षमा हो जो हम आप को अपनी दौलत दिखाते रहे, अब हमें आप कोई ऐसी रसायनविद्या बतादें जिस से हमारे राज्य के दीनों का पालन हो, हम बहुत कुछ पुण्यदान करसकें"। महात्माजीने कहा "राजन् मैं दिनमें तेरे दर्वाजे पर नहीं गया, लेकिन अब आधीरात का समय है और तू मेरे दर्वाजे पर खड़ा है। अब तू बता-

खा कि मैं कंगला हूं या तू कंगाल है ? राजा साहबने महात्मा के चरणों पर शिर नवा क्षमा मांगी । पुनः महात्मा ने राजा को उस रसायन—विद्या यानी ब्रह्म-विद्या का उपदेश कर, विषयरूपी लोह को सोना बनाना बता दिया ।

२२-(महात्मा कैयट का त्याग)

महात्मा कैयट से, संसार में ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो विज्ञ न हो ? आप का महाभाष्यतिलक जगत् विख्यात है । यह महात्मा जिस समय महाभाष्य-तिलक बनारहे थे उस समय महात्माजी की यह दशा थी कि स्वयं तो महाभाष्यतिलक वन ही में लिखा करते थे, और इन की धर्मपत्नी बन से मूंज ला, उस की रस्सी बट कर उन्हें बेंच अन्न लेकर उसे कूटपीस भोजन तैयार कर कहती थी कि स्वामिन्, प्राणनाथ ! भोजन तैयार है। ऐसा सुन महात्मा कैयट अपनी लेखनी रख भोजन करने जाते थे। एक दिन वहां के राजाने महात्मा कैयट की यह दशा सुनी, और राजा, महात्मा कैयट की सेवा में जा, हाथ जोड़, उपस्थित हुआ । महात्मा कैयट नीचे को सिर झुकाये लिख रहे थे । जब कुछ काल के पश्चात् सिर उठाया तो तुरन्त ही राजाने प्रणाम कर कहा "महाराज ! आप हमारे राज्य में इतना कष्ट उठा

रहे हैं, इस से हमें बड़ा भारी पाप लगता है"। तब तो उसी समय महात्मा कैयट ने अपनी धर्मपत्नी से कहा कि "यदि हमारे रहते हुए राजा को पाप लगता है तो उठाओ चटाई यहां से चलें"। यह सुन राजाने यह कहा कि महाराज मेरा यह प्रयोजन नहीं कि आप चले जांय किन्तु मेरा अभिप्राय यह है कि यदि आपके रहते हुए हम आप का सत्कार न करें और आप इतने कष्ट भोगें तो हम पापी होवें"। पुनः राजाने हाथ जोड़ महात्मा से कहा कि महाराज! अब आप जो जो पदार्थ कहें उनके लिये यह सेवक आपका उपस्थित है"। महात्मा कैयटने राजा जी से कई बार यह कहला लिया कि आप हमारी आज्ञा मानेंगे। राजाने कहा "महाराज! कहिये" महात्मा कैयट ने कहा "हम यही आप से मांगते हैं कि आप इसी समय यहां से चले जाइये"।

फल—निराश से अधिक सुखी कोई नहीं।

२३-(एक ब्राह्मण)

एक बार एक ब्राह्मण-शुद्ध ब्राह्मण-वेद और शास्त्रों का ज्ञाता, एक बन में तपस्या कर रहा था। महाराज अर्जुन ने सुन अपना एक दूत ब्राह्मण के निमन्त्रण देने के लिये भेजा। ब्राह्मण के पास ज्योंही महाराज अर्जुन का दूत पहुंचा और ब्राह्मण से यह

कहा कि महाराज ! आप को आज महाराज अर्जुनने निमन्त्रण भेजा है, ब्राह्मण यह सुन कर तुरन्त ही रोने लगा और कुछभी उत्तर दूत को न दिया । कुछ काल के पश्चात् दूत वहां से चलागया और जाके महाराज अर्जुन से कहा कि 'महाराज ! ब्राह्मणसे ज्यों हीं मैंने जाके निमन्त्रण को कहा त्योंहीं ब्राह्मण रोने लगा ।" यह सुनते ही महाराज अर्जुन भी रोने लगे । दूत यह चरित्र देख और आश्चर्य को प्राप्त हुआ और दूत वहां से चलकर महात्मा योगिराज श्रीकृष्णचन्द्र से हीपूछा कि "महाराज ! आज मुझे महाराज अर्जुन ने अमुक बनमें एक तपस्वी ब्राह्मण को निमन्त्रण देने को भेजा था । ज्योंही मैंने जाके उस ब्राह्मण से निमन्त्रण को कहा ब्राह्मण उसी समय रोने लगा; और जब मैंने अर्जुन से यह समाचार कहा तो अर्जुन भी रोने लगे सो महाराज! इन दोनों महाराजाओं के रोनेका कारण बतलाइये ?" भगवान् श्रीकृष्ण ने दूत को उत्तर दिया कि ब्राह्मण तो इस लिये रोया कि मैं जितने काल न्योता खानेमें दूंगा उतने काल मेरे तपमें बाधा होगी। दूसरे यह सोचा कि अब आगे ऐसे ब्राह्मण होंगे कि जिन्हें जप तप से कोई अर्थ न रहेगा, केवल न्योता खाने में ही समय वितायेंगे; और अर्जुन इस लिये रोये कि "हा ! आज क्षत्रिय ऐसे हुए कि जिनका

ब्राह्मणों ने तिरस्कार किया ॥"

फल—ब्राह्मणों का काम वेद पढ़ना है न कि न्योता खाना।

२४-(अतिथिसत्कार)

कुरुक्षेत्र में कपोती नाम का एक संन्यासी ब्राह्मण रहता था। वह उंछ वृत्ति से अपने कुटुम्ब का पालन करता था। ब्राह्मण के परिवार में चार मनुष्य थे अर्थात् ब्राह्मण और उसकी धर्मशीला स्त्री तथा पुत्र और पुत्रवधू ब्राह्मणी व बहू आजकल की कर्कशा स्त्रियों के समान पतियों पर दांत पीसने वाली न थीं; न वे यही जानतीं थीं कि पति के सिवाय मीरांमदार भी संसार में देवता हैं। पुत्रवधू पतिकी सेवा के सिवाय सास ससुरके इशारे में चलती, और उनको अपना पूज्य मानती, तथा श्रद्धा से उनकी सेवा करती थी। ब्राह्मण का पुत्र भी पिता की आज्ञा का पालन करना, उसके गौरव के अनुकूल वर्त्तना, यह अपना कर्त्तव्य जानता था। इस प्रकार धर्म से वर्त्ताव होने से दीनता होते हुये भी इस कुल को कुछ दैन्य-दुःख न था। सच है धर्म ऐसी ही वस्तु है कि जिसकी धारणा से निर्बल बलवान् हो जाता है, निर्धन धनवानों की अपेक्षा अधिक सुख पाता है, और भूखा अघाने के समान सन्तुष्ट

रहता है। ब्राह्मण और उस के परिवार के लोग भीख नहीं मांगते थे, न कहीं बुलाने से भी दान लेने जाते थे,खेत कटजाने पर जो उस में अन्न झड़ पड़ता था उससे पेट पालते थे, व्रतादि ये छठे दिन करते थे, यदि उस समय अहार न मिले तो फिर दूसरे छठे दिन में अन्न ग्रहण करते थे। व्रतकाल में इन लोगों का यही नियम था और इसके पालन करने में सब लोग दृढ़थे। ब्राह्मण के देश में एक बार अकाल पड़ा और जो कुछ संचित उंछ था वह सब चुकगया भिक्षावृत्ति धर्म नहीं, अब खावें तो कहां से? उंछ तो तभी मिलता है जब खेतों में अन्न उपजता है। ब्राह्मण को तपोनिष्ठ जान,लोग अन्न पान पहुंचाने लगे, परन्तु तो भी यथा समय आहार न मिलने से यह सब परिवार भूखों मरने लगा। इस परम कष्टको धैर्य से सहन करते हुये ब्राह्मणने कालक्षेप किया, किन्तु अपने कर्तव्य में तिलभर भी अन्तर न आने दिया। दुःख पर बड़े बड़े मोटे हिल जाते हैं, भार्या पेट की मार से स्वेच्छाचारिणी होजाती है,पुत्र व पुत्रियां साथ छोड़ अपने सुभीते की राह लेती हैं, माताओं ने भूख के मारे अपने नयन तारे एकमात्र बालक बेंच दिये वा मार्ग में पटक कर आत्महत्या कर ली। सत्य कहा है:—

श्लोक ।

वासुदेव ! जरा कष्टं कष्टं निर्धनजीवनम् ।
पुत्रशोकं महाकष्टं कष्टात्कष्टतरं क्षुधा ॥

अर्थ हेकृष्ण प्रथम तो बुढ़ापा ही दुःखदाई है, अनन्तर निर्धन हो जीवन असुख है, पुत्र का स्मरण महा क्लेश है और सब से परे क्षुधा कष्ट है। गांधारी ने सौ पुत्रों का मरण देखने पर भी भूख से विह्वल हो भोजनोपाय किया था तो इस दीन ब्राह्मण का परिवार विचल जावे तो क्या आश्चर्य है ? किन्तु ऐसा नहीं हुआ। ब्राह्मण अपने नियत धर्म पर सकुटुम्ब स्थिर रहा। यद्यपि वह और उस की ब्राह्मणी क्षुधार्त्त रहने से सुजकर ठठरी रहगई, पर उस का आत्मा बलवान् था, अतएव अपने व्रत मे न डिगी। इसी प्रकार पुत्र व पुत्रवधू ने भी मर्य्यादा रक्खी। अस्तु इसी भूखे समय में एक दिन सेरभर जौ ब्राह्मण को प्राप्त हुए। उसने उन के सत्तू बनवाये और पाव पाव सेर स्त्री पुत्रादि को बांट दिए और पावभर अपने लिए रख छोड़े।

जप और अग्निहोत्र करके ब्राह्मण भोजन करने के विचार में ही था कि इतने में द्वार पर कुछ आहट हुआ, जान पड़ा कि कोई अतिथि अभ्यागत है। यदि और कोई होता तो ऐसे समय कुछ जाता और किवाड़ न

खोलता; परन्तु कपोती, इस के विरुद्ध, प्रसन्न हुआ। उसने सहर्ष द्वार खोल दिया और अतिथिको बड़े आदर से कुटीमें लिवा गया। ब्राह्मण को अर्घपाद्यसे अर्चितकर भोजन के लिये निवेदन किया। अतिथि के आने से छः दिन का भूखा सारा परिवार खाने से रुक गया। आर्य धर्मशास्त्र की यही मर्यादा है कि अभ्यागत को जिमानेके पीछे घरवाले भोजन करें। कपोती ने अपने भागके सत्तू अतिथिके भोजनार्थ परोस दिए, जिन्हें वह रखते ही चाटगया। और उस का पेट न भरा। अतिथिकी और इच्छा देख कपोती विचारने लगा कि अब कहांसे दिया जाय जो यह तृप्त हो। कपोतीको चिन्ताकुल देख उसकी बीर पत्नी ब्राह्मणी ने कहा "महाराज! क्यों चिन्ता करते हो, मेरा भाग भी दे दीजिये।" यह सुनकर ब्राह्मण व्याकुल हो उठा। वह जानता था कि ब्राह्मणी छः दिनकी भूखीहै। कपोती कहने लगा कि भार्य्ये! प्रथम तो तुम वृद्ध, तिस पर आपत्कालमें यथा समय अन्न न पाने से कृश हो रही हो, तुम्हारी आकृति पर श्रम और ग्लानि भासित होती है, मांस तुम्हारे शरीर पर नहीं रहा, केवल अस्थि चर्मावशिष्ट है, उठने बैठने में कंपित कलेवर हो रही हो, अतएव तुम्हारा भाग देते हुवे मुझे ग्लानि होती है। यह सुनकर वृद्धा तपस्विनी

ने उत्तरदिया कि हे द्विजश्रेष्ठ ! मेरा और आप का धर्म्म में साथ है। स्त्री के व्रत-धर्म पति के आधीन होते हैं। भर्त्ता ही के प्रसाद से स्त्री को सुख और पुण्य लाभ होता है। मेरा आप पालन करते हैं, इस कारण पति, भरण करने से भर्त्ता और पुत्रदान से वरदायी हैं सो कृपया सत्तुओं का देना स्वीकार करें। अभ्यागत का सद्गृहस्थ के घर से असन्तुष्ट जाना शास्त्रविरुद्ध है; अतएव, मेरे जीवन मरण का विचार छोड़ अतिथि को तृप्त कीजिए। वस्तुतः विदुषी ब्राह्मणी का यह उत्तर धर्ममय था। अब ब्राह्मण को कोई बात दोहराने योग्य प्रतीत नहीं हुई। धर्म में स्त्री पुरुष का संग और साझा है यह बात सत्य है इसी कारण वह अर्धाङ्गिनी कहाती है। विवाह समय होमाग्नि के निकट गुरु पुरोहित और पिता आदि के सन्मुख बैठे, स्त्री पुरुष यही प्रतिज्ञा करते हैं कि हम दोनों एक मन होकर रहेंगे। परस्पर एक दूसरे की प्रसन्नता से कार्य्य करेंगे और धर्म के कार्यों में समानता से भाग लेंगे। पति ने अपना आहार अतिथि को खिलादिया है। वह छः दिन तक अपने नियम के अनुसार भोजन नहीं कर सकता। पति भूख से व्याकुल रहे, स्त्री पेटभर सुखनींद सोवे, यह बात पतिव्रता ब्राह्मणी को किसी

प्रकार स्वीकार न हुई, उसने अपना भाग अतिथि को खिलवा दिया, परन्तु इतने पर भी अतिथि की उदरदरी न भरी। ब्राह्मण और ब्राह्मणी पुनः सोच में पड़ गये। माता पिता को सोच विचार में डूबा जानकर पितृभक्त-आज्ञाकारी पुत्र भी अपना भाग देने लगा। उसने इस बात पर किञ्चित् ध्यान न दिया कि मेरा प्राण रहेगा वा पलायन कर जावेगा ? कल माता से मा कहकर पुकारने की शक्ति रहेगी वा नहीं। पिता का प्रण रहना चाहिये, पिता ने जिस अतिथि को सादर बुलाया वह कुटीसे भूखा जाय यह बड़ी ग्लानि और मानहानि की बात है। पिता का प्यारा पुत्र कहने लगा :—

"इन सत्तुओं को भी, जो मेरे भाग के हैं, अतिथि को खिला दीजिये। इस को मैं परम सुकृत मानता हूं। आपने मुझे पाला और मेरी सदा रक्षा की। यह शरीर आपही का है। वृद्ध पिता की आज्ञा का पालन करना शिष्टसम्मत है। पुत्र के होने का प्रयोजन यही है कि वह वृद्ध पितरों की सेवा करे। श्रुति निरन्तर तीनों लोक के लिये यही उपदेश करता है। पुत्र के भक्ति और ज्ञानभरे वचन सुनकर वृद्ध पिता के आंखें डबडबा आईं। वह सोचता है कि आज आहार न मिलने से, पुत्रको आगामि १२ दिन का अन्तर पड़ेगा।

इस बीच यदि चिरंजीव को कुछ अनिष्ट हुआ तो मैं पुत्रघ्न कहाकर किस प्रकार मुंह दिखाऊंगा और यह ब्राह्मणी किसका मुंह देख जीवन धारण करेगी? बुढ़ापेमें एकमात्र अन्धोंकी यही लकड़ी है। पुत्रवधू की जवानी की नदी पार करने की यही नाव है, और अपने वंश की भाविनी उन्नति का यही मार्ग है। पुत्र की अमंगल वार्त्ता जान उसकी वधू भी प्राण विसर्जन कर देगी। संसार में मेरा अपयश होगा। मेरी आंख का तारा क्या मुझे छोड़ जायगा? मैं किस प्रकार प्राण रक्खूंगा।" बढ़े की आंखों के आगे अन्धेरा छा गया। पुत्रवियोग की वार्त्ताके स्मरण ने उसे फिर एकाएक चौंका दिया। मानो स्वप्न देख कर नींद खुली हो। बुड्ढे ने आंख उठाकर देखा तो पुत्र सत्तू लिये हाथ जोड़े खड़ा है। वह उसे आंखें फाड़ फाड़ कर देखने लगा। पुत्र को अक्षत देख पिता को ढाढस आया और ज्ञान का तेज उसके हृदयपर फिर अपना प्रभाव करने लगा। तपस्वी को धीरज हुआ। ज्ञानियों परभी कभी अज्ञान आक्रमण करता है, परन्तु वे क्षण भर ही में सचेत हो जाते है। कारण कि उनका आत्मा बलवान् होता है। यह आत्मिक उन्नति प्राचीन समय हमारे देशमें बहुत थी। यदि ऐसा न होता तो राम कभी वन को न जाते।

लक्ष्मण जी उस घोर विपत्तिमें उनका साथ न देते। न हरिश्चन्द्र अपने मृतपुत्र को गोद में लिये प्यारी भार्या से कर मांगते। अस्तु, पिता ने चैतन्य हो पुत्र को आशीर्वाद देते हुए कहा कि " प्राणप्रिय ! दीर्घायु होकर सुपुत्रों को उत्पन्न करने वाला हो"।"पुत्र से अन्य पुत्रों की उत्पत्ति होने पर पिता कृतकृत्य होता है। तेरे भूखा रहनेसे कुलक्षय होगा,आगामिनी कुलवृद्धि रुक जावगी,

बालकों की भूख बलवती होती है। मैं बूढ़ा हूं मुझे क्षुधा बहुत नहीं सताती। मैं चिरकाल से आहार पाने में उपेक्षा करता आया हूं इस कारण भूख प्यास रोकने में सहनशील होगया हूं .तेरे रहते मुझे मरने का भय और सोच नहीं" पाठक! विचारिये,यह कितनी कठिन बात है कि पिता अपने पुत्र को,नहीं नहीं अपने हृत्पिण्ड को, भूखा देखे और प्राणों से अधिक प्यारे का अन्न सहसा किसी को दे दे! पशु पक्षी तक अपने बच्चों को चराते हैं। क्या पुरुष क्या वनिता सारा जगत् मोहसरिता में गोते खा रहा है। पिता को धर्म संकट में पड़ा देख पुत्र ने फिर कहा:—

"हे पिता ! मैं तेरा सन्तान हूं,पिताकी रक्षा करने ही से वह पुत्र कहाता है। आत्मा ही पुत्र कहा है। मैं तेरा आत्मा हूं, इस कारण आत्मा ही से आत्मा का

त्राण होना चाहिये।" यह धर्मयुक्त वचन पिता के मन में बैठ गया। उसका आत्मा धर्म से जाग्रत था। दशरथ ने मोह ममता छोड़ यज्ञ की रक्षा के लिये विश्वामित्र के साथ राम को करदिया था, तो इस तपस्वी कपोती ने भी प्राणोपम पुत्र का बारह दिन तक क्षुधा से पीड़ित रहना स्वीकार किया, किन्तु अतिथि को सन्तुष्ट करने से मुंह नहीं मोड़ा। पुत्र का भाग भी अभ्यागत को खिला दिया। अतिथि न जाने कब का भूखा था। ये सत्तू भी पोंछ कर खा गया, पर उसकी भूख न गई तब तो कपोती लज्जित और विस्मित हुआ। अतिथि को तृप्त करना धर्म है, जिसके लिये ब्राह्मण अपना और प्रिय भार्या का भाग दे चुका है। प्राणप्रिय पुत्र की होनहार गति की भी कुछ चिन्ता न करके उसका भाग खिला दिया है। सारा परिवार किस प्रकार दिन काटेगा ? इसका भी उसे कुछ सोच नहीं है। सोच है तो केवल इस बात का कि अतिथि भूखा न रहे। यही बात उसे व्याकुल कर रही है। धन्य तपस्वी का हृदय! कपोती यही सोच रहा था कि उस की साध्वी पुत्रवधू सन्मुख आकर उपस्थित हुई। लज्जा से जिसकी दृष्टि नीची है। सत्तू की पोटरी हाथ में है। नम्रता से शरीर झुक रहा है।

न उसको इस समय भूख है न आगे भूख लगने की चिन्ता है। पतिव्रता तपस्विनी देख चुकी है कि उसके सास ससुर ने अपना अपना भाग अतिथि को सानन्द खिला दिया है। पति ने भी देह-मोह छोड़ अपना हिस्सा जिमा दिया है। फिर यह साध्वी कब रह सकती है। वह भी अपने पति की अनुगामिनी है। सास ससुर की मर्यादा पर चलने वाली है। पुत्रवधू ने हाथ जोड़कर कहा कि यह पाव सेर सत्तू मेरे पास है. अतिथि को खिलाकर सन्तुष्ट कीजिये। वृद्ध श्वसुर उसकी आकृति देख दयार्द्र हो जाता है, सहसा कहने को समर्थ नहीं होता, जो नाना प्रकार को खाद्य वस्तुओंसे लाड़ लड़ाने योग्य है, उसका आहार हरणकर दूसरे को देना कैसे कष्ट की बात है ? अपनी वहू बेटी का खिलौना भी अन्य को नहीं दिया जाता, फिर भूखी का भोजन छीनकर अपरचित को दे देना कैसा नृशंस और कठोर व्यापार है? विशेषतः स्त्री जाति का जो अपने आश्रय से हैं। पुत्रवधू के कहने पर ब्राह्मण सम्मत न हुआ। उसने कहा कि हे प्यारी वधू ! धूप से कुम्हलाई लज्जावती पेड़ के समान मैं तुझको उदास देखता हूं। व्रत आचार करते तेरा भी तन क्षीण हो गया है। भूख से तेरा चित्त विह्वल होता है। निराहार

कृच्छ्रचान्द्रायण करने से तेरे हाड़ निकल आये हैं। मांस के सूखने से हाथों की रगें खुल रही हैं। बाला क्षुधार्त्त और नारी होने से तू निरन्तर दया पात्री है। तिसपर छः दिन के उपवास से परिश्रान्त हो रही है। मैं धर्मका घातक होकर किस प्रकार तेरे सत्तुओं को ग्रहण करूं? तुझको आग्रह न करना चाहिये। इस के उत्तर में पुत्र वधू ने कैसा धर्मसम्मत वचन कहा है जो हमारी प्यारी बहनों के ध्यान देने के योग्य है। वे इस आदर्श में अपना मुख देखें और विचार करें कि हमारे बीच धर्म का कितना भाव है? हम कहां तक सास ससुरकी आज्ञा मानती हैं और कितना पति के कहे में चलती हैं।

गुरोर्मम गुरुस्त्वं वै यतो दैवतदैवतम्।
देवातिदेवस्तस्मात्त्वं सक्तूनादत्स्व मे प्रभो॥
देहः प्राणश्च धर्मश्च शुश्रूषार्थमिदं गुरो।
तव विप्र प्रसादेन लोकान्प्राप्स्यामहे शुभान्॥

बहू ने बड़ी नम्रता से उत्तर दिया कि हे महाराज! आप मेरेगुरुके गुरु हैं (यह उनका संकेत पतिकी ओर था) अर्थात् आप मेरे पति के पूज्य अथवा गुरु होने से गुरु के गुरु हैं। इसी प्रकार देवताओं के देवताहैं। हे गुरो! देह और प्राण सब आपकी सेवा के लिये हैं। धर्म का

फल भी आपके निमित्त है। आप को प्रसन्नता ही से उत्तम लोकों की मुझे प्राप्ति है, इस कारण सत्तू अतिथि को खिला दीजिये। प्रेमभक्ति एवं धर्म भरे बहू के वचन सुन कर श्वशुर का हृदय उमड़ आया। उस की आंखों में प्रेमाश्रु बहने लगे, और कण्ठावरोध होगया। वृद्ध ने अपने को बहुत सम्हाल कर गद्गद कंठ से इतना ही कहा कि "तू धर्मवृत्ति और बड़ों की सेवा के लिये दृढ़ भाव से स्थिर है। तुझे प्राणों से धर्म अधिक प्रिय है। इस कारण सत्तू स्वीकार करता हूं। यह कहकर वधू के दिये सत्तू अतिथि को खिला दिये। उस ने सन्तुष्ट होकर बहुत आशीर्वाद दिया। ब्राह्मण के परिवार की देवता और ऋषियों ने प्रशंसा की। धर्मज्ञ पुरुषों ने विमानारूढ़ होकर उस पर पुष्पवृष्टि की।

फल—धर्म रक्षा में प्राण तक न्योछावर करदेना हमारे बड़े ख़ूब जानते थे।

२५ (धार्मिकराज्य)

एक मुसलमान बादशाह ने हिन्द के एक दक्षिणी राज्य पर चढ़ाई की और राज्य के धुर पर पहुंच कर अपना एक दूत राजा के पास भेजा और यह संदेशा कहला भेजा कि या तो तू अपना राज्य खाली करदे या मेरे साथ युद्ध करने को तयार होजा। राजा

ने यह संदेशा सुन, दूत से कहला भेजा कि हम राज्य को अपने सुख के लिये नहीं करते हैं, किन्तु प्रजा के सुख के लिये करते हैं, और नितान्त धर्मपूर्वक ही राज्यकार्य होता है। यदि इसी भांति तुम्हारा बादशाह करना स्वीकार करै तो हम राज्य को छोड़ने के लिये तैयार हैं। हम लड़कर मनुष्योंका घात नहीं करना चाहते। दूतने यह सम्पूर्ण वृत्तान्त जाकर बादशाह से कहा। बादशाह उस राजाकी न्यायभरी वार्त्ता सुनकर अत्यंत प्रसन्न हुआ और बादशाह के हृदय में उस राजा से मिलने की अभिलाषा उत्पन्न हुई। बादशाह स्वयम् राजा की सभा में आकर उपस्थित हुआ। सभा लगी हुई थी और दो कृषकों को का अभियोग प्रविष्ट था। अभियोग यह था:—

एककृषकने दूसरे कृषक के हाथ अपनी कुछ भूमि क्रय की थी। कुछ काल के उपरान्त उस क्रय की हुई भूमि में एक बड़ा भारी कोष निकला। तब तो मोल लेने वाला कृषक बेचने वाले से कहने लगा कि आपकी भूमि में एक कोष निकला है, सो वह कोष आप अपना चल कर ले लीजिये, क्योंकि हमने तो केवल भूमि मोल ली है न कि कोष। और विक्रय करने वाला कृषक कहता था कि यदि भूमि बेचने के पहिले हमारी भूमि

होते हुये कोष निकलता तब तो निःसंदेह वह मेरा कोष होता, परन्तु जब हमने भूमि आपको बेच दी तब तो वह कोष आपका ही है। राजा ने उन दोनों वादी प्रतिवादियों का यह निर्णय किया, कि तुम दोनों में जिस के लड़का और किसी दूसरे के लड़की हो तो परस्पर उनका व्याह कर, यह सम्पूर्ण कोष उन लड़के लड़की को देदो। बादशाह इस न्याय को देखकर दंग होगया। पुनः राजा ने बादशाह से पूछा कि "कहिये आप की राय में यह न्याय कैसा हुआ?" बादशाह ने कहा "यह बहुत ही वाहियात हुआ"। तब तो राजा ने कहा "भला आप इसे कैसा करते?" बादशाह ने कहा कि "हम तो इन दोनों को कारागार में भेज, सम्पूर्ण कोष अपने कोष में भेज देते।" यह सुन राजा ने पूछा "कहिये आप के राज्य में पानी वर्षता है? जाड़ा गर्मी आदि ऋतु ठीक २ समय पर होते हैं? अन्न आदि उत्पन्न होते हैं?" बादशाह ने कहा "यह सब होता है"। पुनः राजा ने पूछा कि "आप के राज्य में केवल मनुष्य ही रहते हैं या और कोई पशु पक्षी आदि भी रहते हैं?" तब तो बादशाह ने कहा "सब जीव रहते हैं।" तब राजा ने कहा कि उन्हीं पशु पक्षियों के भाग्य से चाहे वहां वर्षा, जाड़ा, गरमी, अन्न होता हो। आप

के अनुसार ही आप की प्रजा भी होगी। सो मनुष्यों के भाग्य से तो वहां वर्षा, जाड़ा, गर्मी, अन्न आदि होने की मुझे आशा नहीं।

२६ (अहिंसा)

जिस समय महाराणी कुन्ती, दुश्शासन के अत्याचार करने पर, अपने पांचों पुत्रों को ले, राजा विराट के यहां जाकर रहा थी वहां एक ग्राम में एक दानव इस प्रकार का लगा करता था जो कि सम्पूर्ण ग्राम के ग्राम नष्ट किये देता था। यह उपद्रव देख ग्रामवालों ने यह नियम कर लिया था कि हम में से एक नित्य आपके पास आजाया करेगा, पर आप ऐसा उपद्रव न करें कि एक ही दिन में ग्राम का ग्राम नष्ट कर दें और ग्राम वालों ने अपनी अपनी वारी क्रमपूर्वक बांध ली थी। एक दिन एक बुढ़िया ब्राह्मणी, जिसके एक ही बेटा था, उसको वारी आई। महाराणी कुन्ती उस दिवस किसी प्रयोजनार्थ बुढ़िया के यहां गई। बुढ़िया को रोती देखा। महाराणी कुन्ती के पूछने पर बुढ़िया ने महाराणी को सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। तब तो महाराणी कुन्ती ने बुढ़िया को अत्यन्त दुखी देख कहा कि तेरे एक ही बेटा है पर मेरे पांच हैं। आजमें तेरे बेटे के बदले में अपने बेटे को भेज दूंगी, तू दुःखी न हो। बुढ़िया को विश्वास न

आता था कि भला ऐसा कौन होगा कि जो अपने बच्चे को दूसरे के बच्चे के लिये मरवा डाले ? बुढ़िया यह सोच ही रही थी कि इतने में महाराणी कुन्ती ने अपने पांचों पुत्रों को बुलाकर यह वृत्तान्त कहा। वे पाचों पुत्र माता की आज्ञा समझ कहने लगे कि "माता मैं जाऊं, माता मैं जाऊं" महाराणी कुन्ती ने भीम को आज्ञादे कहा "बेटा ! तुम जाओ।" भीम गदा ले दो घंटा पहिले से जा विराजे।

ग्रामवालों का यह भी नियम था कि उस दानव की पूजा के लिये, बहुत से नर नारी घी, गुड़, बताशे, छोटी छोटी पूड़ियां और गुलगुले आदि ले जाते थे। ये सब के सब जिस जगह दानव आता था पहिले ही से जाकर एकत्र हो रहते थे। भीम भी वहीं पहुंचा और उन सबसे पूंछाकि "यहां सब क्यों बैठे हो ?" लोगों ने उत्तर दिया कि "हम लोग सब यह सामान ले, दानव की पूजा करने आये हैं।" भीमने कहा हम उसके खानेके लिये आयेहैं सो तुम लोग क्यों व्यर्थ बैठे हो, यह सामान सब हमें क्यों न खिलादो ? जब दानव हमें खायगा तो यह सामान भी दानव के पेट में पहुंच जायगा" गांव वालों ने वैसाही किया। भीमने सम्पूर्ण घी गुड़ बताशे पूड़ी गुलगुले खा लिये। ज्योंही दानव आया, वीर भीम ने

उसका एक पैर इस हाथमें और एक पैर उस हाथमें पकड़, टाँगें चीर फिर गदा उठाकर गर्जता हुआ माता के चरण कमलों को आकर प्रणामकर बोला कि "माता ! उसे तो मैं जन्म भर के लिये सैंत आया" माताने आशीर्वाद दिया परन्तु बुढ़िया के हृदय में ये शंका उत्पन्न हुई कि भीम मौत के भय से भग आया, अतः दानव कुपित हो आता होगा और मेरे बच्चे को खा जायगा। तब तो महाराणी कुन्ती ने कहा बुढ़िया ये तेरे क्या विचार हैं ? ये सिंहिनियों के बच्चे हैं। भला तुझे यह ज्ञान नहीं होता कि जो दूसरे के बच्चे के लिये अपना बच्चा भेजे, उस पर कैसे आंच आसक्ती है ?

फल—आजकल की मातायें अपने बच्चों की रक्षा के लिये दूसरों के बच्चों का बुरा चाहती हैं, यह महा पाप है। देखो कुन्ती ने कर दिखाया कि—जिन्दगानी चाहे तो जीव की रक्षा करे"।

(दूसरा दृष्टान्त)

यूनान के बादशाह के यहां यह नियम था कि यदि कोई मनुष्य भारी अपराध करता था तो उसे किसी सिंह के पिंजड़े में बन्द कर देते, सिंह को कई दिन भूखा रख उसके सामने पुरुष को ला कर डाल देतेथे।

एक मनुष्य ने बादशाह के यहां एक बड़ा भारी

अपराध किया और वहां से भागकर एक बड़े भयङ्कर वन में जा छिपा। उस वन में एक सिंह कि जिसके पैर में एक बड़ा बिकराल कांटा लगा हुआ था। इस का पैर पका हुआ था; इस कारण वह अत्यन्त ही दुखितथा। बेचारा पैर उठायेहुये, मुखमलीन कियेपड़ा था। इस अपराधी ने चुपके२ पीछेसे जा शेर के पैर का कांटा निकाल दिया। शेर को इतना सुख हुआ कि जैसे कोई जान निकलेहुय में जान डाल दे। पुनः शेर ने आंख उठा उस पुरुष की ओर देखा, और उसी के पीछे पीछे फिरने लगा। एक दिन वह अपराधी उस वन से पकड़ा आया। तब तो बादशाहने कहा एक शेर जंगल से पकड़ लाओ। दैव गतिसे वही शेर पकड़ा आया। वह कई दिवस भूखा रक्खा गया। फिर वह अपराधी शेर के सामने लाया गया और शेर उस पर छोड़ागया। शेर चिंघाड़ता हुआ अपराधी पर टूटा, पर पास जाके ज्योंही अपराधी को पहिचाना तो उस के चरणों पर लोटने लगा। धन्य हो ऋषि पतञ्जलि आपने क्या ही सच कहा है।

"अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सान्निधौ वैरत्यागः।"

२७ [हिम्मत और धृति]

एक बार एक सिगारने किसीसे यह शब्द सुन लिया,

कि "हिम्मत मर्दा मदद खुदा" उसने इसे अपना आदर्श बना हर बात में अपनी स्त्री सियारिन से, जहां कोई बात आपड़ती कह उठता कि "हिम्मत मर्दा मदद खुदा" कुछ दिवस के बाद उसकी स्त्री सियारिन गर्भिणी हुई। उसने अपने पति सियार से कहा कि अब मुझे कहीं ऐसे स्थान में ले चल जहां मैं अपने बच्चों को अच्छी तरह से उत्पन्न करूं। सियार सियारिन को ले जाकर एक सिंह की सथरी में जहां सिंहने अपने आराम के लिये फूंस फांस बिछा रक्खा था, ठहराया। कहा तू यहां अपने बच्चे उत्पन्न कर। शेर कई दिन तक न आया, इतने में सियारिन ने बच्चे उत्पन्न किये। एक दिन सियार और सियारिन मय अपने बच्चों के बैठा ही था कि इतने में सिंह डीकता हुआ आया। सियार ने शेर को आते देख सियारिन से कहा कि अपने बच्चे शीघ्र उठाकर चल जल्दी भग चलें। तब तो सियारिन ने कहा कि आज वह "हिम्मत मर्दा मदद खुदा" कहां गया ? सियार को बड़ी शर्म मालूम हुई और वह अपने आगे के दोनों पैर ऊपर को उठा खड़ा होगया। शेर इसे देख हैरान था कि ये कौन है, यद्यपि मैं रात दिन जंगल ही में रहता और जंगल का राजा हूं पर ऐसा जन्तु इतने आज तक नहीं देखा। इतने में सियार

अपनी स्त्री सियारिनसे बोला कि-"अरी! वन कूकरी" सियारिन ने उत्तर दिया "कहो सब जग के वैरी" यह शब्द सुन सिंह के होश हवास उड़ गये, और सोचने लगा कि सब जग में तो मैं भी हूं। अरे यह कोई बड़ा ही बलवान् जन्तु है। ऐसा समझ सिंह भाग खड़ा हुआ। सियार के सन्मुख से सिंह भगते देख जंगल भर के जीवों को आश्चर्य हुआ कि आज गजब होगया कि सियारों के सन्मुख से सिंह भगने लगे। पुनः एक बन्दर, जो यह चरित्र देख रहा था, बनराज शेर के सन्मुख जा, हाथ जोड़ बोला कि "महाराज! ये सियार हैं, जिसके सामने से आप भगे जाते हैं।" शेर ने कहा "तू बिलकुल झूंठ कह रहा है। क्या सियार हमने देखे नहीं? सियार ऐसा होताही नहीं।" बन्दर ने कहा "महाराज वह ऊपर को पैर उठाये खड़ा था। आप चलिये वह अभी भाग जायगा।" पुनः बन्दर के बहुत कुछ समझाने पर शेर ने बन्दर से कहा "अच्छा तू आगे चल तो चलूं" बन्दर तो यह निश्चय रूप से जानताही था कि वहां सियार है। निर्भय आगे चला। सियार ने जाना कि ये बन्दर जान का घातक हुआ; लेकिन अपने उस वाक्य को यादकर कि "हिम्मत मर्दां मदद खुदा" फिर खड़ा होगया। जब बन्दर

और शेर ये दोनों कुछ समीप पहुंचे, तब फिर सियार ने कहा "अरी बन कूकरी!,, सियारिन ने कहा कहो "सब जग के बैरी !,, सियार ने कहा "तेरे बच्चे क्यों रोते हैं।,, सियारिन ने कहा "मेरे बच्चे शेर खाने को मांगते हैं।,, बनराज शेर यह सुनकर फिर भाग खड़ा हुआ। बन्दर यह दशा देख हैरान था कि जब शेर इस सियार के सन्मुख से भागता है तो हम लोगों का कैसे गुजारा होगा ? अतः बन्दर फिर शेर के पीछे पड़ा और हाथ जोड़ बोला कि "महाराज ! आप व्यर्थ भाग उठते हो, निश्चय सियार है। आप के चलने से ही भग जायगा।,, सिंह ने कहा कि "सियार के बच्चे कहीं सिंह खाने को मांगते हैं ?" बन्दर ने कहा "महाराज यही तो "गीदड़ भवकी" है। अतः शेर को बन्दर ने जब बहुत समझाया तो शेर ने कहा "अब की बार हम तब चलेंगे जब मेरी पूंछ से तू अपनी पूंछ बांध ले और तू आगे २ चले। तू जात का बन्दर बड़ा चालाक है। तेरा क्या ठीक ? मुझे वहां मौत के मुख में झोंक भग खड़ा होगा।" बन्दर को कुछ भय तो था ही नहीं उस ने वैसा ही किया, और दोनों शेर की माटी की ओर चले। जब सियारने इन दोनों को इस भांति आते देखा, तो कहा अब के माण गये

अब नहीं बच सकता। परन्तु इसे अपनी कहावत फिर याद आई "हिम्मत मर्दां मदद खुदा" अतः यह फिर उसी भांति खड़ा होगया। सियार बोला कि-"अरी बनकूकरी!" सियारिन ने कहा कहो "सब जग के वैरी!" सियार ने कहा "तेरे बच्चे क्यों रोते हैं?," सियारिन ने कहा "मेरे बच्चे शेर खाने को मांगते हैं" सियार ने कहा "तो तू गुस्सा क्यों होती है?," सियारिन ने कहा "इस लिये कि बन्दर को भेजा था कि दो शेर ले आ.सो प्रथम तो आया ही बड़ी देर में है, दूसरे दो के बदले एक ही पूंछ में बांध के लाया है" शेर इतना सुनते ही बन्दर की पूंछ तक उखाड़ के भग खड़ा हुआ॥

फल—मनुष्य को आपत्ति पड़ने पर भी धैर्य नहीं त्यागना चाहिये; यथा चः—

श्लोक—

त्याज्यं न धैर्यं विधुरेऽपि काले,
धैर्यात्कदाचित् स्थितिमाप्नुयात्सः।
यथा समुद्रेऽपि च पोतभंगे,
सांयात्रिको वांछति तर्तुमेव॥

अर्थ—आपत्ति का समय आने पर भी धैर्य नहीं

छोड़ना चाहिये क्योंकि कदाचित् धैर्य से स्थिति प्राप्त होजाय, जैसे कि समुद्र में जहाज डूबने का समय आजाने पर भी उद्योग करने पर बच जाता है ॥

२८—(क्षमा)

एक रामनाथ नामक साधु ब्राह्मण अत्यन्त सदाचारी पुत्र पौत्रों से युक्त और बड़ा ही धनाढ्य, किसी ग्राम में रहता था। उसके घर के पास जो दो चार पड़ोसी रहते थे वे सब के सभी महान दुष्ट प्रकृति थे और उस के धन ऐश्वर्य तथा प्रतिष्ठा को देख कुढ़ा करते थे। वे सदैव इस चिन्ता में निमग्न रहते थे कि किसी न किसी भांति रामनाथ को क्लेश पहुंचावें, और कभी कभी वह अपनी आशा को पूरी भी कर लिया करते थे। विशेष कहांतक लिखा जाय विचारे रामनाथ की यह दशा थी जैसे कि लंकाके मध्य विभीषण ने हनुमान् से कहा था—

चौपाई—सुनहु पवनसुत रहनि हमारी।
जिमि दशननबिच जीभ विचारी॥

इस भांति साधु रामनाथ रहा करते थे, और वह दुष्ट इन्हें सदैव कटु वाक्य और गालिप्रदान तथा ऐसे ऐसे झगड़ा लगाये रहते थे कि जिससे रामनाथ बोले

और हम उसकी पूरी २ खबर लें। परन्तु साधु राम नाथ जब वे दुष्ट गालिप्रदान करते थे तो उसके उत्तर में यह कहा करते थे कि—

श्लोक—

ददतु ददतु गालीर्गालिवन्तो भवन्तो,
वयमिह तदभावाद् गालिदानेऽप्यशक्ताः।
जगति विदितमेतद्दीयते विद्यते तन्—
नहि शशकविषाणं कोऽपि कस्मै ददाति॥

अर्थ—देव देव गालि आप गालिवन्त हैं। कोई धनवन्त होता कोई बलवन्त होता आप गालिवन्त हैं। पर मेरे पास तो गालियों का अभाव है कहां से दूं और संसार में यह बात विदित है कि जो वस्तु जिसके पास होती है वही मनुष्य दूसरे को दे सकता है; न होने से कैसे दे? खरगोश अपने सींग किसी को नहीं देता। भाषा में भी कहा है-

जाके ढिग बहु गाली हैं हैं, सोई गाली दे हैं।
गाली वालो आप कहे हैं, हमरो का घटि जै है॥

परन्तु वे दुष्ट इस वाक्य के अनुसार—

श्लोक—

मधुना सिञ्चयेन्निम्बं निम्बः किं मधुरायते ।
जातिस्वभावदोषोऽयं कटुकत्वं न मुञ्चति ॥

अर्थ—जाको जैसी टेव छुटै नहिं जीव से ।
नीम न मीठी होय सिंचौ गुड़ घीवसे ॥

उद्योग कर टिकट भी बंधवादी और कई बार चोरों मे मिलजुल कर चोरी भी करादी-परन्तु आप जानते हैं कि क्षमारहित पुरुषों का स्वभाव तो एक कटोरे में पानीके समान है कि उसमें यदि और कुछ डालते ही पानी गिरने लगता है। पर क्षमावान् पुरुषों का स्वभाव समुद्र के समान है। समुद्र में चाहे पहाड़ के पहाड़ आपड़ें तो घटता बढ़ता नहीं। जैसे गजराज के पीछे चाहे कितने ही कुत्ते भौंका करें तो भी उसका क्या बिगड़ता है।

अन्ततो गत्वा उन दुष्टों के दुष्ट कर्मों के अनुसार यह दशा हुई कि दरिद्रता ने आकर ऐसा घेरा कि सबके सभी दानों दानों को दुखी होगये और भूखों मरने लगे, यह दशा देख साधु रामनाथको दया आई। इस महात्मा की भांति बोला कि—

एक महात्मा एक नदी के तट पर स्नान कर रहे

थे कि एकाएक उनके सामने जलमें एक बिच्छू दृष्टि पड़ा। महात्मा ने साधारणतः ही उसे हाथ से पकड़ बाहर करना चाहा पर बिच्छू ने अपने स्वभावानुसार महात्मा के हाथ में डंक मारा। महात्मा ने हाथ से पुनः नदी में उसे गिरा दिया। इस प्रकार बारंबार महात्मा बिच्छू को जल से निकालते और बिच्छू डंक मारता। यह चरित्र एक दूसरे ब्राह्मण ने देखकर कहा कि "महात्मा जी! इसे जाने दीजिये यह दुष्ट जीव है," तब तो महात्मा ने उस ब्राह्मण से कहा—

वह अपनी खूं न छोड़ेगी।
हम अपनी वजह क्यों छोड़ें ?

बस इसी भांति रामनाथ कहकर उन्हें भोजन देने लगा। कुछ धन की सहायता कर उन सबको व्यवहार में भी लगा दिया परन्तु इन दुष्टों ने अपनी दुष्ट प्रकृति अब भी न छोड़ी। एक दिवस साधु रामनाथ का एक बारह वर्ष का पुत्र खेलते खेलते एक वन में जो ग्राम के समीप ही था पहुंचा। इन दुष्ट पड़ोसियों ने उसे मार उसके सम्पूर्ण आभूषण उतार लिये। इस का पता साधु रामनाथ को पूर्ण रूप से मिल गया। तब तो वे दुष्ट रामनाथ जी की शरण आये और कहा हम कभी अब ऐसा न करेंगे; हमने जो कुछ किया

बहुत ही बुरा किया । " अब आप क्षमा करें । "
साधु रामनाथ ने इस कविवाक्य के अनुसार कि

श्लोक—

को हि तुलामधिरोहति,
शुचिना दुग्धेन सहजमधुरेण ।
तप्तं विकृतं मथितं,
तथापि यत्स्नेहमुद्गिरति ॥

अर्थ—सर्वथा मधुर रसके ग्रहण करने वाले महोज्ज्वल दूधकी बराबरी कौन कर सक्ता है? कोई नहीं, क्योंकि उसे चाहे कोई कितना ही तपावे, चाहे कितना ही विकृत करे और कितना ही मथे तिस पर भी प्रहारों को सहता हुआ प्रहारकर्त्ताओं के लिये स्नेह चिकनाई घी ही देताहै । शत्रुओं पर भी वह स्नेह करता है । इसी भांति साधु रामनाथने उन सबपर दया की ।

पर आप लोग यह ख्याल करें कि उन संपूर्ण दुष्टों ने सारी आयु साधु रामनाथ पर चोटें कीं परन्तु इस कविवाक्य के अनुसार कि—

श्लोक—

अतृणे पतितो वन्हिः स्वयमेवोपशाम्यति ।

क्षमा खड्गः करे यस्य किं करिष्यान्ति दुर्जनाः॥
वे दुर्जन कुछ न कर सके।

महात्मा बुद्ध को एक पुरुष ने एक दिन आके बहुत सी गालियां सुनाईं। जब महात्मा बुद्ध उस दिन गालियों को सुन न बोले, तो दूसरे दिन उसने आके दूनी गालियां सुनाईं और जब दूसरे दिन भी महात्मा न बोले तो तीसरे दिन तिगुनी और जब उस दिन भी महात्मा जी न बोले तो चौथे दिन चौगुनी गालियां सुनाईं। जब महात्मा जी फिर भी न बोले तो पांचवें दिन वह पुरुष महात्मा के पास आके चुप खड़ा हो गया। तब उससे महात्मा बुद्ध ने कहा कि बेटा! कुछ और भी तेरी इस पेटरूपी थैली में है? तो वह भी देदे। तब उसने कहा कि अब तो जो कुछ था वह सब मैंने सुना दिया पर इतनी गाली सुनाने पर भी आपने कोई जवाब नहीं दिया। तबतो महात्मा ने कहा कि जवाब तो मैं पीछे दूंगा पर इससे पहिले तुम मेरे एक सवालका जवाब देदो। यह कहकर महात्मा ने कहा कि कोई किसी के पास किसी वस्तु की भेंट ले जाय और वह उसे स्वीकार न करे तो उसका मालिक कौन होता है तो उसने कहा कि "वही जिसकी वस्तु है या जो लाया है"।

फल-धर्म का दूसरा लक्षण क्षमा प्रधान है।

२६ (दम)

एक बार महात्मा जनक के पास एक ब्राह्मण ने जाकर कहा कि महाराज! यह पापी चञ्चल मन हम को अपने जाल में निश दिन नचाया करता है। हम बहुत बहुत जोर लगाते हैं पर वह पापी हमको नहीं छोड़ता। महात्मा जनक ने यह सुनकर एक वृक्ष को पकड़ लिया और बोले कि "अगर यह वृक्ष हमें छोड़दे तो हम आप के प्रश्न का उत्तर देदें," ब्राह्मण यह दशा राजा जनक की देख हैरान होगया कि यही राजा जनक हैं जिनकी ब्रह्मविद्यामें प्रशंसा है। एक वृक्ष को पकड़े हुए कह रहे हैं कि यदि यह छोड़ दे तो हम तुम्हारे प्रश्न का उत्तर ऐसा दें। और बोले कि "महाराज जड़ वृक्ष आपको क्या पकड़ सका है? आप ही स्वयमेव पकड़े हुये हो, आप छोड़ दें आपही छूट जाय"। महात्मा जनकने कहा तुम्हें दृढ़ विश्वास है कि छूट जायगा। ब्राह्मणने कहा यह तो बिल्कुल प्रत्यक्ष है कि आप छोड़ दें तो छूटजाय। महात्मा जनक ने कहा "बस इसी भांति मन जड़ है। यह बिचारा जीवात्मा को क्या नचा सक्ता है? बस जैसे हम वृक्षको पकड़े हुए थे उसी भांति आप मनको पकड़े हुये हैं। यदि मनको

आप छोड़ दें और इसके फन्दों में न आयें तो मन कुछ नहीं कर सक्ता यानी इस जड़ मनको चाहे आप सुमार्ग में चलायें चाहे कुमार्ग में यह आपके आधीन है। यह तो सब कहने की बातें हैं कि मन बड़ा चञ्चल है, कुमार्ग में जाता है, बिना जीव के यानी तुम्हारे मन में संकल्प नहीं हो सके।

फल—मनुष्य को उचित है कि विषयों को स्वयं ही छोड़ दे।

१०—(एक महात्मा)

एक महात्मा एक ऐसे सेवक की चिन्ता में थे कि जो बिना वेतनकेलिये ही इनका काम करे। "जिन खोजा तिन पाइयां" की कहावत के अनुसार महात्मा को सेवक तो मिला, पर सेवक ने महात्माजी से कहा कि "आप हमको सदैव काम बतलाते रहें, यदि आपने किसी समय काम न बताया तो हम आपको बिना पीटे न छोड़ेंगे।" महात्माने यह प्रतिज्ञा करली। सेवक ने कहा "महात्मा जी! काम बताइये।" महात्मा जी ने कहा "शौच के लिये लोटे में पानी ले आ।" सेवक ले आया। महात्मा ने कहा "हमें कुल्हा, दन्त-धावन स्नान करा।" वह भी करा दिये। कहा यह "लंगोटा सींच डाल।" लंगोटी भी धोडाली। लंगोटी धो सेवक

ने कहा "महात्मा जी ! "और ?" महात्मा जी ने कहा "अब तो इस समय कोई काम दृष्टि नहीं पड़ता ।" महात्मा के यह शब्द कहते ही सेवक ने सोटा उठा, महात्मा के दो चार चला दिये । अब महात्मा रोते हुये, पूजापाठ छोड़, भग खड़े हुए । सेवक ने सोटा ले इनका पीछा किया । कुछ दूर चल महात्माको एक और महात्मा मिले । इन्होंने भगते हुए ही शीघ्र २ दूसरे महात्मा को सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाया । महात्मा ने कहा "बस इसी लिये आप भगे फिरते हैं ?" जिस समय आपके यहां कोई काम न रहे, इस से यह कह दिया करो कि "एक लम्बा बांस ले आ, जब ले आवे तब कहना इसे गाढ़, जब वह गाढ़ चुके तब कहना कि जब तक हम दूसरा काम न बतलावें तब तक इस पर चढ़ा उतराकर ।" महात्मा ने ऐसा ही किया । स्थान पर आ अपने सब काम करवाकर एक लम्बा बांस मंगवा कर कहा "जब तक हम दूसरा काम न बतलावें, इसी पर चढ़ा उतराकर ।" बस सेवक ज्योंही दो चार बार चढा उतरा कि थक कर शिथिल हो बोला "महात्मा जी ! अब तो चढ़ा उतरा नहीं जाता"। इसका दार्ष्टान्त यह है कि जीवात्मारूपी महात्मा को एक आसनिक सेवक की आवश्यकता होने पर इसे मनरूपी से दाम

का भृत्य मिला। परन्तु इस मन ने जीवात्मा से प्रतिज्ञा यह कराली थी कि हमको काम सदैव बताते रहना, अर्थात् सदैव काम में लगाये रखना, नहीं तो हम पीटेंगे, अर्थात् मन जब काम से रहित हो ठाली होगा उसी समय कुमार्ग में जायगा और अपने साथ जीवात्मा को ले दुर्दशा करायेगा। इस प्रकार मन ठाली होने पर जीव को कुमार्गों में लिये इस खेद रहा था। जीवात्मारूप महात्मा व्याकुल था कि इतन में दूसरे महात्मा ऋषि न उपदेश किया कि—

"प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य'॥

आदि से कि तुम श्वास प्रश्वास रूप बाँस गाड़, जब यह मन ठाली हो चञ्चलता करे तो इसपर चढ़ाओ उतारो। बस तीन चार बार प्राणायाम करन से मन शिथिल हो जाता है और इसकी चंचलता छूट जाती है।

—:○:०:○:—

३१ [अस्तेय]

अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्॥

एक बालक नित्य पाठशाला को जाया करता था। एक दिवस वह पाठशाला से किसी विद्यार्थी की पुस्तक चुरा लाया। लड़के की माता ने पुस्तक बेचकर

आम खाने को ले लिये। इसी भांति करते करते कुछ दिवस में वह चोरों का शिरोमणि बन गया। एक दिन वह चोरी करते राजा के यहां पकड़ा गया, और उस को राजा के यहां से सूली के दण्ड की आज्ञा हुई। सूली पर चढ़ते समय कितने ही पुरुष उस बालक को अवलोकनार्थ आये, और बालक की माता भी सब पुरुषों के साथ बालक को देखने आई। बालक ने अपनी माता से कुछ वार्त्ता करने को आज्ञा मांगी। माता के कान में वार्त्ता करने के समय माता के नाक कान दोनों ही काट लिये। तब तो माता बहुत ही दुखी हुई। सम्पूर्ण पुरुष यह दशा देखकर बालक को धिक्कारने लगे। तब तो बालक ने कहा कि आप लोग तो धिक्कारते हैं, परन्तु यदि मुझ ये चोरी न सिखाती तो आज सूली का समय न आता।

बस, आप लोग समझलें कि चोरी कितनी बुरी चीज़ है? इसी के त्याग को अस्तेय कहते हैं।

३२ (शौच)

सर्वेषामेव शौचानामर्थशौचं परं स्मृतम्।
योऽर्थे शुचिः स शुचिर्नमृद्वारिशुचिः शुचिः॥

एक गांव में दो सगे भाई पृथक् पृथक् रहा करते

थे। उन में से एक भाई तो बाह्य शुद्धि भी अर्थात् शौच दन्तधावन स्नान वस्त्र भी किया करता था। जिस स्थान में बैठता उसे अत्यन्त स्वच्छ रखता था और भीतर का भी कपटी न था, जिससे कि उसकी बुद्धि भी अत्यन्त तीव्र बड़े से बड़े गम्भीर विषयों को सहज ही में समझने को समर्थ थी। इसका मान भी बड़े २ पुरुषों में था। जहां यह जाकर बैठता सभी प्रसन्न रहते थे और दूसरा भाई यद्यपि बड़ा धनवान् था परन्तु यह अत्यन्त ही मलिन था यानी दन्तधावन स्नानादि का तो यह महीनों नामही नहीं जानता था। मुंहमें दुर्गन्ध आती, शरीर तथा पैर मैल से फट गये थे, और फटे टूटे वस्त्र अति मैले जिनमें मक्खियां भिनक रहीथीं, पहिरे हुये रहता था। पेट के भी कपट के खानि, सदैव (मनस्यन्यत् वचस्यन्यत् कर्मण्यन्यत् दुरात्मनः) के अनुसार ही आपकी वार्त्ता भी रहती थी। कहते कुछ, करते कुछ, जाते कहीं। इनको कोई बात ही नहीं मानता था। जिसके पास ये आप रूप जाकर बैठते थे वह इनसे अतीव ही घृणा करता था। यह बुद्धि में भी वृद्ध थे। इस कारण भंग, और तम्माखू आदि नशे तो आप के एक मात्र भूषण थे। मकान का रहने का स्थान भी बड़ा ही भ्रष्ट रहता था, इस कारण कभी २ इन पर अर्थ-

दण्ड भी होता था। कुछ इनकी बुरी रहन सहन से इनकी अप्रतिष्ठा के कारण भी इनके सभी व्यवहार बन्द हो गये। अन्त में यहां तक हुआ कि बेचारे को एक दिन के भोजनों के लाले पड़ गये। इस लोक में तो यह दशा हुई परलोक की ईश्वर जाने। परन्तु उक्त दूसरे भाई का सम्पूर्ण पुरुष प्रतिष्ठा करते तथा इसकी बात भी मानते थे। बुद्धि के लिये तो लिखा ही जा चुका है कि विलक्षण थी। यह अपनी किसान किसी युक्ति से एक राजा के पास पहुंच गया। राजा इसके ऊपर अति प्रसन्न हुआ और बहुत ही चाहने लगा। थोड़े ही काल में राजा ने उसे अपना मंत्री नियत किया। पुनः योगादि साधन करने से जब इसकी आत्मा और बुद्धि में प्रकाश हुआ तो राजा की नौकरी छोड़ वनमें एकान्त में जाकर ध्यान करने लगा—यह सब उस की पवित्रता का कारण है।

३३-[इन्द्रियनिग्रह]

एक मियां किसी गांव में सकुटम्ब रहा करते थे। मियां जी झारा फूंकी अथवा स्थानापन का काम किया करते थे। एकबार बरसात में मियां जी की तिदरी कई दिन से टपक रही थी, तब तो मियां की बीबी ने कहा कि मियां जरा इस सूराख को बन्द कर दीजिये।

मियां जी ने कहा कि बन्द करदेंगे. अभी क्या घबराहट है ? इतने में मियां जी को कहीं से झारने का बुलावा आया और मियां एक बकरकसाब को सी छुरी ले चल दिये । मियां जी की बीबी भी चुपके से पीछे २ इस लिये चलदी कि देखूं मुआ कैसा झारता है । मियां जी वहां जाकर छुरी से भूमि खोदने लगे और पढ़ते जाते थे कि "जल बांधौ जलहरि बांधौ बांधौ जल की कार्ई-जखै मीरा सैयद बांधूं हनूमान् की दोहाई— तथा आकाश बांधूं पाताल बांधूं दे तड़ाक छू।" इतने में बीबी ने एक पीछे से चपत दे तड़ाक की और कहा "मुआ यहां आकाश पाताल बांधता है, घर में जरा सा सुराख निदरी में, जो टपक रहा था, न बंधा" तू आकाश पाताल क्या बांधेगा" ?

फल--प्रथम अपने दोष दूर करो फिर दूसरों को रोको ।

३४—(धी)

एक किसी गांव में दो सगे भाई रहते थे। उन में से एक बड़ा, साधारण ही बेचारा उर्दू व थोड़ी सी अंगरेजी व साधारणतः मातृभाषा जानता था । छोटा भाई पूर्ण संस्कृतज्ञ था परन्तु बुद्धि में ये पूरे थे । बड़े भाई के गौने के दिन समीप आगये थे, परन्तु न्याया-

लय में एक अभियोग होने के कारण न्यायालय में जाना था अतःवह अपनी ससुराल नहीं जासक्ता था। इस कारण अपने छोटे भाई से कहा कि 'तुम अमुक तिथि पर जाकर अपनी भावज को विदा करा लाना, क्योंकि मुझे उसी तिथिपर अमुक अभियोग में न्याया-लय में जाना है। परन्तु वहां जाकर ठीक तौरसे बात चीत करना अर्थात् हां के स्थान में हां और नहीं के स्थान में नाहीं कहना"। इन्होंने कहा कि 'मैं क्या इतना मूर्ख हूं कि मुझे हां नहीं का भी विचार नहीं?' बड़े ने कहा तुम्हें ज्ञान तो है परन्तु मैं बड़ा हूं इस लिये मेरा समझाना धर्म था, इस से समझा दिया। छोटे ने 'हां, 'नहीं, सिलसिलेवार याद कर लिये, यानी प्रथम 'हां' पीछे 'नहीं'। अब तो भावज को विदा करा-ने चले और ज्योंही उस गांव के धुर पर पहुंचे तो इनके ससुराल के लोग मिले, और इन से पूछा कि 'कहो तुम्हारे गांव में कुशल है"। कहा 'हां,। पुनः पूछा 'तुम्हारे भाई जी तो अच्छे हैं'? कहा 'नहीं'। पुनः पूछा 'क्या कुछ बीमार हैं'? कहा हां। पुनः पूछा कि 'बचने की उम्मेद है?, कहा 'नहीं, पुनःकहा कि 'क्या इतने सख्त बीमार हैं?, कहा 'हां, पुनः पूछा कि "मौजूद हैं या नहीं'? कहा कि 'नहीं।' इतना सुन सबके

सब बड़े जोर २ से रोने लगे। सबका रोना सुन आप भी रोने लगे। अबतो सबको और भी निश्चय होगया कि इनके भाई नहीं रहे। प्रातः काल होतेही इन्हों ने कहा कि 'क्या भावज को बिदा नहीं करोगे?' उन्हों ने कहा कि दो चार दिन और चूरी बिछुये पहिरे हैं, फिर तो हम पहुंचाही देंगे। ससुराल वालों का यह उत्तर सुन यह वापिस आया। जब घर पर इसका बड़ा भाई आया तो पूछा कि 'भावज को नहीं बिदा करा लाये?'। तब इन्होंने कहा कि 'भावज तो रांड होगई, उसे कैसे लिवा लाते?,, भाई ने कहा हैं हैं यह क्या कहता है? हम बने हो हैं और भावज रांड हो गई। तब तो इस ने उत्तर दिया कि 'क्या यह असम्भव है? तुम बने रहे बुआ रांड होगई, तुम बने रहे मोसी रांड होगई, तुम बने रहे बहन रांड होगई, तुम बनेरहे चाची रांड- होगई, भावज के लिये तुम रांड होने से कैसे रोक सकते?, भाई ने कहा 'बताओ वहां क्या २ बातें हुई थीं, तब सम्पूर्ण वृत्तान्त सच्चा सच्चा कह सुनाया। तब तो बड़े भाई ने अपनी ससुराल जा सब को शांति दी।

फल—बुद्धि से सांसारिक और पारलौकिक दोनों ही कार्यों में सहायता लेनी चाहिये।

३५—(विद्या)

एक दीन कास्तकार का लड़का नित्य पाठशाला में पढ़ने जाया करता था। यह बहुत ही दीन था जिस के कारण वह अपने पढ़ने की पुस्तकादि भी नहीं ख़रीद सका था। यहां तक कि लेखनी मसीपात्र और काग़ज़ भी नहीं ले सका था। भोजनों के लिये भी पेटभर अन्न नहीं मिलता था, जिस से कि बहुत ही कृश हो रहा था। पढ़ने का उसे इतना व्यसन था कि पुस्तकादि के न होते हुए भी बड़े चाव के साथ पढ़ता था, और अपनी कक्षा के लड़कों से बड़ा ही बुद्धिमान् और होनहार प्रतीत होता था। इसकी यह दशा देख अध्यापकों के चित्त में दया आई, और उन्होंने आपस में सम्मति करके चन्दा बांध लड़के के भोजन का सामान इकट्ठा करादिया। यह बालक अपने सहपाठियों से बड़ाही मेल जोल रखता था, इस से कोई सहपाठी लेखनी मसीपात्र, कोई पुस्तकें भी दे दिया करते थे। पाठशाला के सिवा अपने घर पर भी पढ़ा करता था, परन्तु कभी २ घर में दीनता के कारण तेल का प्रबन्ध न हो सकने के कारण, यह वनमें जा खद्योतों (जुगुनू) को पकड़ अपनी टोपी में रख उन के प्रकाश से, तथा कभी कभी चांदनी में चन्द्रमा के प्रकाश से पढ़ा

करता था। इस प्रकार बड़े बड़े कष्ट उठा विद्या प्राप्त की और विद्या में ऐसा निपुण निकला कि जिसके कारण सरकार से व पाठशाला के निरीक्षकों से कई बार अनेक प्रकार के बड़े २ प्रशंसनीय प्रशंसापत्र तथा पारितोषिक भी प्राप्त किये थे। अब तो इस की विद्या की चर्चा चारों ओर धूमधाम के साथ विस्तृत हुई। यहां तक कि बड़े २ राजाओं के भी कर्णगत हुई। तब तो इसे एक बड़े राजा ने बुलाकर, इस की योग्यतानुसार अपने यहां मंत्री पद पर नियत किया। धन्य है महारानी सरस्वती! तेरी अपार महिमा है। तू ने कितने ही कंगलों को राजा और कितने मूर्खों को महात्मा योगिराज, ऋषि, मुनि, तपस्वी तथा देवता बना दिया और मुक्ति तक प्राप्त कराई-किसी कवि ने कहा है-

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनं,
विद्या भोगकरी यशःसुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः।
विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परं दैवतं,
विद्या राजसु पूजिता न च धनं विद्याविहीनः पशुः॥

—:०:—

३६—(दृष्टांत)

लण्डन के महात्मा न्यूटन से ऐसा कोई व्यक्ति न

होगा जो परिचित न हो। आप को बिल्ली पालने का बड़ा शौक़ था। अतः आपने दो बिल्लियां, उनमें एक छोटी और दूसरी बड़ी पाल रक्खी थी। वे बिल्लियां दिन भर तो इधर उधर घूमा करती थीं और रात में महात्मा न्यूटन की चारपाई के नीचे आकर सो रहती थीं, इस कारण महात्मा न्यूटन जब रात में अपने कमरे में सोया करते थे तो कमरे के किवाड़ों को जंजीर न बन्द करके किवाड़ ही भेड़ लिया करते थे कि जिस में बिल्लियां किवाड़ें खोल कर चली आयें और बिल्लियां भी जब घूम के बाहर से आती थीं तो किवाड़ें खोल अन्दर तो चली जाती थीं पर किवाड़ों को बन्द नहीं कर सकती थीं कि जिससे बिल्लियां सारी रात जड़ाया करती थीं। यह देख महात्मा न्यूटन ने सोचा कि कोई ऐसा इन्तिज़ाम कर देना चाहिये कि जिसमें बिल्लियां जड़ाया न करें। इसके लिये यह बिचारा कि अगर हम अपने कमरे के दोनों किवाड़ों में दो छेद यानी छोटी बिल्ली के लिये छोटा और बड़ी बिल्ली के लिये बड़ा करादें और कमरे के किवाड़ों की जंजीर सोने के समय बन्द कर लिया करें तो बिल्लियां ठंड से बच जांय। बस यह बिचार बढ़ई को बुलवा उससे कहा कि "ऐ बढ़ई! तुम सुनते हो? देखो यह जो दो बिल्लियां मैं ने

पाल रक्खी हैं सो रात में मैं तो यों ही साधारण किवाड़ें भेड़कर सो जाता हूं और बिल्लियां जब घूमकर बाहर से आती हैं तो किवाड़ें खोल तो लेती हैं पर बन्द नहीं कर सकीं, जिससे बिल्लियां जड़ाया करती हैं सो तुम इन हमारे कमरे के दोनों किवाड़ों में दो छेद करदो यानी छोटी बिल्ली के लिये छोटा और बड़ी के लिये बड़ा ताकि मैं शाम से किवाड़े बन्द कर सो जाया करूं और बिल्लियां छिद्रों में से अपने आप चली जाया करें"। यह सुन बढ़ई ने कहा कि "हुजूर! इसके लिये दो छेदों की दोनों किवाड़ों में क्या जरूरत है? वे तो एक ही बड़ा छेद एक किवाड़े में करने से दोनों निकल जाया करेंगी"। बढ़ई ने बहुत कुछ समझाया पर न्यूटन न माना। तब तो बढ़ई ने छेद करना शुरू किया और प्रथम एक किवाड़े में बड़ा छेद करके किवाड़े भेड़ दिये और उस एक ही छिद्रसे दोनों बिल्लियें निकल गईं। यह देख महात्मा न्यूटन उछल पड़े और बड़े ही प्रसन्न हुए और बढ़ईको बहुत कुछ पारितोषिक दिया।

फल—कभी अभिमान में आकर छोटोंकी बातका तिरस्कार न करना चाहिये क्योंकि कभी कभी छोटों के ख्याल में वह बात आजाती है जो बड़ों को स्वप्न में भी नहीं सूझती।

३७—(सत्य)

एक राजा की अत्यन्त रूपवती रानी स्नान किये हुये अपने महल की छतपर केश सुखा रही थी। इतने में कौवे ने उसके सिरपर बीट करदी। रानी को यह देख बड़ा ही क्रोध आया और तुरन्त जाकर कोपभवन में लेट रही। महाराज की यह रानी बहुत ही प्यारी थी। राजा ने महल में आते ही रानी को न देख दासी से पूछा "आज रानी जी कहां हैं?" दासी ने कहा "महाराज! रानी जो आज कोपभवन में हैं।" बस "कोपभवन सुन सकुचे राऊ। भय बस आगे परत न पाऊ"। परन्तु जैसे तैसे राजा ने वहां पहुंच रानी से कहा "कहो प्यारी! क्या हुआ, किसने तुम्हारे साथ अनुचित व्यौहार किया, किसे काल ने आकर घेरा है?" रानी ने कहा "महाराज! आज मैं महलों की छत पर स्नान किये हुये केश सुखा रही थी कि एक दुष्ट कौवे ने मेरे सिर पर बीट करदी। सो जब तक आप उस कौवे को न मरवा डालेंगे मैं अन्न जल ग्रहण न करूंगी।" महाराज ने कहा "अरी रानी! तू कैसी है? पक्षियों में क्या बोध है कि ये रानी है या साधारण स्त्री। उसने उड़ते हुये साधारणतः ही बीट की होगी और वह तेरे सिर पर पड़ गई होगी। इस

से तुझे हठ नहीं करना चाहिये।" पर रानी ने एक न सुनी और बहुत कुछ हठ किया। तब तो राजा ने कहा कि "तुम उठकर अन्न जल करो; हम कल प्रातःकाल सब कौवों को पकड़वा उनमें से उस अपराधी कौवे को मरवावेंगे।" रानी यह सुनते ही मुसकराकर उठ खड़ी हुई। राजा यह देख कर फूल गया। जब दूसरा दिन आया तो राजा ने अपने भृत्यों को आज्ञा दी कि "जाओ हमारे राज्य के सब कौवों को पकड़ लाओ।" भृत्यों ने ऐसा ही किया। जब भृत्यों ने यह आकर कहा कि "महाराज! सब कौवे आगये"। तब राजा ने इन कौवों से कहा "कहो भाई कौवो! सब कौवे आगये?" तब तो सब कौवों ने जांच पर-ताल कर कहा "महाराज! एक कौवा नहीं आया है; बाकी सब आगये।" राजा ने भृत्यों से कहा "क्यों भाई! एक कौवा नहीं आया? उसे भी शीघ्र ही लाओ।" भृत्यों ने कहा "महाराज! हम उसे कई बार बुला आये हैं, आता ही होगा। और कौवों ने आपस में सम्मति की कि "भाई! किस कौवे ने ऐसा भारी अपराध किया, जिसके कारण आज बिरादरी भर को कष्ट मिल रहा है?" अन्त में यह ठहरी कि हो न हो वही कौवा अपराधी है जो अबतक नहीं आया, और राजाने भी यही सोचा कि जो कौवा अब नहीं आया है

शायद अपराधी नहीं है। ऐसा समझ राजा उसपर अत्यन्त ही क्रोधित था कि इतने में कौवा आगया। उस कौवे के आतेही महाराजका उससे यह प्रश्न हुआ कि क्यों भाई कौवे ! ये कौवे सब जभी आगये थे तुमने इतनी देर कहां की ? कौवे ने कहा "महाराज ! अपराध क्षमा हो, मेरे पास एक न्याय आगया था, उसे चुकाने लगा था, इससे देर होगई।" राजा ने कहा "क्या न्याय था ?" तब तो कौवे ने कहा "महाराज ! एक स्त्री अपने पति से यह कहती थी कि 'मैं मर्द और तू मेरी स्त्री है, और मर्द कहता था मैं मर्द और तू मेरी स्त्री है।' मर्द और वह स्त्री दोनों हमारे पास आये, और मर्द ने मुझसे यह प्रश्न किया कि 'भाई कौवे यह मेरी स्त्री मुझे कहती है कि तू मेरी स्त्री और मैं मर्द हूं; सो कभी मर्द भी स्त्री हो सक्ता है ? तब मैंने कहा "हां हो सक्ता है।" 'जो मर्द कामवश हो स्त्री के अनुचित कहे में आ जाय और उस के कहने में चले वह स्त्री है।' राजा ने यह सुन कर सब कावों से कहा "अरे जाओरे कौवो ! तुम सब भग जाओ" राजा की आज्ञा पा सब कौवे चले गये। जब रानी ने यह वृत्तान्त सुना तो तुरन्त ही कोपभवन में जा विराजी। जब फिर राजा महल में भोजन करने गया तो रानी को न देख दासी से पूछा। दासी ने कहा "महाराज !

रानी जी कोपभवन में है" राजाने वहां जा बहुत कुछ समझाया पर रानी ने कहा "वाह कौवे की तो चलै पर हमारी नहीं चले। हम चाहें यहीं मर जांय पर जब तक आप उस कौवे को न मरवा डालेंगे तबतक अन्न अन्न जल ग्रहण न करूंगी"। राजा ने रानी को विशेष हठ देख कहा "हम फिर सब कौवोंको बुला उसे मरवा डालेंगे, तुम उठकर अन्न जल करो।" रानी पुनः प्रसन्न हो उठ खड़ी हुई। दूसरे दिन प्रातःकाल होते ही राजा ने पूर्ववत् सब कौवे पकड़ मंगवाये परन्तु वह कौवा फिर भी नहीं आया। तब तो राजा ने कहाकि निश्चय वही कौवा अपराधी है, आते ही उस कौवे को बिना वध कराये न छोड़ेंगे"। कौवा ज्योंही आया राजा ने कहा "क्योंरे कौवे! तूने इतना विलम्ब क्यों किया"? कौवे ने कहा "महाराज! अपराध क्षमा हो। एक न्याय आगया था, उसके चुकाने में इतना विलम्ब होगया"। "दो पुरुषों में विवाद था। एक एक से कहता था कि तेरा मुंह नहीं किन्तु पाखाना है। दूसरे ने कहा मुंह कहीं पाखाना होसका है?" पहिले ने कहा हां हो सका है।" उन दोनों ने मुझसे आकर पूछा कि "क्या कभी मुंह भी पाखाना होसक्ता है? तो मैंने कहा 'हां, होसकता है, जो कहकर पलट जाय या झूंठ बोले

वह मुंह पाखाना है"। किसी कविने भी कहाहै कि—

श्लोक।

दन्तिदन्तसमानं हि, निःसृतं महतां वचः।
कूर्मग्रीवेव नीचानां, पुनरायात्ययेति च॥

(अर्थ) महत् पुरुषों के वाक्य हाथी के दांतों के समान होतेहैं यानी निकले सो निकले पर नीचों के वाक्य कछुओं की गर्दन के समान कभी बाहर और कभी भीतर। किसी भाषा कवि ने भी कहा है :—

(कवित्त)

बातहि से दशरत्थ मरे, अरु बातहि राम फिरे वनजाई। बातहि से हरिचन्द्र सहे दुख, बातहि राज्य दियो मुनिराई॥ रे मन! बात विचारि सदा कहु, बातकी गात में राखु सचाई। बात ठिकान नहीं जिन की तिन बाप ठिकान न जानहु भाई॥

३८—(अक्रोध)

श्रेष्ठ पुरुष अत्यन्त ही कृशकाय, शरीर से भी बल-

वान्, पढ़ा लिखा विद्वान्, अपने घरका धनवान् और माता पिता भाई बन्धुओं आदि से भरा पुरा था। परन्तु इस में केवल दोष था तो इतना ही कि इसके स्वभाव में बड़ा भारी क्रोध था, और वह यहां तक बढ़ गया था कि जिस समय इसे क्रोध आता था तो रुद्ररूप हो अपने आपे से बाहर हो जाता था। यद्यपि इसके माता पिता भाई सब समझाया करते थे कि भैया! यह अच्छी बात नहीं क्रोध करना बड़ी बुरी बात है परन्तु इसने अपना स्वभाव न छोड़ा। कुछ तो इसका स्वभाव भी था और कुछ धन बल भाई बन्धुओं तथा विद्या आदि के कारण अपने घमण्ड के आगे किसी को कुछ समझता ही न था। अन्त में यह अपने विद्या के प्रताप से थानेदार होगया। आप बड़े तेजो तरारेके थानेदार थे। जहां जाते थे सम्पूर्ण प्रजा इनके शासन से और अनुचित जुर्मों से थर थर कांपती थी। कानिष्टबिल तथा चौकीदारों के लिये तो आप कालहीथे, यानी थोड़ासा अपराध किसी से कुछ होजाय या अपराध न भी हो केवल इतना कि इनकी वार्ता के विरुद्ध कुछ कहदे कि थानेदार साहब! ऐसा तो नहीं किन्तु ऐसा उचित है, बस ले अंदर मानों उस की खाल उड़ा दिया करते थे। गाली तो आपके मुख भूषण थी गालीबिना

गाली तो बातही नहीं करते थे। एक दिन एक सेवक से गोस्त मंगवाया और कहा इसे जरा ज्यादा मसाला तथा घी डाल बहुत अच्छी तरह से बनाना। परन्तु सेवक से हुजूर की तबियत के अनुसार न बना; अतः थानेदार साहब ने गालियों के तो पुल बांध दिये और पोटने में भी कसर नहीं रक्खा। किसी कवि ने कहा है कि:—

श्लोक!

रोहते शायकैर्विद्धं वनं परशुना हतम्।
वाचा दुरुक्तं बीभत्सं नापि रोहति वाक्क्षतम्॥

(अर्थ) बाण का घाव पूरित हो जाता है, कुल्हाड़ा से काटा हुआ वृक्ष फिर हरित हो जाता है, परन्तु कठोर वाणी का भेदा हुआ घाव पूरित नहीं होता। बस इस कविवाक्य के अनुसार सेवक के हृदय में थानेदार साहब के वाक्यों ने घाव कर दिये थे। अतः जब रात में थानेदार साहब सोये, तो सेवक ने थानेदार साहब की किर्च जो पासही रक्खी थी मियान से निकाल हजारों किर्च उनके मुंह पर मारीं यानी उनके मुंह को चावल चावल अलग कर दिया। थोड़े काल के बाद जब अन्य थाने के लोगों ने जाना तो इस सेवकको कैद कर लेगये, और इस पर अभियोग चला।

सेवक ने साफ २ कह दिया कि हुजूर हमको इसने जिस मुख से गाली दिया वही मुख हमने काट दिया तथा जिन हाथों से मारा वही हाथ काटे। किसी कविने क्या ही सत्य कहा है यथा —

श्लोक-क्रोधो हि शत्रुः प्रथमो नराणां,
देहस्थितो देहविनाशनाय।
यथा स्थितः काष्ठगतो हि वन्हिः
स एव वन्हिर्दहते च काष्ठम् ॥

अर्थ—मनुष्य के शरीर में छिपा हुआ क्रोध इस प्रकार देह के नाश का हेतु स्थित है जैसे काष्ठ के भीतर छिपी हुई आग वही प्रज्वलित होने पर उसी को नष्ट करती है। इसी भांति क्रोध प्रज्वलित होने पर क्रोधकर्ता को ले मरता है। दूसरे संसार में ऐसा कोई पुत्र चाण्डाल न होगा जो अपनी माताही को खाजाये पर यह क्रोध चाण्डाल जिस हृदयभूमि रूपी माता से उत्पन्न होता प्रथम उसे ही खाता है दूसरे को पीछे। पुनः एक कविका वाक्य है कि—

श्लोक-अन्धीकरोमि भुवनं बधिरीकरोमि,
धीरं सचेतनमचेतनतां नयामि।
कृत्यं न पश्यति न येन हितं शृणोति,

धीमानधीतमपि न प्रतिसंदधाति ॥

——::——

३९—(कर्मभोग)

——==:==——

एक राजा एक हाथीपर सवार होकर बड़ी धूम धाम के साथ चला जाता था। हाथी बहुत ही क्रुद्ध था। जिससमय किसी मध्य जंगलमें राजा हाथीसे उतरा कि त्योंही हाथी बिगड़ गया और राजा के ऊपर सूंड प्रहार करने को दौड़ा। राजा हाथी की यह दशा देख, भग खड़ा हुआ और हाथी ने भी राजा का पीछा किया, यहां तक कि राजाको एक अंधे कुंये में ले जाकर डाला। कि जिसके एक किनारे पर पीपल का वृक्ष था और वृक्ष की जड़ें कुये के भीतर फाड़ फाड़ के निकल रही थीं, जो आधे कुंये तक फैली थीं। राजा के कुए में गिरते ही राजा का पैर पीपल की जड़ों में उलझ गया। अब तो राजा का सिर नीचे और पैर ऊपरको थे। राजा की दृष्टि जब नीचेको पड़ी तो राजा क्या देखते हैं कि कुंये में बड़े २ विकराल काले २ सर्प, बिसखपरे, कछुये आदि मुंह बा रहे हैं। जिन्हें देख राजा कांप गया कि यदि जड़ से मेरा पैर कदाचित् छूटगया और कुए में गिरा [illegible]

दुष्ट जीव भक्षण कर जायेंगे। जब ऊपर की ओर दृष्टि डाली तो दो चूहे एक काला और दूसरा सफेद जिस जड़ में राजा का पैर हिलग रहा है उस को वे कुतर रहे हैं। जब राजा यह विचारता कि मैं जड़ वड़ पकड़ किसी प्रकार ऊपर ही निकल जाऊं तो मन-वाला हाथी ठोकर लगाने को ऊपर ही खड़ा है, परन्तु उस पीपल के वृक्षों में ऊपर एक शहद की मक्खियों ने छत्ता रक्खा था जिससे एक एक बूंद धीरे धीरे शहद टपकता था, और वह शहद कभी कभी इन राजा साहब के मुख में जा गिरता था। राजा ऐसी आपत्ति में होते हुए भी सारी आपत्तियों को भूल, शहद की बूंद पड़ते ही चाटने लगता; और यहां तक उस बूंद के चाटने में आसक्त हो जाता था कि इसे इन आपत्तियों का किंचित् भी ध्यान नहीं रहता कि इस जड़ के कटते ही मेरी क्या दशा होगी? मित्रो! दृष्टान्त तो यह हुआ पर इसका दार्ष्टान्त यों है कि अभी यह जीवात्मारूपी राजा कर्मरूपी हाथी पर सवार है। चाहे सुमार्ग से इसे ले जाये चाहे कुमार्ग से ले जाये; परन्तु जिस समय इस कर्मरूप हाथी से यह उतरेगा उस समय कर्मरूप हाथी इस पर प्रहार करने दौड़ेगा और इसे खेदकर माता के गर्भाशयों

रूपी अन्धे कुये में ले जाकर डालता है। परन्तु उस कुये में आयुरूपी वृक्ष की जड़ में पैर हिलग रहता है और जब यह उस जड़ में उल्टा लटका (गर्भाशय में प्रत्येक पुरुष का सिर नीचे और पैर ऊपर को रहते हैं) हुआ जब कुये में नीचे संसार को देखता है तो इसमें बड़े बड़े भयङ्कर सर्प विषखपरें कछुये यानी काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्षा, द्वेष, तृष्णा आदि सर्प कछुये मुंह फाड़े ऊपर को ताक रहे हैं कि ये ऊपर से गिरें और हम इसको अपना भक्ष्य बनावें। यह देख जीवरूप राजा अत्यन्त व्याकुल होता है, और जब यह ऊपर की ओर दृष्टि डालता है तो इसकी आयुरूपी जड़ को दो चूहा यानी सफेद चूहा दिन और काला चूहा रात इसकी आयुरूपी जड़ जिसमें इसका पैर हिलगा है काट रहे हैं और यह जब यह विचारता कि इस कुये से किसी प्रकार जड़ पकड़ निकल जाऊं तो कर्म रूपी हाथी इसके ठोकर लगाने को ऊपर खड़ा है। इस दशा में जो माखी रूप विषय, रूप, रस, गन्ध, शब्द स्पर्श इनमें यह पड़ सारी आपत्तियों को भूल जाता है। इसे यह स्मरण नहीं रहता कि आयुरूपी जड़ अभी कटने वाली है, और अन्त में मैं गिर के इन सर्प कछुओं की खुराक बनूंगा। इस लिये हम क्यों न ऐसे

कर्म करें कि जिससे हाथी खेदकर हमें गर्भाशयरूप कुयें में न डाल पायें। यानी हम लोग ऐसे कर्म करें जिससे गर्भाशयों रूप अन्धे कुओंमें न आना पड़े और हम मोक्ष प्राप्त करें।

फंस इस मायाजाल मोह में फंस जात असत् कर्म
कररहा है ये अवश्य भोगने पड़ेंगे।

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।
नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि॥

.. ..

४०—(बिना परीक्षा के विवाह)

पर हथ बनिज संदेशे खेती।
बिन वर देखे ब्याहे बेटी॥

एक सेठ जी ने अपनी कन्या, जिसकी अवस्था आठ वर्ष की थी उसके विवाह के लिये एक नाई को भेजा। जब नाई कुछ दूर चलकर दूसरे गांवमें पहुंचा, वहां लालाजी ने नाई को कुछ दे दिया, वहीं वर बिना ब्याह निश्चय कर, इसे लौटादिया। जब यह नाई इन लालाजी के यहां आया तो लाला जी ने कहा 'कहो नाऊ ठाकुर! विवाहकर आये'? कहा 'हां लालाजी! ब्याह ठीक होगया'? पुनः लालाजी ने बूझा कि "वर की

अवस्था क्या है?" तब नाऊ ठा ..ुरने उत्तरदिया "लालाजी "बीस, बीस, बीस" । " और धन वन ? " " नाऊ ने कहा 'लालाजी! धन तो इतना अधिक है कि कहीं कोई लिये जाता कहीं कोई लिये जाता पर वे कुछ देखते .ही नहीं'?'और इज्जत भलमन्सी कैसी है'? नाऊने कहा 'लालाजी चार आदमी हर समय साथ चलते हैं इज्जत मरियाद को क्या कहना'?'और वर का स्वभाव कैसा है'? नाऊने कहा 'लालाजी चाहे कोई शिकायत लावे सुनते ही नहीं। बड़ा सीधा स्वभाव है'। अब तो ब्याह बहुत ठीक हो गया, और भी जो मध्यश्री रीतें थी सब नाऊ कर करा आये। जब ब्याह का दिन आया और लड़का भांवरों में गया तो बारात वालों में से एक ने गोद में उठा, पट्टे पर बिठालदिया। तब तो लोगों ने वर को देखकर कहा, 'नाऊ! यह लड़का कैसा? तुम तो कहते थे कि बीस२ वर्ष काहै" नाऊने कहा 'लालाजी! आप न समझें तो मैं क्या करूं? हमने नहीं कहा था कि "बीस बीस बीस" पुनः लाला जी ने कहा "यह तो अन्धा भी है" नाईने कहा "सरकार ! हमने तो यह भी कहा था कि उन के यहां से चाहे कोई कुछ ले जाय, देखते ही नहीं।" पुनः पण्डित ने वर से कहा "जल ले, आचमन कीजिये।" तब तो वर ने सुना ही नहीं। तब लाला जी ने कहा

"यह तो बहिरा भी है" नाई ने कहा "लाला जी! हमने तो कहा था कि उन से चाहे कोई शिकायत करे सुनते ही नहीं; स्वभाव के बड़े सीधे हैं"। पुनः पण्डित ने कहा "आप उस पाटे पर जाइये।" तब चार आदमियों ने उठाकर बिठाया। तब तो लाला जी ने कहा "यह तो लंगड़ा भी है?" तब नाई ने कहा "लाला जी! हमने नहीं कहा था कि चार आदमी साथ चलते हैं, वह ऐसे इज्जतदार हैं"।

४१—(मनुष्य दूसरों के साथ जैसा करता है वैसा ही उसके साथ होता है)

एक वैश्य की बहू बहुत ही कर्कशा और दुष्ट प्रकृति की थी। निशिदिन कुछ काम काज न करके केवल अपनी सास से लड़ना ही उसका काम था। और यहां तक अपनी सासके साथ अत्याचार करती थी कि जो वस्त्र अपने उतरन फटे पुराने हुआ करते थे वे सास को पहिरने को देती। एक टूटी सी खाट उसके लेटने को दे रक्खी थी। और खाने को भोजन जो सब से बुरा अनाज सड़ा घुना चूनी भूसी होती थी उसकी रोटियां और दाल मिट्टी के कूंड़ों में दे दिया करती

थी, परन्तु इस बहू के भी एक लड़का था। जब यह लड़का सयाना हुआ और इसका व्याह हुआ और उस बहकी बहू आई तो यह बह अपनी सास के साथ तो दुष्ट व्योहार करती थी पर बह अपनी बहू को बड़े प्यार से रखती थी । छोटी बहू अपनी सास के अपनी सास से जो व्योहार करती थी नित्य देखा करती थी। यह बड़ी बहू अपनी छोटी बहू के आने पर अपनी सास बुढ़िया को इसी के हाथ कूंड़े में भोजन भेजती थी और यह छोटी बहू बड़ी बहू की सास यानी अजियासास को भोजन खिला कूंडा उठाकर एक दीवार से बोढ़का देती थी। इस प्रकार करते करते बहुत कूंडे जमा होगये। एक दिन इस छोटी बहू की सासने यानी बड़ी बहू ने कूंड़े देखे तो बहुत से कूंड़े जमा हैं।तब तो अपनी पतोहू छोटी बहू से बोली ब , ये कूंड़े क्यों इकट्टा करती जाती है? तमाम जगह घेर रक्खी है,इन्हें फोड़ती क्यों नहीं जाती? उसने उत्तरदिया कि "सास जी! फिर तुम्हें आगे में काहे में भोजन दिया करूंगी? कहांसे इतने कूंड़े लाऊंगी? यह सुन कर बड़ी बहू ने अपना दुष्ट व्यवहार छोड़ दिया। सच है किसी कवि ने कहा है :—

——:——

श्लोक ।

चक्षुषा मनसा वाचा कर्मणा च चतुर्विधम् ।
प्रसादयति यो लोकं तं लोकोऽनुप्रसीदति ॥

——:——

४२-(मूर्खों की समाज में पण्डितों की दशा)

एक बार एक अहीरों के ग्राम में पशुओं की बीमारी होगई थी, जिस में सम्पूर्ण पशु बां बां चिल्ला २ कर जब मरने लगे, तो अहीरों ने यत्र तत्र जा उनकी दवा पूंछी। लोगों ने इनसे कहा कि कण्डों के बड़े २ अहेरा सुलगा और ६ करछुले गरम करो। जब करछुला खूब लाल हो जांय तब जो पशु बीमार हो उसके दो करछुले पुट्टों पर और दो पीठपर और दो गर्दन पर दागने से पशु न मरेगा। अहीर ऐसा ही करते रहे। इसके कुछ दिन पीछे एक सामवेदी पण्डित बड़े सदाचारी सीधे साधे, घूमते घामते अनायास उसी अहीरों के गांव में पहुंचे। रात को एक चौधरी साहब के मकान पर सो रहे। प्रातःकाल चारबजे पण्डित जी ने उठ, सामवेद सस्वर पाठ करना प्रारम्भ किया; परन्तु अहीरों ने पण्डित जी को चिल्लाते देख ख्याल किया कि अरे

राम २ यह ब्राह्मण भी बिचारा मरा जान पड़ता है। वही पशुओं वाली बीमारी इसे भी होगई। ऐसा समझ, अहीरों ने अपने बच्चों से कहा "ओरे। जल्दी से थोड़े कण्डे और छः करछुले ले आओ"। बच्चों ने अपने पिताओं को कण्डे करछुले ला दिये। अहीरों ने अहेरा लगा करछुले आग में धर दिये। सामवेदी जी को इस कृत्य को कुछ परिणाम ज्ञात न था, अतः पण्डित जी बेचारे अपने उसी आनन्द से वेदपाठ कर रहे थे। जब करछुले लाल होगये तो पण्डित जी को एक रस्सी से बांधना चाहा। जब अहीर बांधने लगे तो पण्डित जी ने कहा कि "यह तुम लोग क्या करते हो"? कहा "आप की दवाई करते हैं" कहा "क्या हम बीमार हैं?" कहा "बीमार नहीं तो चिल्लाते क्यों हो?" पण्डित जी ने कहा "यह तो हम वेदपाठ करते हैं" कहा "इसी भांति तो पशु करते थे पर वे सब मरगये।" पण्डित जी ने कहा "हम नहीं मरेंगे, हमें छोड़ दो"। तब तो सब अहीरों ने कहा यह तो बीमारी के मारे अंड बंड बकता है। अरे भाई! तुम जल्दी दागो नहीं तो बेचारा ब्राह्मण मर जायगा। अतः अहीरों ने दो लाल तपे हुये करछुले ले पण्डित जी के पुट्ठों में, दो पीठ पर और दो गर्दन पर लगाकर सब बोले कि "पण्डित

जी! अब तो शुद्ध हो? पण्डित बेचारे तड़फड़ा रहा थे। उसने यह सुनकर एक अंगुली से मत्था ठोका कि हमारी तक़दीर जो ऐसे गांव में आपड़े, परन्तु उन मूर्ख अहीरों ने समझा कि पं० जी कहते हैं कि मेरे मस्तक में भी लगा दो। तब तो उन्होंने करछुले तपा कर दो पण्डित जी के मस्तक में भी लगादिये, और फिर पूछा कि "पण्डितजी! अब शुद्ध हो" पण्डित जी ने सोचा कि अब बोले तो ये मूर्ख दो और लगावेंगे, ऐसा समझ पण्डित बिचारे चुप रहगये, तब अहीरों ने कहा अब शुद्ध होगया।

कोलाहले काककुलस्य जाते,
विराजते कोकिलकूजितं किम्!
परस्परं संवदतां खलानां,
मौनं विधेयं सततं सुधीभिः॥

एक भाषाकवि ने क्या ही कहा है—

जाइयो जहां तहां संगत सुसंग होय कायर के संग शूर भागे पर भागे हैं। फूलन की बासना सुहास भरे बासन पै कामिनी के संग काम जागे पर जागे हैं॥ घरबसे घरपै बसो घर बैराग कहां काम क्रोध

लोभ मोह पागे पर पागे है । काजर की कोठरी में लाखहू सयानो जाय काजर की एक रेख लागे पर लागे है ।

—:*::*:—

४३-(मूर्ख को चाहे जितना समझाओ पर वह और का और ही समझता है)

एक वृद्ध पण्डित अपने पुत्र को पढ़ाते थे कि—

श्लोक-मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत् ।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यःपश्यति स पण्डितः॥

पिता—पढ़ो बेटा पढ़ो-मातृवत् परदारेषु ।

पुत्र—तो इसका क्या अर्थ हुआ ?

पिता—पराई स्त्री को माता के समान जानना चाहिये ।

पुत्र-तब तो पिताजी! मेरी स्त्री भी आप की माता होगी ।

पिता—छिः छिः छिः क्या ऐसा कहना चाहिये ?

पढ़ो-परद्रव्येषु लोष्ठवत्—पुत्र-इसका क्या अर्थ हुआ? पिता-पराई वस्तु को मिट्टी ढेले के समान

जानना चाहिये ।

पुत्र—तो अब दुष्ट हलवाई को मिठाई के दाम नहीं दूंगा क्योंकि बरफी पेड़े आदि मट्टी डेलकी समान वस्तु के दाम ही क्या ? पिता-धिक् मूर्ख ! अधिक समझ के पढ़ आगे भावार्थ में स्पष्ट हो जायगा; आगे को पढ़ (आत्मवत्सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः) पुत्र—इसका क्या अर्थ है ? पिता—जो अपनी समान सबको देखता है वह पण्डित है। पुत्र—तबतो अच्छी बात है, परको अपनी ही समान समझेंगे तो पराई वस्तु और पराई स्त्री भी अपनी ही समझना चाहिये। पिता-अरे जा मूर्ख के मूर्ख ! इसी बुद्धिपर धर्मशास्त्र पढ़ना स्वीकार किया है, इससे तो खोंनचा रखना सीखलेता तो घरका पालन तो होता। पुत्र—हट वे मूर्ख पाजी ? पिता ने थप्पड़ मारा और पुत्र लड़कों में खलने भग गया।)

एक नवयुवा स्त्री गंगाजी को घड़ा लेकर जल भरने जाती थी। इतने में ही वह धर्मशास्त्रशिक्षित बालक आया और उससे बोला कि अम्मा अरी अम्मा। स्त्री बोली—क्यों बेटा ? आ (मनही मन) इस लड़के की कैसी प्यारी बोलीहै। बालक-क्यों री अम्मा चीजखाने को एक पैसा तो दे। स्त्री-बेटा मैं तो आप

दुखिया हूं, पैसा कहांसे लाऊं। घर घर पानी भरकर पेट पालती हूं। बालक–अरी रांड पैसा क्यों नहीं देती, भला चाहती है तो जल्दी दे, नहीं तो पीटता हूं। स्त्री–यह कैसा बालक है जो गालियें देता है। बालक-नहीं देती? (लात मारी और घड़ा फोड़ डाला) इतने में गंगास्नान से लौटकर उस बालक का पिता घर को आता था सो यह चरित्र देखकर बोला—"यह क्या है? क्योंरे बदमाश! पुत्र–जाना क्या यह मेरी मा है जो मा के साथ किया करता हूं सोई इस के साथ करता हूं क्योंकि आपने सवेरे पढ़ाया ही था कि "मातृवत्परदारेषु"। स्त्री की तरफ देख कर "क्योंरी अम्मा! मेरे पिता को देखकर घूंघट नहीं काढ़ती? जो तू मेरी मा है तो मेरे बापकी भी मा है"।

आदमी आदमी में अन्तर। कोई हीरा कोई कंकर॥

——:——

४४—(विषयों की आसक्तता से बेसमझी)

एक राजा को गाना सुनने का बड़ाही शौक था। जो कोई उसके पास जाता या जिसे सुनता था कि अमुक मनुष्य गाना गाताहै तो उसे बुलाके गाना सुनता था।

एक बार एक चमार को बुलाके कहा "अरे झुन्नैयां कुछ गाना तो सुना।" चमार बोला "अरे सरकार! मैं गावबु वावबु का जानौ, मैं और जो सरकार का हुकुम होय सो खिचिमिति बजाय लावौं? सरकार मोहिका नाईं गाय आवति है। महराज मैं नाईं जानति हौं"। अबे साले कहना नहीं मानता—गा—गा—गरीब परवर मैं नाईं जानति हौं—"अबे साले गायेगा या पिटेगा?" चमार गाता है—

"मोय मारि मारि ससुर गवावति हैं" "मोय मारि मारि ससुर गवावति हैं" इतने में उस चमार की स्त्री पहुंची और वह भी गाके अपने पति को समझाती है कि—"मनमा है चांदि पिटावनकी" "मनमा है चांदि पिटावनकी" यह सुन चमार ने उत्तर दिया कि—

वह ससुरा तो समझत नाहीं तू ससुरी गनझावति है।
मोय मारि मारि ससुर गवावति है॥

राजा गाना सुन बड़े प्रसन्न हुये और दोनों को इनाम देकर विदा किया।

४५—(जिन्हें भूँकना सिखाओ वही काटने दौड़ते हैं)

एक गड़ेरिया किसी भारी अपराध में फंस गया

था! जिस में साहब जज उसे फांसी देने वाले थे। गड़ेरियाने व्याकुल हो एक वकील के पास जा अपना सारा वृत्तान्त कह सुनाया। वकील साहब ने कहा-"अगर हम तुझे फांसीसे बचादेंगे तो एक लाख रुपया लूंगा" गड़ेरिये ने कहा "आप जो चाहें वह लेलें: पर मेरी जान बचाइये! जान के आगे एक लाख क्या चीज़ है? आप एक ही लाख ले लें, पर अब की बार बचा दीजिये"। वकील साहब ने कहा जब जब जज साहब तुझ से सवाल करें तब तब सिवाय (भें भें भें) के और कुछ न कहना। अतः दूसरे दिन जब गड़ेरिये का अभियोग प्रविष्ट हुआ, और साहब जज ने कहा "क्यों रे गड़ेरिये! तूने अमुक अपराध किया" गड़ेरिये ने जवाब दिया 'भें' अबे भें करता या हम पूंछते हैं वह बतलाता है? बोल तूने अपराध किया? गड़ेरिये ने फिर भी कहा 'भें' साहब जजने कहा "वकील साहब! क्या ये पागल है।" वकील साहब-हुजूर बिलकुल पागल मालूम देता है। साहब जज—गड़ेरिये से "अबे क्या तू पागल है?" गड़ेरिया 'भें' साहब जज ने कहा "निकालो इस पागल को।" गड़ेरिया प्रसन्न हो कचहरी से निकल आया और वकील साहबने भी प्रसन्न हो कचेहरी से निकल कर, गड़ेरिये से कहा कि

"लीजिये अब तो तुम्हारी जान बचगई, अब मेहनताना दीजिये ।" गड़ेरिया 'भें' वकील साहब अरे भाई! हम से भी भें। अरे ऐसा क्यों करते हो ? गड़ेरिया 'भें' पुनः वकील साहब ने बहुत कुछ कहा तो गड़ेरिये ने उत्तर दिया वकील साहब! क्या आप पागल हुये हैं। भला जिस भें ने मुझे फांसी से बचाया क्या वह 'भें' मुझे एक लाख रुपये से न बचायेगी ? इसलिये जाइये आप अपना काम कीजिये; मेहनताने का ख्याल छोड़ दीजिये" ॥

उपाध्याये नटे धूर्ते कुट्टिन्याञ्च बहुश्रुते ।
एषु माया न कर्त्तव्या माया तैरेव निर्मिता ॥

—+—

४६—(सत्यवचन महाराज)

एक पं० जी सबको कथा सुनाया करते थे, परन्तु लोग, जो कुछ पं० जी कहा करते थे, हर बातमें "सत्य वचन महाराज" कह दिया करते थे। एक दिन पं० जी ने सोचा कि यह सब "सत्य वचन महाराज" ही कह दिया करते हैं या कुछ संभव असम्भव का भी ख्याल करते हैं यह सोच पं० जी बोले "जो है सो एक समय के बीच में एक पर्वत में छिद्र होने से सहस्रों मक्खियां

निकलती भई" लोगों ने कहा "सत्य वचन महाराज" पं० जी पुनः बोले कि "वे मक्खी जो हैं सो वहां से निकल करि करिके एक वैश्य की दूकान पर एक एक गुड़की भेली पर बैठ जाती भई" लोगों ने कहा "सत्य वचन महाराज" प०जी पुनः बोले कि "कि वे मक्खियां एक एक गुड़ को भेली को,जिस जिस पर बैठ रहीं थीं, लेकर उड़जाती भईं श्री गोविन्दाय नमोनमः"। लोगों ने कहा "सत्य वचन महाराज" बस पं० जी ने यह सुन कर समझ लिया कि ये सब बुद्धि से शून्य पूरे बुद्ध हैं॥

वचस्तत्रैव वक्तव्यं यत्रोक्तं सफलं भवेत् ।
स्थायी भवति चात्यन्तं रागः शुक्लपटे यथा ॥

४७—(असम्भव का संभव दिखाना)

एक बुड्ढा काश्तकार जो अपने घर का अकेला ही था। उसके घर में एक घोड़ा और कुछ असवाब था। काश्तकार ने असवाब कोठरी में बन्द करके तीर्थयात्रा करने का विचार किया। इस कारण अपने घोड़े को एक वैश्य को सौंपकर तीर्थयात्रा को चला गया। यहां वैश्य ने काश्तकार का घोड़ा बेच रुपया अपने में किया। जब पांच छः मास के बाद काश्तकार लौटा तब तो

काश्तकार ने सेठजी के पास जा कहा "सेठजी ! हमारा घोड़ा कहां है ? लाइये !" सेठ जी ने कहा "आप का घोड़ा मर गया" काश्तकार चुप रह गया, परन्तु कुछ काल के बाद काश्तकार को पता लगा कि तुम्हारा घोड़ा मरा नहीं बल्कि इसने बेंच लिया है, अतः काश्तकार ने पुनः सेठ से कहा दिखाओ हमारा घोड़ा कहां पड़ा है? सेठ जीने काश्तकार को लेकर बन में एक बैल मरा पड़ा था उसे दिखलाया कि "देखिये आपका घोड़ा यह पड़ा है" उसने कहा कि घोड़े के सींग नहीं होते इसके तो सींग हैं । घोड़े के दांत तो दोनों ओर होते हैं पर इस के तो एक ही ओर हैं ?" सेठजी ने कहा कि "यही तो इसे बीमारी होगई कि घोड़े से बैल हो गया॥

असम्भवं हेममृगस्य जन्म,
तथापि रामो लुलुभे मृगाय ।
प्रायः समापन्नविपत्तिकाले,
धियोऽपि पुंसां मलिनीभवन्ति ॥

———

४८—(हमारे बाप दादे से सनातन चली आती है)

एक साहूकार का लड़का खेलते खेलते एक कुए

में गिर पड़ा। साहूकार लड़के की कुए में गिरने की खबर पाकर अपने घर से एक रस्सा लेकर दौड़ा और कुये में रस्सा लटका बेटे से कहा "बेटा ! इस रस्से को अपनी कमरमें मजबूत बांध दे"। बेटे ने रस्सा बांध दिया और बाप ने उसे कुये से खींचलिया। कुछ दिन के पश्चात् एक मनुष्य एक वृक्ष पर चढ़ गया। परन्तु चढ़ते तो चढ़ गया पर उतरना उसे कठिन होगया। अतः उस ने हल्ला मचा लोगों को बुला कहा "भाइयो ! मैं इस वृक्ष पर चढ़ते तो चढ़ गया हूँ पर उतरते नहीं बनता, इस से आप लोग कृपा करके कोई ऐसी युक्ति सोचें कि मुझे कष्ट न हो और वृक्ष से उतर आऊं।" लोगों ने अपनी २ युक्तियां बतलाईं, परन्तु वह युक्तियां उस मनुष्य के जो कि वृक्ष पर चढ़ा था समझ में न आईं। वह साहूकार का लड़का भी, जिस के बाप ने उसे रस्सा बांध कुये से निकाला था वहां पहुंच गया। इसने कहा कि एक लम्बा सनका रस्सा घर से मंगवाइये, मैं इसको अभी बिना परिश्रम के उतारे लेता हूं। लोगों ने इसे रस्सा मंगवा दिया। इस साहूकार के लड़के ने रस्सा हाथ में ले ऊपर को फेंक और उस पुरुष से कहा इसे पकड़कर तुम अपनी कमर में बांधो। वृक्षस्थ पुरुष ने रस्से को कमर में बांध लिया।

अब तो साहूकार का बेटा दोनों हाथों से उस रस्से को पकड़ नीचे को खींचने लगा। वृक्षस्थ पुरुष ने कहा 'यह क्या करते हो? मैं गिरा।' वह वृक्षस्थ पुरुष दोनों हाथों से वृक्ष की डाली पकड़े यह कह रहा था 'कि महाराज! मैं गिरा' परन्तु साहूकार के बेटे ने कहा कि 'आप निश्चय रखिये, गिरोगे नहीं। रस्से में बांधकर खींचना तो हमारे बाप दादे से चला आता है।' ऐसा कह वृक्ष से खींच लिया और वृक्षस्थ पुरुष नीचे गिरतेही मर गया। लोगों ने कहा 'आप तो कहते थे कि यह तो बाप दादे से चली आती है, यह क्या हुआ, क्यों मरगया?' कहा 'कलियुग भी है'।

यस्यास्ति सर्वत्र गतिः स कस्मात्,
स्वदेशरागेण हि याति नाशम्।
तातस्य कूपोऽयमिति ब्रुवाणाः,
क्षारं जलं काः पुरुषाः पिबन्ति ॥

४६-(कलियुग)

एक वैद्यजी बड़े ही योग्य और अपने ग्राम के चारों ओर प्रसिद्ध थे। वैद्यजी के एक पुत्र अत्यन्तही रूपवान् और बड़ा ही चंचल था। वैद्यजी ने अपने पुत्र के पढ़ाने का बहुत कुछ प्रयत्न किया, परन्तु उस ने एक

अक्षर भी न सीखा। कुछ काल के पश्चात् वैद्यराजका देवलोक होगया, जिस से कि सारा व्यवहार बन्द होगया। अब तो वैद्यराज के पुत्र सोचने लगे कि इस प्रकार बैठे २ कैसे काम चलेगा? अतः सोचा कि झोला अर्थात् ओषधियों की पोटरी वही दादाजी वाली मौजूद है और गद्दी दादाजी वाली मौजूदा और हाथ हमारे मौजूद फिर वैद्यकी क्यों बद करदी जाय? यह विचार लोगों को औषधि देने लगे, परन्तु फल उलटा होने लगा। वह यह कि जहां वैद्यराज के समय में लोग औषधि से अच्छे हुआ करते थे वहां इन वैद्यराज जी के पुत्र की औषधि से लोग मरने लगे। और यह होना ही था। तब तो लोगों ने इन वैद्यराज के पुत्र से कहा 'महाराज! आपके पिता के समय में तो लोग अच्छे होजाते थे पर जब से आप औषधि करने लगे तब से जिसकी आप औषधि करते वही मरजाता है यह क्या बात है? वैद्यराजके पुत्रने उत्तर दिया कि भाई झोला वही, औषधि वही, गद्दी वही, लेकिन अब कलियुग भी है, इस लिये लोग विशेष मरते हैं। याद रहै कि काल सुख दुःख का कारण नहीं, यदि है तो उस काल में सब की एक ही दशा होनी चाहिये, पर यह नहीं होती। इस से निश्चय है कि काल सुख दुख का कारण नहीं है॥

५०-[गुरुसेवा]

एक मौलवी साहब एक सेठके लड़केको पढ़ाया करते थे। मौलवी साहब बच्चे से कहा करते थे "अबे कभी कुछ लाता नही" बच्चा उत्तर देता था कि मौलवी साहब ! लाऊंगा। एक दिन उस सेठ के लड़के के यहां खीर बनाई गई. और अचानक एक कुत्ता ने आ कर वह खीर जुंठार डाली। जब सेठ जी का लड़का मौलवी साहब के यहां से पढ़कर आया तो उस लड़के की माता सेठानी जी ने कहा "आज चाहो तो अपने मौलवी साहब को खीर दे आओ"। बच्चे ने कहा लाओ बहुत अच्छा है। मौलवी साहब को खीरदे आवें। माता ने एक कूंडे में खीर परोस कर बेटे को देदी। बच्चा खीर लेकर मौलवी साहब के यहां पहुंचा। मौलवी साहब खीर देखकर बहुत ही प्रसन्न होगये और खाने के समय बोले कि "बच्चा क्या तुम्हारी मां मुझपर प्रसन्न है, जो ऐसी बढ़िया खीर भेजी"। बच्चा बोला कि 'नहीं यह बात नहीं बल्कि आज हमारे यहां यह खीर पकी थी, परन्तु मेरी मा कुछ काम करने लगी, इतने में कुत्ते ने आकर इस खीर को जुठार दिया, इस लिये मा ने कहा कि आज यह खीर मौलवी साहबको देआओ" यह सुनकर मौलवी साहब ने क्रोध में आ बच्चे का खीर

वाला कूंडा ऐसा जोर से फेंका कि कूंडा फूट गया। जब कूंडा फूट गया तो बच्चा जोर २से रोने लगा। तब मौलवी साहब ने कहा 'अबे रोता क्यों है' बच्चे ने कहा 'मेरी मा मारेगी'। मौलवी साहब ने कहा 'बच्चे हम कूंडा तुझे मंगवा देंगे,। बच्चा बोला 'आप क्या मंगवा देंगे? हमारा भाई इसी में रोज पाखाने जाया करताथा'। यह सुन मौलवी साहब बहुत शरमा गये ॥

गुरुशुश्रूषया त्वेवं घर्षणं न तु मृत्कणः ॥१
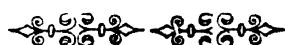
५१-[बिना जाने हितकारी वस्तु को छोड़ देना]

[टेढ़ी खीर]

अहिताहितविचारशून्यबुद्धेः
श्रुतिसमयैर्बहुभिस्तिरस्कृतस्य।
उदरभरणमात्रकेवलेच्छोः
गुरुपपशोश्च पशोश्च को विशेषः ॥

एक स्थान में एक अन्धा बैठा हुआ था। लोग उसके सामने खीरकी बहुत कुछ प्रशंसा किया करते थे। अन्धे ने कहा भाई! खीर कैसी हुआ करती है। लोगों ने उत्तर दिया कि सफेद सफेद। अन्धेने कहा सफेद

सफेद कैसी ? लोगों ने कहा "जैसा बगुला ?" अन्धे ने कहा "बगुला कैसा होता है" ४-६ आदमियों ने हाथ उठा के कहा "जिस प्रकार बगुले की टेढ़ी गर्दन होती है"। पुनः अन्धे ने कहा "देखें कैसी खीर होती है ?" जब अन्धे ने उसका हाथ टटोला तो कहा 'यह तो टेढ़ी खीर है, यह हम कैसे खा सकेंगे ? यह तो गले में हिलगेगी' ॥

—::+::—

५२—(सेखचिल्ली)

एक सेखचिल्ली साहब एक स्टेशन पर रहा करते थे। एक दिन एक मियां जी एक राबका घड़ा लेकर उतरे। मियां जी ने सेखचिल्ली से कहा "अबे इसे शहर ले चलेगा ?" सेखचिल्ली ने कहा "हां हुजूर।" मियां ने कहा "दो पैसे मिलेंगे।" सेखचिल्ली ने कहा "दो ही देना" मियां ने सेखचिल्ली के सिर पर घड़ा रखवा आगे २ आप चले और पीछे २ सेखचिल्ली चला। अब सेखचिल्ली की मन्सूबेबाजी देखिये। सेखचिल्ली सोचता है कि 'इस घड़े की शहर में रखवाई मुझे दो पैसे मिलेंगे; उन दो पैसों की एक मुर्गी लूंगा, और जब मुर्गी के अण्डे बच्चे होंगे तो उन्हें बेचकर एक बकरी लूंगा, और जब बकरी के बच्चे होंगे तो उन्हें बेचके एक गौ लूंगा, और जब गऊ के बच्चे होंगे तो

उन्हें बेचकर एक भैंस लूंगा, और जब भैंस के बच्चे होंगे तो उन्हें बेचके ब्याह करूंगा। फिर मेरे भी बालक बच्चे होंगे और वे बच्चे जब मुझ से कहेंगे कि 'दादा हमको फलां चीज़ लेदो' तो हम कहेंगे 'धा बदमाश !' इस शब्द के ज़ोर से कहने में सिर से घड़ा गिर गया और फूट गया। यह देख मियां जी बोले "अबे! तूने यह क्या किया ? घड़ा क्यों फोड़ दिया?" सेखचिल्ली कहता है "अजी मियां आप को तो घड़े की पड़ी है, यहां तो बना बनाया घर बिगड़ गया"।

—: :—

५३—(मूर्खता की छड़ी)

एक बार एक राजा साहब के यहां एक महात्मा जी पहुंचे। राजा साहब ने उनकी बड़ी सेवा की, और जब महात्माजी चलने लगे तो राजा साहब ने महात्मा को एक छड़ी देकर कहा "महाराज! आप भ्रमण किया करते हैं; दुनियां में जो सब से विशेष मूर्ख आप को मिले उसे ही यह मेरी छड़ी दे देना।" महात्माजी छड़ी लेकर चले गये। बहुत कालके पश्चात् जब राजा के मरणेका समय आया तो उक्त महात्माजी राजा साहब के यहां फिर आये, और राजा साहब से मिलकर अन्य वार्ता होने के पश्चात् राजा साहब से

पूछा कि "राजा साहब ! यह राज्य पाट क्या आप के साथ जायगा ?" राजा ने कहा 'नहीं।' महात्मा ने कहा 'यह महल अटारी आपके साथ जायगा ?' राजा ने कहा 'नहीं।' महात्मा ने कहा 'धन सम्पत्ति, माणिक मोती, आप के साथ जायंगे ?' राजा ने कहा 'नहीं।' महात्मा ने कहा 'यह फ़ौज फ़र्रा हाथीघोड़े क्या आप के साथ जायंगे ?' राजा ने कहा 'नहीं।' महात्मा ने कहा 'यह स्त्री भाई बन्धु क्या आपके साथ जायंगे ?' राजा ने कहा 'नहीं।' महात्मा ने कहा 'यह तेरा शरीर तेरे साथ जायगा ?' राजा ने कहा 'नहीं।' फिर तेरे साथ कोई जाने वाला है; क्या किसी साथी को तूने संसार से लिया ?' राजा ने कहा 'नहीं।' तब तो महात्मा जी ने कहा कि "राजा साहब ! यह अपनी छड़ी लीजिये; आप से विशेष मूर्ख और हमें नहीं मिल सका।" किसी कवि का वाक्य है—

श्लोक—धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे
नारी गृहद्वारि जनः श्मशाने ।
देहाश्चितायां परलोकमार्गे,
धर्मानुगो गच्छति जीव एकः ॥

५४-(ईश्वर के व्यापक जानने और सच्चे

विश्वास होने से कभी मनुष्य पाप नहीं कर सकता)

एक गुरु के पास दो मनुष्य चेला होने को आये। गुरु जी ने कहा कि 'हम तुम दोनों को एक खिलौना देते हैं, सो तुम खिलौनों को लेकर ऐसी जगह में जहां कोई न हो, तोड़ लाओ; तब हम तुमको अपना चेला बनालेवेंगे ?' दोनों चेले अपना अपना खिलौना तोड़ने के लिये लेकर चले। एक चेले ने तो गुरुजी के मकान के पीछे जा, और चारों तरफ देखा कि अब कोई नहीं है, खिलौना तोड़ कर लाकर रख दिया। दूसरे ने खिलौना को लेकर सारा संसार ऊंची से ऊंची पहाड़ की चोटियां, और गहरी से गहरी समुद्र की सतह, और एकान्त से एकान्त अंधेरी कोठरियां, तथा बड़े बड़े भयानक वन रूंद डाले, परन्तु उसे कहीं ऐसा स्थान न मिला जहां खिलौना तोड़ता। अतः दूसरे ने वैसाही खिलौना लाकर रख दिया। गुरु ने पहिले से प्रश्न किया कि "क्योंजी ! आपको कहां ऐसा स्थान मिला जहां पर खिलौना तोड़ लाये ?" उस ने कहा "गुरुजी ! मैं तो आप के मकान के पीछे गया, वहां कोई न था, बस मैंने खिलौना तोड़ आप के आगे लाकर रखदिया।" दूसरे से कहा "क्यों भाई !

तुम्हें कोई ऐसा स्थान नहीं मिला जहां से खिलौना तोड़ लाते, तुमने क्यों लाकर वैसाही रख दिया ?" इस दूसरे ने उत्तर दिया कि "महाराज ! मैंने ऊंची से ऊंची पहाड़ों की चोटी, गहरी से गहरी समुद्र की सतह, अन्धेरी से अन्धेरी एकान्त कोठरियें, और बड़े बड़े भयानक जंगल घूमें, परन्तु ऐसा स्थान कहीं न मिला जहां दूसरा न होता। महाराज—

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः,
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा ।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः,
साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ॥

एकोहमस्मीत्यात्मानं यत्त्वं कल्याण मन्यसे ।
नित्यं स्थितस्ते हृद्येष पुण्यपापेक्षिता मुनिः ॥

इस लिये नहीं तोड़ा"। महात्माने इसे हो अपना चेला बनाया और दूसरे से कहा "तू अभी इस योग्य नहीं" ॥

५५-(व्यर्थ विवाद)

एक ससुर दामाद दोनों किसी खेत में हल चला रहे थे। ससुर ने कहा अमुक ग्राम यहां से ४ कोश है,

दामाद ने कहा "तीन कोश है"। ससुर ने कहा 'नहीं, चार कोश' दामाद ने कहा "नहीं तीन कोश"। उन दोनों में युद्धकाण्ड प्रारम्भ होगया। युद्ध होही रहा था कि इतने में उसकी लड़की, जो अपने दामाद से लड़ रहा था आई। और बोली "पिताजी! क्या है?" बाप बोला 'बेटी! अमुक गाम यहांसे चार कोश है; और यह कहता है तीन ही कोशहै। एक कोश हमारा मुफ्त ही में लिये जाता है'। बेटी ने कहा "पिता जी! आपने तो हमें हमारे व्याह में बड़ी बड़ी चीजें दीं, अब क्या एक कोश भी न दोगे?' पिता बोला 'इस तरह एक कोश क्या चाहे चारों लेले पर यह तो मुफ्त में ही लिये जाता था' ॥

५६.(इसी विषय का दूसरा दृष्टान्त)

एक बार दो काश्तकार अफीमचियों ने सलाह की कि यारो! इस साल हम तुम दोनों साझे साझे ईख बोवेंगे। उन में से एक बोला कि 'यार हम तो एक गन्ना उसमें से नित्य चूंसा करेंगे, दूसरे ने कहा 'यार! हम दो नित्य चूसा करेंगे।' पहिले ने कहा "तो हम तीन चूसेंगे'। दूसरे ने कहा 'तो हम चार चूसेंगे' उस ने कहा 'तो हम पांच रोज चूसेंगे' उसने कहा 'हम ६ रोज'। उस ने कहा 'हम ७ रोज चूसेंगे

तू ६ क्यों चूसेगा ?' उस ने कहा 'तूने क्यों कहा कि हम ५ रोज चूसेंगे।' इस प्रकार दोनों में खूब ही घोर युद्ध हुआ। अब अदालत में मुक़द्दमा गया तो मजिष्ट्रेट ने कहा 'तुम दोनों ने हमारी जमीन में ईख बोके खूब ही चूंसी, इस लिये बीस बीस रुपये लगान के दोनों दाखिल करो'॥

शतं दद्यान्न विवदेदिति विज्ञस्य सम्मतम्।
विना हेतुमपि द्वन्द्वमिति मूर्खस्य लक्षणम्॥

५७-(मनुष्य पञ्च किसप्रकार बनसक्ता है)

एक महानंद नामक पुरुष था जो थोड़ा ही पढ़ा लिखा था। दीन यहां तक था कि जिसके निज का मकान भी न था। एक सिवाले की कोठरी में किसी राज्य में जयपुर की ओर से रहा करता था। एक दिन उसके ग्राम में दो मनुष्यों में कुछ झगड़ा हो रहा था। महानंद बीच में कुछ बोल उठा। तब तो उन दोनों झगड़ालुओं ने महानंद से कहा कि तू कहां का पंच है जो बीच में बोलता है? यह सुनकर महानन्द ने सोचा कि पंच कोई बड़ी अच्छी चीज़ है। बस यहीं से महानंद जी के हृदय में पञ्च बनने का ख्याल हुआ, और यहां तक कि पञ्च बनने के लिये महानंद ने खाना पीना

सोना सब कुछ छोड़ दिया। उदासीनवृत्ति निशिदिन पञ्च बनने के उपाय सोचा करता था। महानंद की स्त्री ने महानंद की यह दशा देख उससे कहा कि "स्वामिन्! आप भोजन न करने, जल न पीने वा न सोने या दिन रात शोक में रहने से थोड़ा ही पंच बन जायगे? इस लिये आप अच्छी तरह भोजन कीजिये और प्रसन्न रहते हुए आप को जो उपाय मैं बताऊं सो कीजिये। तब आप पञ्च बनेगें"। महानन्द तो इस चाह में ही था इस लिये कहा "प्रिये! बतलाइये वह क्या उपाय है"? स्त्री ने कहा "आप अपने निज के कामों अर्थात् भोजन वस्त्र के उद्योग के सिवाय जितना समय आप को मिले उस समय में आप विना किसी अपने स्वार्थ के केवल परस्वार्थ और संसार के उपकार के लिये सबका हित किया कीजिये। और वह बचा हुआ समय ग्राम के लोगों के कामों में लगाइये, बस कुछ दिन में आप पञ्च बन जायगे"। महानंद ने यह व्रत धारण कर लिया, यानी अपने भोजन वस्त्र के उद्योग के इतर जितना समय बचता था उसमें महानंद गांव में जिस किसी के यहां लड़का लड़की का विवाह होता था, जाकर विना कहे, उसके काम करता, जो कुछ कमाने में द्रव्य बचता भूखों को दिया करता, किसी को बीमार सुनता था तो उसके पास जा बैठता,

उसके काम करता, कोई मरजाय उसके साथ जाता आदि २ परहित किया करता था। उसी ग्राम में एक खत्रानी जो अपने घरकी करोड़पती थी रहती थी। इस के एक ही बेटा था। यह बेटा बहुत ही बीमार होगया और इस खत्रानी के पुत्र के पास जितने पुरोहितादि रहते थे उन सब की ये नियतथी कि अगर यह मरजाय तो द्रव्य सब हमी लोगों को मिले। यह समाचार किसी प्रकार खत्रानी ने जान लिया। खत्रानी ने एक बुढ़िया से यह सब वृत्तान्त कहा। बुढ़िया ने कहा "इस ग्राम में एक महानन्द नामक पुरुष, जो बड़ा ही परोपकारी है, रहता है। यदि उसे ख़बर हो जाय तो आप के लड़के के पास रहेगा और बड़ी अच्छी प्रकार औषधि आदि का प्रबन्ध करेगा" खत्रानी ने उसी बुढ़िया के द्वारा महानन्द को ख़बर करादी। महानन्द आकर हर प्रकार से उस खत्रानी के पुत्र की सेवा, औषधि आदि का प्रबन्ध करने लगा, और खत्रानी ने पूर्व पुरोहितादि सब निकाल बाहर किये। कुछ दिन के बाद खत्रानी के पुत्र को आराम होगया। तब तो खत्रानी के हृदयमें यह ख्याल पैदा हुआ कि इसने हमारे पुत्र की सेवा बहुत कुछ की है, अतः इसे कुछ देना चाहिये। यह सोच खत्रानी १० हजार रुपया महानन्द को देती रही, परन्तु

महानंद ने खत्रानी के बहुत कुछ प्रार्थना करने पर भी न लिया। अब उस खत्रानी के पुत्र के हृदय में यह भाव उत्पन्न हुआ कि यदि महानन्द रुपया नहीं लेता तो इसके उपकार का कुछ प्रत्युपकार करना चाहिये। इस उद्योग ही में था कि उस खत्रानी के पुत्र को मालूम हुआ कि महानन्द के हृदय में पंच बनने का ख्याल है। बस खत्रानी के पुत्र करोड़पती ने अपने मनमें यह ठहरा लिया कि में उसे पंच बनाऊंगा और खत्री का पुत्र राजा की सभा का मेम्बर था, अतएव अब जितने भी मामले इस खत्री के पुत्र के यहां आते सबमें महानन्द को मध्यस्थ किया करता। इस प्रकार महानन्द का तमाम बस्ती में शोर होगया। अब के बार जब राज्य में पंचों का चुनाव हुआ तो महानंद का नाम आया परन्तु कुछ लोगों ने महानंद के पंच बनने में विरोध किया, इस कारण महानंद पंच न बन सका। तब तो लोगों ने महानंद जी से कहा कि "अब आप पंच बनने का उद्योग छोड़ दें। देखो आया आया नाम जब आप नहीं चुने गये तो आप पंच नहीं हो सके"। महानंद ने कहा "जहां हमें कोई पूछता ही न था वहां हमारा नाम तो आया तो आगे पञ्च बन जाऊंगा"। महानंद उसी भांति अपना काम करता रहा। अगले वर्ष लोगों

ने महानंद को पंच चुन लिया। कुछ लोगों ने राजा के पास जाकर शिकायत की कि "महाराज! पंच की बड़ी जिम्मेदारी है। लोगों ने एक महानंद को जिस के घर बार कुछ नहीं, महाकंगाल, न कुछ पढ़ा न लिखा, उसे पंच चुना है" राजा यह सुन कर हैरान हुआ कि जब उस में कोई गुण नहीं फिर लोगों ने उसे पंच क्यों चुना। राजा ने ग्राम के लोगों को बुलाकर पूछा कि "जब महानंद में न विद्या है, न धन है, न बल है, फिर आप लोगों ने उसे पंच क्यों चुना"? लोगों ने राजा को उत्तर दिया कि "विद्या तो हम तब देखते जब हमें उससे पढ़ना होता, और बल हम तब देखते जब हमें उससे युद्ध करना होता, और धन हम तब देखते जब हमें कर्ज लेना होता। हमें तो ऐसा पंच चाहिये जिस में इन्साफ का ख़्याल हो। अन्याय वा जब्र किसी पर न हो। सो यह गुण महानंद के बराबर ग्राम भर में किसी में नहीं"। राजा साहब को महानंद के गुण सुन के बड़ा ही प्रेम हुआ। राजा ने महानंद को बुला बड़ी सेवा की और १० मौजे जागीर बख्श दिये पर महानंद जी जैसे पहले अपनी टूटी फूटी झोंपड़ी में रहते थे और ५) रु० माहवारी में अपना निर्वाह करते थे इसी प्रकार करते रहे। और १० गांव जागीर

वालों में जो मुनाफ़ा होता था उनके विषय में महानंद बोला कि यह जागीर मुझे प्रजाहित करने से मिली है, अतः यह जागीर मेरी नहीं, किन्तु प्रजाहित की है; इस लिये इन दश गांव जागीर वालों का मुनाफ़ा सब प्रजा हितकी में लगाऊंगा। और ऐसाही करता रहा। ऐसा बर्त्ताव महानन्द का देख अगले वर्ष में सर्व लोगों तथा राजा ने महानन्द जी को पच क्या बल्कि सरपञ्च नियत किया॥

सह गन्तव्यं स्थातव्यं पचभिः सह।
पञ्च २ वक्तव्यं विरोधन्नैव पञ्चभिः॥

——————

५८—(स्वार्थ और परसन्ताप)

एक वैश्य, जिनका नाम, लाला स्वार्थीमल था, फ़सादनगर नामक ग्राम में रहा करते थे। लाला स्वार्थीमल यथानाम तथागुण ही थे। इनकी एक कपड़े की दूकान बीच बाज़ार में थी। इनका सदैव यही ख्याल रहा करता था कि यदि किसी का भला हो तो मेरा कपड़ा बिके। इनका काम यह था कि प्रातः काल से जाकर दूकान पर बिराज जाते, और हाथ में

एक माला ले "राधे श्याम राधे श्याम" जपा करते थे। जब देखते थे कि अब ग्राहक लोग वे जा रहे हैं, तो बड़े उच्च स्वर से "राधे श्याम २" का महा-मंत्र उच्चारण करते थे। जिसमें साधारण ही ग्राहकों की दृष्टि लाला स्वार्थीमल की ओर जाती थी। जिस समय ग्राहकों की दृष्टि इनकी ओर पड़ती थी, तो ये हाथ उठा अंगुलियों के संकेत से ग्राहकों को बुला लिया करते थे। जब ग्राहक पास आते थे तो ये पूछा करते थे "क्या लेना ?" तो उत्तर देते कपड़ा [illegible] तब स्वार्थीमल कहते थे "लीजिये, यह तो [illegible], घरकी दूकान है और बाजार भर में तुम्हें ऐसा [illegible] कपड़ा नहीं मिलसकता"। इस प्रकार ये ग्राहकों को मूड़ते और जो ग्राहक दूसरी दूकानों से कपड़ा ले इन की दूकान के सामने से निकला करते थे जब भी ये अपने महामंत्र "राधे श्याम" को उच्चस्वर से उच्चा-रण करते। जब उनकी दृष्टि इनकी ओर पड़ती तो संकेतसे ग्राहकोंको बुला पूछतेथे कि यह कपड़ा कितने गज लाये ? जब ग्राहक उत्तर देते थे कि इतने गज। तब लाला स्वार्थीमल बुरा मुंह बना पिचकाते थे। तब ग्राहक प्रश्न करते थे कि "लाला जी क्या है" तो स्वार्थीमल उत्तर देते थे कि "भाई तुम्हारी रुचि है कि तुम ये

कपड़ा ।) आने गज ले आये ; हमारे यहां से आप यह ≡)॥ लेजाइये,कपड़ा चाहे ।) चार ही आने गज का हो, पर लाला स्वार्थीमल की युक्ति यह थी कि एक आध-बार घाटा खाकर भी वे ग्राहक को अपना बना लिया करते थे। इस प्रकार लाला स्वार्थीमल बड़े धनाढ्य होगये थे, पर आप लोगों को याद रहे कि धर्मशास्त्र में लिखा है :—

श्लोक

अन्यायोपार्जितं द्रव्यं दश वर्षाणि तिष्ठति।
प्राप्ते तु षोडशे वर्षे समूलं च विनश्यति॥

अधर्म से जोड़ा हुआ धन कभी ठहरता नहीं। पापों की पूंजी कभी किसी को पची है ? अतः लाला स्वार्थीमल के यहां कुछ तो चोरी हुई, कुछ राजा ने डांड़ लिया, कुछ पुलिस ने हाथ साफ किया, रहा रहागया अग्नि ने स्वाहा कर दिया । अन्त में दशा यह हुई कि लाला स्वार्थीमल दो दो पैसे की मजदूरी करने लगे। लाला स्वार्थीमल जी (राधाकृष्ण) के उपासक तो थे ही। एक बार राधाकृष्णजी प्रसन्न हो के बोले कि लाला स्वार्थीमल मांगो तुम जो कुछ तुम्हारी इच्छा हो। लाला स्वार्थीमल मांगने वाले तो यह थे कि महा-

राज हम अपने पड़ोसियों से सदैव दूने रहें। पर कोस बैठे ये कि हम से पड़ोसी सदैव दूने रहें। राधा कृष्णने स्वार्थीमल जी को एक "घण्टा" देकर कहा जब तुम्हें जिस चीज की आवश्यकता पड़े घन्टा आप को सम्पूर्ण पदार्थ देगा और जितनी चीज तुम्हें देगा उससे दूनी पड़ोसियों को देगा। जब लाला स्वार्थीमल घंटा ले रास्ते में आये तो ख्याल हुआ कि हाय हम राधेश्याम से क्या मांग आये कि पड़ौसी हमसे सदैव दूने रहें। खैर जो कुछ हुआ, लेकिन जब हम घण्टाही न बजायेंगे तो पड़ोसी कैसे दूने होंगे। चाहे हम जो दो दो पैसे की मजदूरी करते थे वही करते रहे, पर पड़ौसी कैसे दूने होजांय? यह विचार (घटा) बांध के कोठरी में बन्द करदिया और अपनी स्त्री से कहा "देख! हम तो परदेश नौकरी के लिये जाते हैं पर तू कभी इस घंटे को न खोलना"। जब लाला स्वार्थीमल चले गये और लाला जी के यहां एक दिन खाने को कुछ न रहा, स्त्री को इस भांति दो व्रत हुये तो तीसरे दिन स्त्री ने सोचा कि और तो मेरे यहां कुछ है ही नहीं। यह घंटा पड़ा हुआ है, इसे ही बेच लावें, तो दो चार आने पैसे मिल जांयगे; जिस से एक आध दिनका निर्वाह होगा, फिर देखा जायगा।

इस ख्याल को लेकर स्त्री ने घण्टा खोला तो घंटा बज गया। बस घंटे के बजते ही चार आने इसे मिलगये और आठ आठ आना पड़ोसियों को मिले। जब स्त्री को दो चार दिन पैसे मिलते रहे स्त्री ने समझ लिया कि ये घंटे में ही गुण है अतः स्त्री पांचवें दिन घण्टा ले बैठी और बोली कि "या घंटेश्वर! आज हमको १० ग्राम मिल जांय"। १० ग्राम मिले इसे और बीस बीस पड़ोसियों को मिले। इसने कहा "या घण्टेश्वर! हमारा तिखण्डा मकान बन जाय" इनका तिखण्डा पड़ोसियों के सतखण्डे बन गये। इस ने कहा "या घंटेश्वर! हमारे यहां इतनी फौज होजाय"। जितनी इसके यहां हुई, दूनी पड़ोसियों के यहां होगई। इसने कहा 'या घण्टेश्वर! हमारे दरवाजे इतने इतने घोड़े हाथी होजांय'। जितने इसके यहां हुये, दूने पड़ोसियों के यहां हुये। अब स्त्री ने सोचा कि जब घर में इतना ऐश्वर्य हो तो मेरा पति क्यों दो दो पैसे की मजदूरी करे, अतः पति को पत्री लिखी कि 'स्वामिन्! आपके घर में सब कुछ मौजूद है, आप नौकरी छोड़ कर चले आइये"। लाला स्वार्थीमल को पत्रा पहुंचते ही यह ख्याल हुआ कि जान पड़ता है कि इसने घण्टा बजादिया नहीं तो इतना ऐश्वर्य इतने दिन में कहां से आगया? क्योंकि आने

घर की दशा लाला साहब भली भांति जानते थे। परन्तु सोचा कि चलकर देखें क्या है? जब घर आये तो देखा कि हमारा तिखण्डा मकान बना है और पड़ोसियों का सतखण्डा। यह देख पत्थर में अपना शिर दे मारा और कहा "हा! हमारे देखते देखते पड़ोसी दूने! इस भांति अपने दश ग्राम पड़ोसियों के बीस बीस देखकर फिर सिर पटकते रहे। इस भांति हाथी घोड़ा फौज आदि दूने पदार्थ पड़ोसियों के देख स्वार्थीमल सिर पीटते रहे और स्त्री का बड़ा फजीता किया कि तूने घण्टा क्यों बजाया। अन्त में अब लाला स्वार्थीमल इस विचार में पड़े कि इन पड़ोसियों का सत्यानाश किस प्रकार हो; परन्तु सोचते सोचते कुछ लाला स्वार्थीमल के समझ में आ गया और लाला स्वार्थीमल घंटा लेकर बैठे और बोले कि "या घंटेश्वर! हमारी एक आंख तो फूट जाय"। एक फूटी इनकी और दोनों गईं पड़ोसियों की। इन्होंने कहा "या घंटेश्वर! हमारा एक कान तो बहरा हो जाय"। इन का एक कान बहरा हुआ पड़ोसियों के दोनों। इन्होंने कहा "या घण्टेश्वर! हमारी एक टांग तो टूट जाय"। एक टूटी इनकी दोनों गईं पड़ोसियों की। इन्होंने कहा "या घण्टेश्वर! एक कुआ तो हमारे दरवाजे खुदजाय"। एक

खुदा इन के दरवाजे दो दो पड़ोसियों के दरवाजे खुद गये। अब ज्योंही प्रातःकाल हुआ तो लाला स्वार्थीमल ने एक काठ की टांग अपने लगा तथा पत्थर की आंख लगवाकर चले कि पड़ोसियों की दशा देख आवें कैसे साले आनन्द कर रहे थे। पड़ोसी बिचारे अन्धे बहरे लगड़े घसिलते हुये जो जो दरवाजे पाखाने आदि को निकलते तो कुओं में आ टुम्भ टुम्भ गिरते थे। यह देख स्वार्थीमलकी छाती ठंडी हुई। सचहै किसी जगह का वृत्तान्त है कि—

कस्त्वं भद्र खले खरोऽहमिह किं घोरे वने स्थीयते। शार्दूलादिभिरेव हिंस्रपशुभिः खाद्योऽहमित्याशया॥ कस्मात्कष्टमिदं त्वया व्यवासितं मद्देहमांसाशिनः। इत्युत्पन्नविकल्पजल्पमुखैरस्ते घ्नन्तु सर्वानिति॥

—+*::*+—

५६-(खुदगर्जी और स्वार्थ से सर्वनाश)

पर एक अलंकार आप लोग भली भांति जानते हैं कि परमेश्वर ने सारे ब्रह्माण्ड का नक्शा यह शरीर बना रक्खा है। अगर इस शरीर में एक अङ्ग भी खुद-

गर्मी करे तो शरीर भरका नाश होजाय। कल्पना कीजिये कि किसी हलवाई की दूकान पर बहुत ही उत्तम लड्डू बने रक्खे हैं और आंखों ने देखा कि लड्डू बने रक्खे हैं। अब अगर आखें कहें कि लड्डू तो हमने देखा है, काहे को किसी को बतायें ? तो आंखें चल तो सकती नहीं तो लड्डू कैसे पायें। दूसरे यदि पैर सहायता भी देदें तो आंखे लड्डुओं को खा नहीं सकीं, न उठा सकीं, और अगर, आखें उठायें तो आखें फट जांय। अतः आंखों ने ऐसा जान.पैरों को खबर दी। पैरों ने लड्डुओं की खबर पा फौरन ही पहुंच गये। पर अब अगर पैर कहें कि लड्डुओं की खबर तो हमने पाई, हम काहे को किसी को बतायें तो पैर से यदि उठाके हलवाई की दुकान से लड्डू उठाया जाय तो सिर के बल तड़ से पृथिवी में गिरपड़े। दूसरे पैर से चाहे आप लड्डू को मिसलडालें पर पैर लड्डू खा नहीं सक्ते, अतः पैरों ने हाथों को सूचना दी। हाथों ने लड्डुओं की खबर पा चट्ट ही गप्पा जमाया। अब अगर हाथ कहे कि हमने लड्डू पाया, हम काहे को किसी को दें ? तो जब तक जिस हाथ में लड्डू रहेगा हाथ कुछ कर नहीं सक्ता। दूसरे हाथ लड्डू को फोड़ फाड़ चाहे फेंक भले ही दे पर खा नहीं सकता। अतः हाथों ने

ऐसा जान मुंहको खबर दी। मुंह ने लड्डुओं की सूचना पा चट्ट ही नीचे को लचकर गपक लिया। अब अगर मुंह कहे कि "हमने लड्डू पाया सो काहे को किसी को दें?" तो अब यदि कोई पूछे कि आपका नाम क्या है तो मुंह सिवा गलगलाने के शब्द नहीं निकाल सक्ता। दूसरे मुंह सिवा दांतोंसे लड्डू को चूर कर देने के खा नहीं सक्ता। अतः ऐसा सोच मुंहने लड्डू पेटको दिया परन्तु यदि पेट कहे कि हमने लड्डू पाया सो काहे को किसी को दें? तो पेट फूल जाये और मनुष्य टें होजाय। नतीजा निकला कि यदि आंखें खुदगर्जी करतीं तो आंखें फट जातीं, पैर खुदगर्जी करते तो पैर टूट जाते, हाथ खुदगर्जी करते तो मारे जाते, मुंह खुदगर्जी करता तो मारा जाता, पेट, खुदगर्जी करता तो मनुष्य का ही नाश होजाता, परन्तु इन अङ्गों ने खुदगर्जी न कर पेट को लड्डू दिया पेटने-

श्लोक।

रसाद्रक्तं ततो मांसं मांसान्मेदः प्रजायते।
मेदसोऽस्थि ततोमज्जा मज्जा शुक्रस्य संभवः॥

इस प्रकार लड्डू को गला, मलमूत्र का हिस्सा अलग कर, रस से रक्त, रक्तसे मांस, मांस से मज्जा, मज्जा

से हड्डी, हड्डी से सार, सार से वीर्य्य बना दिया। सोचो कि सब से पहिले काम किसने किया था ? पता लगा आंखों ने। इस लिये सब से उत्तम हिस्सा वीर्य्य ने आंखों को दिया। इसी भांति सब को बांट दिया। इसी भांति संसार में यदि कोई कौम खुदगर्ज़ी करे तो संसार का नाश होजाय, और इससे यह भी निकला कि परमेश्वर ने कुदरत में सबको एक दूसरे का परोपकार करने के ही लिये बनाया है। जहां परोपकार नहीं और खुदगर्ज़ी है, वहां नाश है। स्वार्थी सार्वजनिक बातों को बिगाड़ देते हैं यथा—

तृणं चाहं वरं मन्ये नरादनुपकारिणः।
घासोभूत्वा पशून्पाति भीरून्पाति रणाङ्गणे॥

६०-(शास्त्रों के अनुसार न चलकर अपना अपना मतलब निकालना)

एक चिड़िया एक वृक्षपर कुछ बोल रही थी। वृक्ष के समीप एक मेला लगा हुआ था जिसमें सभी कौम के लोग उपस्थित थे। लोगों ने पूछा "भाई! बोलो यह चिड़िया क्या कह रही है ?" उनमें से प्रथम मुसलमान लोग बोले कि चिड़िया यह बोल रही है कि

'सोभान तेरी कुदरत' और हिन्दुओं ने कहा कि "यह नहीं बल्कि चिड़िया बोलती है कि 'राम लक्ष्मण दशरथ' और बनियों ने कहा वाह जनाब ये क्या कहते हो ? चिड़िया यह बोल रही है "हल्दी मिरचा ढक रख' यह सुन कसरती लोग बोले कि वाह यह आपने खूब ही कही ? चिड़िया यह नहीं बोलती बल्कि चिड़िया यह बोलती है कि "दण्ड मुगदर कसरत" इसके बाद तम्बोलियों ने कहा कि चिड़िया यह नहीं बोलती बल्कि चिड़िया यह बोल रही है कि "पान पत्ता अदरख" पुनः सूत कातने वाली बुढ़िया ने कहा कि चिड़िया यह बोलती है कि 'चरखा पोनी चमरख' पुनः माली बोले कि चिड़िया यह नहीं बोलती बल्कि चिड़िया यह बोलती है कि 'नींब नारंगी कमरख'। पुनः बाबू ने कहा "किताबें अपनी खोल रख" पुनः एक मिस्त्री ने कहा "मेज कुरसी यहां रख"।

६१ (अन्धपरम्परा)

एक बार एक पुरुष ने बहुत से स्थानों के अन्धों का निमंत्रण किया। निमन्त्रणदाता ने अपने घर में एक आदमी के लायक भोजन बनाया था। यहां अन्धे सहस्रों एकत्र थे, परन्तु उसने सम्पूर्ण अन्धों को पैर धुला २, बिठला दिया। जब परोसने खड़ा हुआ

तो उसने अन्धों से कहा "क्यों भाइयो! हम बार२ क्यों हैरान हों कि एक बार पूड़ी परसैं, दूसरी दफे शाक लावैं, तीसरी दफे, दही लावैं, इस प्रकार बहुत देर होगी। इससे तो अगर आप लोगों की सम्मति हो तो एक ही बार में सब परोसते जांय?" अन्धों ने कहा बड़ी अच्छी बात है। उसके घरमें जो एक आदमी के लिये सब सामान बना था एक अन्धे के आगे ऊपर से पूड़ियां डाली, और शाक दही आदि सब परोस दिया-अन्धे ने टटोल लिया और सतोष कर बैठ गया कि सामान आगया। उस परोसने वाले पुरुष ने, जब अन्धा अपने हाथ उठाके बैठ गया तो, उस अन्धे के सामने से वही सम्पूर्ण सामान उठा दूसरे के आगे परसा फिर उसने भी टटोला और यह जाना कि मेरे आगे भी सब सामान आगया और सतोष कर हाथ ऊपर को उठा बैठ गया। उस परोसने वाले पुरुष ने फिर वही सामान दूसरे अन्धे के सामने से उठा तीसरे के आगे परोसा। इस प्रकार सब को परोस गया, और सबों ने यह निश्चय कर लिया कि हमारे आगे भोजन आ गया। अब परोसने वाले पुरुष ने कहा अब आप लोग भोजन कीजिये। अब अन्धों ने जब अपने आगे भोजन न देखा तो

आपस में ही एक दूसरे को दोषारोपण करने लगे। एक दूसरे को कहता था कि तूने मेरा भोजन क्यों उठा लिया ? इस कारण खूब ही परस्पर सोटा चला। यह झगड़ा जब पञ्चों में पहुचा तो अन्धों ने कहा "परोसने वाले ने परोसा है इसका कुछ अपराध नहीं। इस का दार्ष्टान्त यह है कि इसी प्रकार अकल के अन्धों को स्वार्थी लोग लड़ाया करते हैं; पर अन्धों को नहीं सूझता।

—:—
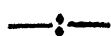
६२—(वर्तमान समय के श्रोता)

एक जगह एक पण्डित कथा बांच रहे थे। वहां पर बहुत से श्रोता सुन रहे थे परन्तु उन्हीं श्रोताओं में एक लालाजी जो कौम के कायस्थ थे, कथा सुन रहे थे। पं० जी ने कहा कि "मुखादग्निरजायत" ब्रह्मके मुखसे आग उत्पन्न होती है। पर लालाजी ने समझा कि ब्राह्मण के मुख से आग उत्पन्न होती है। अब कुछ दिन बाद लाला जी अपने घरसे एक दूसरे ग्राम को चले ; यह हुक्का बहुत पिया करते थे। इन्होंने तम्माखू और चिलम तो ले ली पर दियासलाई की डब्बी इस लिये नहीं ली कि इन्होंने सुन रक्खा था कि ब्राह्मण

के मुख से आग उत्पन्न होती है! बस सोच लिया कि दियासलाई लेकर क्या करें; जहां ब्राह्मण मिल जायगा वहां पी लेंगे। लाला जी चलते चलते दोपहर को एक और पुरुष को देखकर पूछा कि "आप कौन हैं?" उसने कहा "ब्राह्मण"। बस लाला जी ने निश्चय कर लिया कि अब आग मिल जायगी, हुक्के पीने का आराम है। ऐसा सोच उतर पड़े और इन लाला जी से पण्डित जी ने पूछा कि "आप कौन लोग हैं"? इन्होंने कहा "मैं मुन्शीराम कायस्थ हूं"। बस यह पूछ पांडे ये ब्राह्मण जी तो सो गये क्योंकि ये भोजन भाजन कर चुके थे। और लालाजी स्नान भोजन करने लगे जब भोजन कर चुके थे और लालाजी को हुक्के की आवश्यकता हुई। अतः इन्होंने चिलम में तम्माखू रख एक कंडा ले ब्राह्मण के पास जा ब्राह्मण के मुख में लगादिया। बहुत देरतक लगाये रहे, पर आग न निकली। तब सोचा कि हम मुंह के बाहर लगाये हैं, इस लिये आग नहीं निकलती। ऐसा विचार कंडा ब्राह्मण के मुख में घुसेड़ दिया। ब्राह्मण भरभरा के उठ बैठा और लाला जी से पूछा "यह क्या करते हो"? लालाजी ने कहा "महाराज! हमने कथा में सुना है कि ब्राह्मण के मुख से आग उत्पन्न होती है, सो आपके

ले रहे थे, क्योंकि ज़रा हुक्का पीने वाले थे। ब्राह्मण भी दूसरा परशुराम ही था। उसने लट्ठ उठा, लालाजी की खोपड़ी में दिया। लालाजी बोले "हें हें यह क्या करते हो"? ब्राह्मण ने कहा "तुम कायथ हो इस लिये चटनी को कैथा तोड़ते हैं"। धन्य रे श्रोताओ! बुद्धिकी बलिहारी है।

यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा, शास्त्रं तस्य करोति किम्।
लोचनाभ्यां विहीनस्य, दर्पणः किं करिष्यति॥
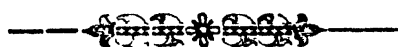
६२—(देशकाल के विचारशून्य काम करने वालेकी दशा)

एक बार एक पुरुष कुछ बीमार था। उसने एक वैद्य के पास जाकर इलाज पूछा। वैद्यराज ने कहा कि "तुम प्रथम जुल्लाब लो, तब हम तुम्हारी चिकित्सा करेंगे"। जुल्लाब देकर वैद्यराज ने कहा कि "खाने को खिचड़ी खाना"। यह मनुष्य बेचारा साधारण ही पढ़ा लिखा था, इसने कहा "वैद्यराज! आपने खाने को क्या बताया?" कहा 'खिचड़ी'। यह जान वह बीमार पुरुष वैद्यराज को प्रणाम कर अपने घर को चल दिया, लेकिन थोड़ी दूर चल कर खिचड़ी भूल गया. फिर लौटकर

वैद्यराज से पूछा "वैद्यराज ! आपने खाने को हमें क्या बताया था" ? वैद्यराज ने कहा 'खिचड़ी'। अब यह पुरुष खिचड़ी शब्द को रटता हुआ घर को चलदिया और शीघ्र २ खिचड़ी खिचड़ी कहते जा रहा था, परन्तु वह खिचड़ी २ शीघ्र २ कहने से खिचड़ी के स्थान में 'खा चिड़ी' रटने लगा और खाचिड़ी खा चिड़ी रटता हुआ जा रहा था कि इतने में एक काश्तकार जो अपने खेत से चिड़ियां उड़ा रहाथा उसने इस पुरुष के मुख से खाचिड़ी खाचिड़ी शब्द सुन इसे खूब ही पीटा और कहा कि "मैं तो चिड़िया उड़ा रहा हूं और तू कहता है कि खाचिड़ी खाचिड़ी"। इसने कहा कि 'तो फिर हम क्या कहें ?' काश्तकार ने कहा 'कहो उड़ चिड़ी उड़ चिड़ी'। अब वह पुरुष उड़ चिड़ी उड़ चिड़ी रटता हुआ आगे को चला। कुछ दूर पर एक बहेलिया चिड़िया पकड़ रहा था, यह पुरुष वहीं से यह कहते हुये कि उड़ चिड़ी उड़ चिड़ी जा निकला। बहेलिया क्रोध में आ कि देखो इस बदमाश को कि हमें तो एक एक चिड़िया मुश्किल से पकड़ने पर मिलती है औरयह कहता है कि 'उड़ चिड़ी उड़ चिड़ी' खूबही पीटा। इसने रोते रोते बहेलिये से पूछा कि भाइ फिर क्या कहें ? बहेलिये ने बतलाया तुम यह कहो कि "आवतं

जाव फंसि फंसि जाव आवन जाव फंसि फंसि जाव"। अब यह परुष रटते हुये आगे चला कि एक स्थान में चोर चोरी कर रहे थे कि इतने में ये जा निकला और रटता था कि 'आवन जाव फंसि फंसि जाव आवन जाव फंसि फंसि जाव' चोरों ने कहा कि यह बड़ा ही पाजी है, देखो हम लोगों ने तो बड़ो कठिनता से संध लगा पाई और यह कहता है कि 'आवन जाव फंसि फंसि जाव आवन जाव फंसि फंसि जाव' इन्हें बहुत पीटा। यह बिचारा फिर रोने लगा और चोरों से पूछा "अच्छा अब हम क्या कहें"? चोरोंने कहा कि तुम कहो 'लै लै आओ धरि धरि जाव लै लै आओ धरि धरि जाव'। बस यह पुरुष यह रटते हुए चल पड़ा कि आगे चार मनुष्य एक मुर्दा लिये हुए जा रहे थे कि इतने में यह पुरुष यह रटता हुआ कि "लै लै आवो धरि धरि जाव लै लै आव धरि धरि जाव" पास से जा निकला। यह शब्द सुनते ही उन चारों पुरुषों ने मुर्दे को रख के इसे खूब ही दुरुस्त किया और कहा "अबे उल्लू! हमारा तो नाश होगया और तू कहता है कि "लै लै आओ धरि धरि जाव लै लै आओ धरि धरि जाव"। इस पुरुष ने रोते हुए उन चारों से पूछा "तो महाराज! फिर हम क्या कहें"? उन्होंने कहा कि तुम कहो "राम करै ऐसा

दिन कबहूं न होय राम करै ऐसा दिन कबहूं न होय"। अब यह रटते रटते एक राजा के ग्राम में जा निकला। वहां तमाम उमर में राजा साहब के पहिले ही लड़का हुआ था। जिसकी प्रसन्नता में कहीं बाजे गाजे बज रहे थे, कहीं बन्दूकें तोपें छुट रही थीं, कहीं यज्ञ होम हो रहे थे। ऐसे समय में यह पुरुष यह कहते हुये कि "राम करै ऐसा दिन कबहूं न होय राम करै ऐसा दिन कबहूं न होय" निकला। यह शब्द राजा के कान तक पहुंच गया। राजा साहब ने इसकी "हड्डी हड्डी ढीली करवादी और कहा "क्यों रे मक्कार! तमाम उमर में हमारे लड़का हुआ। तमाम गांव प्रसन्नता मनाये और तू कहता है कि "राम करै ऐसा दिन कबहूं न होय"। इस पुरुषने रोते हुये फिर राजा से पूछा "अच्छा महाराज! तो हम क्या कहें?" राजा साहब ने बतलाया कि "राम करै ऐसा दिन नित उठि होय राम करै ऐसा दिन नित उठि होय" अब यह पुरुष यह रटते हुये चला कि एक गांव में आग लगी हुई थी। गांव वाले सभी बिचारे आपत्तिमें थे और यह पुरुष कहते हुये कि "राम करै ऐसा दिन नित उठि होय राम करै ऐसा दिन नित उठ होय" जा निकला। लोगों ने इसे खूब मारा। गरज इस प्रकार यह जहां गया वहां यह दशा हुई।

६४—(शठ विना शठता के नहीं मानता)

एक बाबाजी के पास कुछ सुवर्ण की अशरफियां एक सोटे में बन्द थीं। बाबाजी ने कहीं तीर्थयात्रा करने का विचार किया। इस कारण बाबाजी एक सेठजी के पास जाकर बोले कि "सेठ जी! ज़रा हमारा यह सोंटा जब तक हम तीर्थयात्रा करके न लौटें रक्खे रहिये"। सेठ जी बोले "महाराज! यहां सोंटा रखने की जगह नहीं"। परन्तु जब बाबाजी ने बहुत कुछ कहा तो सेठ जी ने कहा "अच्छा महाराज! जाव उस कोने में रखदो, जब आना तब उठालेना"। साधु जी सोंटा रखके चलेगये। परन्तु यहां सेठानी और सेठ रोज उस सोंटे को उठा उठा देखते रहे, और आपस में कहते थे "कि सोंटा भारी बहुत है; जाने क्या बात"? सोंटे के ऊपर एक फुल्ली जड़ी हुई थी। सेठ सेठानी ने कहा "मालूम देता है कि इस सोंटे के भीतर कुछ भरा है, हो न हो यह फुल्ली उखाड़ कर देखना चाहिये, इसके भीतर क्या है"? सेठने ऐसा ही किया। जब फुल्ली उतारी तो उस से झनाझन असरफियें गिर पड़ीं। सेठने असरफियें घर में रख, सोंटा फेंक दिया। जब कुछ काल के पश्चात् साधु जी लौटे और सेठ जी के पास जा सोंटा मांगा, तो पहिले तो सेठ जी ने

साधु जी को पहिचाना ही नहीं। जब पहिंचाना तो बोले कि "आपका सोंटा तो छछुन्दरी खागई"। साधु जी चुपचाप रह गये और सेठजी के पास से चले गये। थोड़े दिन में आके उसी गांव में अध्यापकी का काम करने लगे। बहुत से गांव के लड़के साधुजी के पास आने लगे और उन सेठ का लड़का, जिन्होंने सोंटा छछुन्दरी को खिला दिया था, आने लगा। कुछ दिन के बाद साधु जी ने उस सेठ के लड़के से कहा कि "देख आज जब तुझे छुट्टी दूं अमुक स्थान से लौट आना, अगर न लौटा और तू घर चला गया तो समझ लेना कि तेरी खाल खींच दूंगा"। सेठ का लड़का बेचारा भय से लौट आया। अब तो साधु जी ने उस लड़के को एक कोठरी के अन्दर खाने को रख दिया और उसे बन्द कर दिया; और कहा कि अगर तू बोला तो समझ लेना कि तू था नहीं"। थोड़ी देरमें जब समय विशेष व्यतीत हुआ तब सेठजी ने अपने लड़के की तलाश की तो लड़का न मिला! सेठ ने जाके साधु जी से पूछा कि "साधु जी! आज लड़का हमारा घर नहीं गया"? साधु जी बोले "भाई! सब लड़कों से पूछ लो, हमने तो उसे छुट्टी दे दी, पर हम नहीं जानते कि आपका लड़का कहां गया"।

जब सेठ जी ने लड़कों से पूछा तो लड़कों ने कहा कि "हमारे साथ फलां स्थान तक गया, फिर हम नहीं जानते कि कहां गया"। सेठ जी फिर इधर उधर घूम कर साधु जी के पास आये और बोले कि "साधु जी! लड़का नहीं मिलता; जाने कहां गया"। साधु जी ने कहा "यहां से तो हमने लड़के को छुट्टी दे दी थी, परन्तु हां एक लड़के को एक गिद्ध उसकी चोटी पकड़े हुये ऊपर को लिये जा रहा था"। सेठजी ने पुलिस में रिपोर्ट की। थानेदारने आकर पूछा कि "साधुजी! सेठ का लड़का कहां गया?" साधु जी ने कहा "हमने तो यहां से छुट्टी दे दी है; आप सब लड़कों से पूछ लें।" जब थानेदार ने लड़कों से पूछा तो लड़कों ने साफ़ कह दिया कि "हुजूर! हमारे साथ वह लड़का फलां स्थान तक गया है, फिर हम नहीं जानते"। पुनः साधु जी बोले कि "थानेदार साहब! हां एक बात हमने देखीथी कि एक गिद्ध एक लड़केकी चोटी पकड़े ऊपर को लिये जाता था"। थानेदारने कहा 'कहीं गिद्ध लड़के की चोटी पकड़ उड़ाले जा सकता है"? तब साधु जी ने कहा कि—

श्लोक।

शठस्य शाठ्यं शठ एव वेत्ति,
नैवाशठो वेत्ति शठस्य शाठ्यम्।

छछुन्दरी खादति लोहदण्ड,
कथन्न गृद्धेन हृतः कुमारः ॥

महाराज! "शठं प्रति शठं कुर्यात् साधवं प्रति साधुताम्"। इस कहावत के अनुसार जबतक शठ के साथ शठता न कीजाय तब तक शठ नहीं मानता। इस लिये महाराज! हमने इनके पास जब तीर्थयात्रा को गये थे सोंटा रक्खा था। जिसमें इतनी अशरफियां थीं। जब हमने आके सेठ जी से सोंटा मांगा तो सेठ जी बोले कि लोहे का डण्डा छछुन्दरी खागई तो हुजूर अगर छछुन्दरी लोहे का डण्डा उगिल दे तो गिद्ध भी सेठ का लड़का डाल देवे"। यह जान सेठ जी ने सम्पूर्ण अशरफियां मय दण्डे के साधु जी के भेंट की और साधु जी ने सेठ का लड़का कोठरी से निकाल दिया। सच है किसी कवि ने कहा है—

श्लोक।

यस्मिन् यथा वर्त्तते यो मनुष्य-
स्तस्मिन् तथा वर्त्तितव्यं सधर्मः।
मायाचारो मायया वर्तितव्यः,
साध्वाचारः साधुना प्रत्युपेयः ॥

६५-(श्राद्ध करना तो सहज है पर सीधा देना कठिन है)

एक अहीर ने एक बार श्राद्ध करना चाहा । सब सामान तय्यार कर एक पण्डित को बुलाया । पं० जी ने कहा कि 'चौधरी साहेब! जैसा हम तुम से कहें वैसा करते जाना' । चौधरी साहबने कहा 'बहुत अच्छा'। पं० जी ने कहा "लेव चिरुआ में जल" चौधरी साहेब ने लेकर कहा "लेव चिरुआ में जल"। पं० जी बोले "हम तुम से कहते हैं" चौधरी साहब ने कहा "हम तुमसे कहते हैं"। पं० जी ने कहा "अबे सुनता नहीं"। चौधरी साहब ने कहा "अबे सुनता नहीं" । पं० जी ने गुस्से में आ एक थप्पड़ चौधरी साहेब के मार दिया और कहा कि "चिरुआ में जल लेकर आचमन कर।" चौधरी ने पं० जी को उठाकर दे मारा और एक थप्पड़ लगा कहा "चिरुआ में जल लेकर आचमन करो" । अब पं० को और क्रोध आगया और बोले कि:-

श्लोक ।

लात घूंसा कमरमध्ये चटकनं मुखभञ्जनम् ।
चरणादासी सांसमध्ये बार बार धड़ाधड़म् ॥

यह श्लोक पढ़ अहीर को पीटने लगे। अहीर ने पं० जी को मारते मारते हड्डियां ढीली करदीं । इस

प्रकार २ घण्टे श्राद्ध हुआ। पश्चात् पं० जी कांखते कूं-खते अपने घर पहुंचे। पण्डितानी जी रास्ता देख रहीं थीं कि पं० जी श्राद्ध कराने गये हैं कुछ लिये आते होंगे। वहां पं० जी की यह दशा देख पण्डितानी क्रोध में जल बैठगई। यहां चौधरी जी अपने घर आये तो चौधराइन ने पूछा कि "श्राद्ध होगया" चौधरी ने कहा 'हां होगया' तब तो चौधराइन ने कहाकि "पं०जी को सीधा नहीं दिया!" चौधरी बोले "क्या बतावें श्राद्ध तो २ घण्टे तक होता रहा पर सीधा देने का ख्याल नहीं रहा"। तब तो चौधरी ने चौधराइन से कहा "अच्छा सीधा अब तुम जाके दे आओ।" चौधराइन आटा दाल घी लेके ज्योंहीं प० जी के मकान पर पहुंची तो वहां पं० और पण्डिताइन दोनों क्रोध में जल रहे थे। अतः दोनों ने मिलके चौधराइन को खूब पीटा, पर चौधराइन जी इस लिये न बोलीं कि जाने सीधा शायद इसी प्रकार दिया जाता हो। जब चौधराइन पिट पिटा के घर आई तो चौधरी से बोलीं कि "चौधरी! श्राद्ध करना तो सहज है पर सीधा देना बड़ा कठिन है, अगर आप सीधा देने जाते तो मालूम होता।

—::—

९९-(मार तोरि श्राद्ध कराना)

एक पण्डित केवल श्राद्ध ही पढ़े हुए थे। जहां

कहीं व्याह, जनेऊ, मुण्डन, कर्णच्छेद, भागवत, बांचने जाते वहां वे बार और तो कुछ जानते ही न थे वही अपनी श्राद्ध की पोथी खोलकर बैठजाते थे। एक जगह सत्यनारायण की कथा थी। वहां से बुलावा आया तो पण्डित जी अपनी श्राद्ध की पोथी ले जा विराजे। वहां जब सत्यनारायण की कथा के स्थानमें श्राद्ध का पाठ करने लगे तो एक जगह निकला कि 'अपसव्यम्' लोगोंने कहा ''महाराज! यह सत्यनारायण की कथा में 'अपसव्यम्' कैसा ? तो पं० जी ने कहा कि यह अध्याय की 'समाप्ति है'। बोलो राधाकृष्ण की जय।

इति प्रथमोऽध्यायः।

—*=::*~*::=*—

६७-(अन्धपरम्परा)

एकबार एक सेठजी के घर में व्याह होकर मड़वा हो रहा था। लड़का लड़की गांठ जोर तथा सब लोग सेठ जी के आंगन में बैठे हुए थे, इतने में सेठ जी के घर में एक बिल्ली मरगई। अब सेठानी जी ने सोचा कि ऐसे समय में मरी बिल्ली घसिटवा कर बाहर भेजना अनुचित है इस से सेठानीजी ने वह मरी बिल्ली एक झौवे के नीचे मूंद दी। यह सम्पूर्ण चरित्र सेठ

जी की लड़की अपने आंगन में बैठी बैठी देखती रही। जब वह लड़की अपने सासुरे पहुंची और बहुत दिन के पश्चात् उसके सासरे में जब उसकी नंनद का विवाह हुआ, और जब बरतावन होने लगी, सब लोग आंगन में आये तो अपनी सास से कहा 'अम्मा! एक बिल्ली तो लाओ'। कहा क्यों? कहा 'हमारे यहां मार के झौवे के नीचे इस मौके पर मूंदी जाती है'। ले सोंटा बिल्ली को मारना प्रारम्भ किया। अब वहां शोर मचा। इसी भांति हमारे बहुत से भाई बिना समझे सनातन समझ बैठते हैं।

दानाय लक्ष्मीः सुकृताय विद्या,
चिन्ता परब्रह्मविचारणाय।
परोपकाराय वचांसि यस्य,
धन्यस्त्रिलोकीतिलकः स एव॥

६८-(क्या से क्या मान बैठे)

एक ब्राह्मण की लड़की जन्म से ही बड़ी साध्वी और भक्त थी। निशिदिन ईश्वरभजन में वृत्ति, गीता का पाठ और इस महामन्त्र का जाप किया करती थी कि:—

राम कृष्ण गोपाल दमोदर,
हरिमाधव मधुसूदननाम।

कालीमर्दन कंस निकन्दन,
देवकिनन्दन त्वं शरणम् ॥
चक्रपाणि वाराह महीपति,
जलशायी मंगलकरणम् ।
एते नाम जपौ निशिवासर,
जन्म जन्म के भयहरणम् ॥

परन्तु जब यह लड़की कुछ बड़ी हुई तो उसका विवाह हुआ। जिस पुरुष के साथ विवाह हुआ उसका नाम भी देवकीनन्दन था। लौकिक प्रथा यह है कि स्त्री पति का नाम नहीं लेती है। इस लिये उस लड़की का जिस तारीखसे विवाह हुआ उस महामन्त्र के भजन में विघ्न पड़गया। क्योंकि उसके महामंत्रमें यह शब्द आता था कि "देवकीनंदन त्वं शरणम्" यही नाम उसके पति का था। इस कारण इसने इस महामन्त्र का भजन ही छोड़ दिया कि पति का नाम कैसे लूं। परन्तु कुछ काल के पश्चात् देवकीनन्दन की स्त्री के एक लड़की उत्पन्न हुई। उसका नाम उस लड़की-(देवकीनंदन की स्त्री)ने चम्पो रखवाया था। बस उसी तारीख से देवकीनदन की स्त्री का महामन्त्र बिना पति के नामके शब्द उच्चारण किये बन गया। वह यह था कि जहां वह प्रथम यह कहा करती थी कि—

राम कृष्ण गोपाल दमोदर हरिमाधव मधुसूदननाम्।
कालीमर्दन कंसनिकन्दन देवकिनन्दन त्वं शरणम्॥

वही अब ऐसा कहने लगी कि—

राम कृष्ण गोपाल दमोदर हरिमाधव मधुसूदननाम्।
कालीमर्दन कंसनिकन्दन चंपोकेचाचा त्वं शरणम्॥

मित्रो ! भजन तो बन गया पर उसे यह ज्ञान न हुआ कि प्रथम मैं किस देवकीनन्दन का भजन करती थी, और चंपो के चाचा कौन हैं ? यानी कृष्ण भगवान् के स्थान में चंपो के चाचा के भजन होने लगे। बस समझलो कि हम "क्या से क्या मान बैठे।"

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्यां रताः॥

——※——

६६-(खुशामदों से दुर्दशा)

एक राजा के यहां बहुतसे खुशामदे रहा करते थे। खुशामदों की बहुत दिन से कोई रगगी नहीं जमी थी, अतएव इन्होंने आपस में सम्मति की कि राजा साहब से अब कुछ लेना चाहिये। ये राजा साहब के पास पहुंचे और बोले कि "राजा साहब ! और तो आपने दुनियां में आके सम्पूर्ण ऐश आराम कर लिये पर

कभी इन्द्र की पोशाक भी पहरी है।'' राजा ने कहा 'नहीं'। पुनः राजा ने कहा 'क्या इन्द्र की पोशाक किसी प्रकार मिल भी सकती है?' खुशामदों ने कहा–"हां सरकार ! मिल तो सकती है पर उस में खर्च ज्यादा है और कठिनता से मिलती है"। राजा ने कहा 'इस की कुछ परवाह नहीं भला तुम बताओ कि इन्द्र की पोशाक किस प्रकार मिल सक्ती है?' खुशामदों ने कहा कि 'महाराज ! दश हजार रुपया हमें खजाने से दिया जाय तो हम लोग जाकर छः मास में लेकर लौट सक्ते हैं।' राजा ने उसी समय दश हजार रुपये का हुक्म कर दिया। खुशामदों ने दश हजार रुपया तो लाकर घर में रक्खा और आप ६ मास तक इधर उधर बने रहे। जब छः मास व्यतीत होगये तो खुशामदे दो सन्दूक खाली, ताला बन्दकर राजा की सभा में आ विराजे। राजा साहब इन्हें देख बड़े ही प्रसन्न हुए और बोले कि "कहो तुम लोग इन्द्र की पोशाक ले आये?" खुशामदों ने उत्तरदिया कि "हां सरकार ! इन्द्र की पोशाक तो ले आये परन्तु महाराज इन्द्र ने यह कह दिया है कि यह पोशाक असलों को दीख जायगी, दोगलोंको कभी दीख नहीं सक्ती।" राजाने कहा "खैर अब आप उसे खोलिये।" खुशामदोंने कहा कि "प्रथम

आप अपने पुराने कपड़े कुल के कुल उतार दीजिये ।"
राजा ने वैसाही किया । अब खुशामदोंने खाली सन्दूक
खोल खाली हाथ सन्दूक में डाल और खाली ही
निकाल बोले कि 'राजा साहब ! यह लीजिये इन्द्र की
धोती; इसे पहिनिये और इस पुरानी धोती को भी
उतार दीजिये' । राजा पुरानी धोती भी खोल नङ्गे
हो गये । सभा के लोग बोले कि "वाह ! वाह !! क्या
ही अच्छी कामदार धोती इन्द्र की है; क्योंकि सब डरते
थे कि अगर हमने यह कह दिया कि धोती वोती कुछ
नहीं है, राजा साहब आप तो नंगे हैं तो हमारी अस-
लियत में फ़र्क लग जायगा और दोगले कहे जांयगे ।
इसी प्रकार खुसामदों ने खाली हाथ डाल फिर कहा
"राजा साहब ! यह कमीज पहिनिये' । फिर सबोंने
कहा वाह२ !! क्या ही अच्छी कमीजहै। फिर खुशामद
बोले " राजा साहब ! यह वासकट पहिनिये " फिर सभा
के लोगों ने वाह २ की । फिर खुशामदों ने कहा कि
'राजासाहब ! लीजिये यह पाजामा पहिनिये' फिर सब
लोगोंने वाह वाह की । इस भांति पोशाक पहिना राजा
साहब से कहा "अब आप शहर की हवा खा आइये ।"
राजा साहब फिटन पर सवार हो नंगे होते हुये भी
शहर घूमने निकले । परन्तु शहर में राजा साहब की

यह शकल देख लोग कहते थे कि राजा क्या आज पागल होगया है जो शहर में नंगा घूम रहा है। जब राजा ने सुना कि शहरवाले हमें नंगा कह रहे हैं तो राजा ने कहा कि ये सब दोगले हैं। पुनः जब राजा साहब शहर घूम आये तो खुशामदों ने कहा कि राजा साहब! ज़रा महल में भी हो आइये ताकि इन्द्र की पोशाक सब रानियां भी देख लें। राजा साहब जब महल में पहुंचे तो रानियों ने राजाको नंगा देख सब इधर उधर भगने लगीं। राजा ने कहा कि 'तुम सब क्यों भगती हो'? रानियोंने कहा 'महाराज! आज तुम्हें क्या होगया है, जो नंगे फिर रहे हो?' राजा बोले कि "तुम सब दोगली हो, हमतो इन्द्र की पोशाक पहिर रहे हैं। सो यह असलों को ही दीखती है दोगलों को नहीं" रानियों ने हाथ जोड़ राजा साहब से प्रार्थना की कि 'महाराज! आप चाहे और सम्पूर्ण पोशाक इन्द्र की ही पहिनिये परन्तु धोती केवल अपने देश ही की रखिये'। ऐसी ही दुर्दशा आज कलके खुशामदी हमारे भले भले भाइयों की करा रहे हैं।

दोहा।

सचिव वैद्य गुरु तीन जो, प्रिय बोलैं भय आस।
तेहि राजाकर अवश ही, होत वेगही नास॥

७०-(धर्मध्वजी!)

एक पण्डित बड़े ही भक्त और [शुद्धाचारी [यानी नित्य प्रातःकाल उठके शौच, दन्तधावन, स्नान; दुर्गापाठ आदि कर्म किया करते थे। परन्तु पण्डित जी को केवल मांस खाने की आदत थी। एक दिवस पण्डितजी महाराज को कहीं मांस न मिला जब पण्डित जी स्नान करने जाते थे कि इतने में एक छोटी बकरी जो पण्डित जी के पड़ोसी की थी पण्डित जी के घर आगई। पण्डित जी ने उसे गड़सा ले मार डाला। पुनः उधेड़ काट छांटकर पण्डितानी से बोले कि अब तुम इसे बनाओ और मैं अब स्नानकर पाठ करने जाता हूं। पण्डितजी स्नान कर पाठ करने लगे और वह बकरी कटी हुई थाल में रक्खी थी। पण्डितानी मसाला पीस रहीं थीं। परन्तु पण्डितानी कुछ पढ़ी हुई थी। इतने में पड़ोसिन, जिसकी कि वह बकरी थी, पण्डित के घर में आग लेने आई। पण्डित दुर्गापाठ कर रहे थे। पण्डितजी ने पड़ोसिन को देख पाठ करते हुये प्रवाह में बोले कि :—

"या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्यै नमोनमः ॥"

पुनः इसी प्रवाह में बोले—

झांपनियां झांपनियां जिनकी हम मारी में मनियां सो तो ठाडी आंगनियां नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः।"

यह पाठ सुन पण्डितानी ने मांस ढक दिया। मित्रो! अब इस हिंसाकर्म को छोड़ अहिंसक बनो और बंचकता छोड़ पूरे साधु बनो।

हंसः प्रयाति शनकैर्यदि याति तस्य,
नैसर्गिकी गतिरियं न हि तत्र चित्रम्।
गत्या तया जिगमिषुर्बक एष मूढ—
श्चेतो दुनोति सकलस्य जनस्य नूनम्॥

७१— (चेले का इस्तीफा)

एक पण्डित जी को एक वैश्य ने अपना गुरु बना उनसे एक कंठी ली थी। वह चेला बड़ी भक्ति किया करता था। पण्डितजी जहां कहीं जो कुछ सामान मिलता था चेले पर ही लादते थे। इस प्रकार धीरे धीरे चेले के पास बोझा अधिक होगया। चेला बोझा से हैरान था, परन्तु पण्डितजी ने अपनी ध्वनि न छोड़ी एक दिन चलते चलते गुरु चेला दोनों एक कुये पर

जा उतरे। चेला की कमर बोझे से टूट रही थी। जब तक पण्डित जी को किसी ने उसी कुये पर आके एक लोटा धोती दी। गुरु जी बोले चेला ले इसे और रख ले, चेले ने दाहिने हाथ से कंठी तोड़ और गुरू से कहा कि "यह लीजिये आप इसे लेकर किसी ऊंट के बांधिये, जो यह आपका बोझा ढोवे, हमसे यह बोझा नहीं चलता"।

७२-(भारधारी)

एक साधु जी बिलकुल मस्त थे लेकिन कुछ संन्यासी महात्माओं का उपदेश श्रवण करने से उनके हृदय में यह भाव उत्पन्न हुआ कि गीता पढ़ना चाहिये। एक दिन एक राजा साहब अपने टमटम पर हवा खाने निकले। साधु जी ने राजासाहब को जा घेरा और हाथ जोड़ खड़े होगये। राजा साहब ने कहा-" कहिये आप क्या चाहते हैं? क्यों आप इतनी तकलीफ़ उठा रहे हैं"। साधुजी ने कहा 'महाराज, हमें एक गीता की पोथी लें दो। राजा साहब ने कामदारों को आज्ञा दी कि इस साधु को एक गीता की पुस्तक ले दो। दूसरे दिन साधु कामदारों के पास गया और कामदारों ने बड़ी उत्तम सुर्ख़ जिल्द बंधी हुई एक गीता की पुस्तक ले-दी। यह साधु सुर्ख़ जिल्द गीताको पाकर कूदने लगा और

बोला "गीता गीता गीता हमारा गीता" और बार बार उस जिल्द को अपनी छाती में लगाता और कहता था कि गीता बड़ी अच्छा गीता मेरी गीता कभी उसे चूमता। गीता ले जब मार्ग में आया तो कहा कि इसमें बांधने के लिये कोई बसना यानी बस्ता होना चाहिये नहीं तो इसकी जिल्द बिगड़ जायगी। कपड़ा खरीद रातको बांधकर अपनी कुटी में रक्खी। परन्तु रात में चूहे आकर साधु जी की गीता खुतर गये। जब प्रभात हुआ तो साधूजी ने ज्यों ही अपनी गीता को देखा तो देखते क्या हैं कि हमारी गीता को चूहे काट गये। अब तो महात्मा जी को बड़ा ही कष्ट हुआ। दूसरे दिन यद्यपि साधू जीने गीता की पोथी बड़ी सावधानी से रक्खी पर चूहे उसे फिर खुतर गये। अब तो तीसरे दिन महात्माजी देखकर बड़े दुखी हुये। लोगों से पूछा भाई क्या करें हमारी गीता की पोथी नित्त चूहे खुतर जाते हैं। लोगों ने कहा "महाराज एक बिल्ली पालिये, जो चूहे तोड़ डाले ताकि चूहे आपकी पोथी न तोड़ें खुतरें"? महात्मा जी ने एक बिल्ली भी पाली। परन्तु चूहों का काटना न बन्द हुआ। दो एक दिन उस बिल्ली ने चूहे तोड़े बाद जब भूखों मरने लगी तो फिर बिल्ली चूहे क्या

तोड़े पुनः महात्मा ने लोगों से पूंछा "क्यों भाई लोगो अब तो बिल्ली भी चूहा नहीं तोड़ती"? लोगों ने कहा "महात्मा जी बिल्ली चूहा कैसे तोड़े ? कुछ खाने को भी पाती है। बिल्ली को आप गाय का दूध पिलाया करें फिर देखें कि बिल्ली कैसे चूहा नहीं तोड़ती"। अब तो महात्मा जी ने बिल्ली के दूध पिलाने के लिये एक गाय मोल ली महात्मा ने गाय इस लिये ली कि बिल्ली गाय का दूध पीके पुष्ट हो और चूहे तोड़े ताकि चूहे गीता की पुस्तक न काटें, परन्तु गायने भी दो रोज़ दूध दे तीसरे दिन लातें फेंकने लगी। महात्मा जी बोले "भाइयो ! अब तो गाय भी दूध नहीं देती कि जो बिल्ली पिये और बिल्ली चूहे तोड़े ताकि गीता बचे"। लोगों ने कहा "गाय को कुछ खिलाते भी हो कि दूध ही दे ? इसे हरी घास खिलाया करो"। अब महात्माजी को फिकर हुई अगर एक आदमी मिल जाय तो हरी हरी घास लाया करे। इतने में एक स्त्री अति-दीन जिसकी अवस्था चौबीस पच्चीस वर्ष की थी महात्मा के पास भीख मांगने आई। महात्मा ने कहा "अरी ! तू हमारे यहां रहकर इस गय्या को हरी हरी घास रोज़ छील लाया कर, हम तुझे खाने भरको भोजन दिया करेंगे"। स्त्री ने स्वीकार कर लिया और

रोज गाय को हरी हरी घास छील लाती और गायकी सेवा किया करती थी। अब तो महात्मा की गाय खूब दूध देने लगी जिससे कि बिल्ली तो दूध पीती ही थी और महात्मा भी खूब रबड़ी खाया करते थे और बचा बचाया स्त्री भी खा लेती थी, परन्तु आप जानते हैं कि महाराज भर्तृहरि ने कहा है कि:—

श्लोक।

भिक्षाऽशनं तदपि नीरसमेकवारं,
शय्या च भूः परिजनो निजदेहमात्रम्।
वस्त्रं च जीर्णशतखण्डमलीनकन्था,
हाहा तथापि विषया न परित्यजन्ति॥

भिक्षा है वृत्ति, नीरस भोजन वह भी दिन भर में एक वार, पृथिवी ही जिनकी शय्या हो और अत्यन्त पुराने हजारों टुकड़ों की गुडी हुई गुदड़ी पहिरे हुये ऐसी अवस्थामें भी यह विषयवासना नहीं छोड़ती।

अन्यच्च—

कृशः काणः खञ्जः श्रवणरहित पुच्छः विकलो।
व्रणी पूयि क्लिन्नः कृमिकुलशतैरावृततनुः॥
क्षुधाक्षामो जीर्णः पिठरजकपालाऽर्पितगलः।
शुनीमन्वेति श्वा हतमपि च हन्त्येव मदनः॥

अर्थ—महा दुर्बल एक आंख फूटी, लुञ्जा, बहिरा, पूंछ कटी हुई, देह में बड़े बड़े फोड़े उनमें कीड़ों के परिवार के परिवार घुसे, क्षुधा से पीड़ित, घड़े का घेरा जिसके गले में था ऐसा कुत्ता भी जब कुतियों के पीछे दौड़ता है तो रबड़ी खाने वाले की तो बात ही क्या बस महात्मा जी उस घसियारी से फंस गये पुनः कुछ काल में उसी घसियारी से महात्मा जी के एक लड़का और एक लड़की उत्पन्न हुई कुछ दिन के बाद एक दिन महात्मा जी एक लड़का इस कन्धे पर और लड़की उस कन्धे पर गीता की पुस्तक बगल में पीछे २ स्त्री और उसके पीछे गौ और साथ ही साथ बिल्ली आदि अपने सारे सामान से चले जारहे थे और उधर से राजा साहब की सवारी जिन्होंने कि महात्मा को गीता ले दी थी आरही थी। जब राजा साहब बराबर आये तो महात्मा को पहिचान और उनकी यह दशा देख, सवारी खड़ी कर, महात्मा से पूछा 'कहो महाराज' गीता कितनी पढ़ी ! महात्मा बोले 'महाराज ! १८ अध्याय में केवल ५ अध्याय हुये हैं एक दहिने कन्धे की तरफ इशारा किया कि एक अध्याय यह, दूसरा बायें की तरफ, कि दूसरा अध्याय यह, तीसरा पीछे की तरफ, कि तीसरा यह

चौथा उससे पीछे की तरफ कि यह और पांचवां बिल्ली की ओर, राजा यह सुन चले गये।

७४-(अविद्या से हठ)

एक राजा साहब को एक पण्डितजी ने इस निम्नस्थ श्लोक का अर्थ रुपया इस प्रकार बतला दिया था कि:-

श्लोक

शुक्लाम्बरधरं विष्णु शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्, सर्वविघ्नोपशान्तये ॥

(शुक्लाम्बरधरम्) सुफेद वस्त्र धारण किये हुये (विष्णुं) चर अचर रूप सब जगत् में व्यापक है विष्णु कहाता है क्योंकि रुपये के बिना किसी का काम नहीं चलता इससे व्यापक है और (शशिवर्णम्) गोल २ चन्द्रमा कैसा वर्ण है (चतुर्भुजम्) चार चवन्नी होती हैं इसलिये चतुर्भुज है (प्रसन्नवदनं) और वह चमचमाता है ही अतः प्रसन्न मुख है, ऐसे रुपये के (ध्यायेत) धारण करने से सम्पूर्ण विघ्न शान्ति हो जाते हैं। बस जो पण्डित इन राजा साहब के पास आता था राजा साहब यही श्लोक पूंछा करते थे और

जब पण्डित गणेश की स्तुति में ले जाता था ठीक २ अर्थ करता था तो राजा कहता था कि ग़लत है और अपने तथा अपने गुरु को बहुत कुछ धन्यवाद दिया करता था। बहुत काल के बाद एक पण्डित राजा के पास आये आते ही राजा ने यह प्रश्न किया। पण्डित जी ने राजा के रुपये का अर्थ जान लिया था इसलिये राजा के पूछते ही कह दिया, 'महाराज' इसका अर्थ रुपया है, राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और कहा इतने दिन हमारे गुरु के बाद दूसरे पण्डित आप ही मिले हो, तब तो इन दूसरे पण्डित ने कहा 'महाराज! एक अर्थ हम इसका और आपको बतावें जो कोई न जानता हो राजा साहब ने कहा 'बताइये, पण्डित जी ने कहा कि इसका अर्थ 'दहीबड़ा भी हो सक्ता है' देखो 'शुक्लाम्बरधरम' दही बड़ा सफ़ेद २ होता ही है (विष्णुम्) व्यापक है ही यानी सब कोई खाता है 'शशिवर्णम्' गोल २ होताही है 'चतुर्भुजम्' चतुरोंके खाने योग्य अर्थात् चतुर ही इसे खाते हैं 'प्रसन्न वदनं' फूला हुआ होता ही है और इसके धारण अर्थात् खाने से सम्पूर्ण विघ्न शान्त हो जाते हैं"। राजा यह अर्थ सुन बड़ा प्रसन्न हुआ और पण्डित को बहुत कुछ दक्षिणा दे बिदा किया, परन्तु यह दहीबड़ा अर्थ करने वाला पण्डित विद्वान्

था, उसके हृदय में यह शोक हुआ कि देखो 'यह राजा कैसी मूर्खता में फंसा है, अतः इससे इसे निकालना चाहिये'। ऐसा विचार राजा के यहां ठहरकर राजा साहब को पढ़ाने लगा। थोड़े काल में राजा साहब को अष्टाध्यायी, महाभाष्य और कुछ काव्य पढ़ा कर एक दिन राजा साहब से कहा कि:—

"शुक्लाम्बरधरं विष्णुं, शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्, सर्वविघ्नोपशान्तये॥

इसका क्या अर्थ है, रुपया या दही बड़ा"? राजा ने कहा 'महाराज! इसका असली अर्थ तो इन दोनोंमें एक नहीं'। पण्डित जी ने कहा कि "हम प्रथम यदि इसका और और अर्थ बतलाते तो क्या आप कभी मानते"?

७५—(कृतघ्नता)

एक ग्राम में दो पुरुष पास ही पास रहते थे, उनमें एक का नाम ऋषीदेव और दूसरेका नाम दीपनारायण था। इन में ऋषीदेव की स्त्री पढ़ी लिखी बड़ी ही चतुर और सुशील थी और दीपनारायण की स्त्री यद्यपि कुछ कम पढ़ी थी पर चालाकी और चतुराई में वह भी कम न थी। दीपनारायण की स्त्री ऋषीदेव की स्त्री से

इस प्रकार हर बातको चतुराई से पूछती थी कि इससे सीख तो लेऊं ही पर इसे यह न मालूम पडे, कि यह सीखती है और यह हर बातके पूछनेके बाद जब वह बतला देती थी तो यह कह दिया करती था कि 'यह तो हमें पहिले ही से मालूम था'। ऋपीदेव की स्त्री विचारी सीधी यह तो जान ही लेती था कि यह चतुराई करती है पर कुछ कहती नहीं थी। इस प्रकार बहुत काल तक दीपनारायण की स्त्री ऋपीदेव की स्त्रीसे धूर्तता करती रही, परन्तु एक दिन ऋपीदेव की स्त्री को क्रोध आया और उसने कहा कि दीपनारायण की स्त्री हमी से सीख जाती और मानती नहीं, इस लिये इसे इसकी कृतघ्नता का फल देना चाहिये। यह ऋपीदेव की स्त्री सोच ही रही थी कि इतने में दीपनारायण की स्त्री आपहुंची, तबतो ऋपीदेव की स्त्री बोली 'बहन! कल अमुक त्योहार है, इस लिये कल पूरनपूरी हुआ करती हैं सो तुम भी अपने घर करना। दीपनारायणकी स्त्रीने पूछा 'बहिन! पूरनपूरी किस तरह हुआ करती हैं, उन के बनाने की क्या विधि है? ऋपीदेव की स्त्री ने कहा कि 'बहिन! जिस दिन पूरनपूरी करना हो सुबह से उठके झाड़े जंगल हो नाई से सब बाल बनवा डाले और फिर कोयला पीस कर सारी देह में लगावे और

जूतियों की माला बना के पहिरे, फिर नंगे हो कर नंगे नंगे दूध में कुछ घी डाल के आटा मांड़े फिर नङ्गे नङ्गे ही करे और किसी से बोले नहीं' दीपनारायणकी स्त्री बोली 'यह तो मैं पहिले ही से जानती थी'। अर्पादेव की स्त्री ने मन में कहा कि 'जा रांड! तुझे इस का फल कि (यह तो मैं पहले से ही जानती थी कल मिलेगा'। अब दीपनारायणकी स्त्री ने घरमें आके अपने पति से कहा कि 'कल हमारे यहां अमुक त्योहार है सो मुझे अमुक अमुक वस्तु लादो और दुपहर तक घर न आना क्योंकि मैं पूरनपूरी करूंगी'। दीपनारायण ने सामान ला दिया और प्रातःकाल से अपने काम में चले गये। यहां इनकी स्त्री ने शौचादि से निवट नाई को बुला सब सिर घुटा दिया, फिर स्नान कर कोयला पीस सारे शरीर में लगाया, पुनः जूतियों की माला पहिन नङ्गे हो दूध में आटा सान नङ्गे नङ्गे पूड़ियां बना रही थी कि इतने में इसे सुबह से तीन बज गये और इसका पति आगया। यह घरमें किवाड़ बन्द किये पूरन पूड़ियां बना रही थी। पति ने दरवाजे से कई वार बुलाया पर इसने किवाड़ न खोले। इसे सन्देह हुआ कि जाने मेरी स्त्री मरगई या उसे सर्प ने काटा या कोई अन्य

पुरुष मेरे घर में है, मेरी स्त्री जाने किवाड़ें क्यों नहीं खोलती, ऐसा सोच एक पड़ोसी के मकान से होकर जिसकी कि छत इसकी छत से मिली थी अपने घर पहुंचा। देखता क्या है कि यह नङ्गी सिर मुड़ा, सारे शरीर में कोयला लगाये, जूतियों का हार डाले, पूरनपूरी कर रही है। प्रथम तो यह पति को देखते ही सख गई ? पुन पतिने कहा 'क्योंरी चुडै़ल ! यह क्या शकल बनाई है' ? यह पूरनपूरी के ध्यान में मस्त थी, इस कारण न बोली। पति ने कोड़ा ले इसकी खाल खींच दी। अब तो बोली कि 'मुझे यह सब ऋषीदेव की स्त्री ने बतलाया था'। अब आप सोचें कि कृतघ्नता ने क्या क्या दुर्दशा कराई और अन्त में यह खुल ही गया कि मैं ऋषीदेव की स्त्री से सीख आई थी।

७६-(अनुभव शून्य मनुष्य कुछ नहीं कर सकता)

एक नदी के तट पर एक पुरुष अन्धा और दूसरा लङ्गड़ा बैठे हुए थे, एक पथिक ने नदी के समीप पहुंचा! अन्धे से पूछा कि 'नदी कितनी है' अन्धे ने कहा 'मोटी जांघ से'। पथिक ने कहा 'तुमने देखी' कहा 'मैं तो अन्धा हूं, मैं कैसे देखता' ? लङ्गड़े से पूछा

'नदी कितनी' ? लङ्गड़ा बोला 'कमर से'। पथिक ने पूछा तुमने मंझाई ? इसने कहा कि 'मैं तो लङ्गड़ा हूं, कैसे मंझाता' ? यह सुन पथिक संशय में था कि 'नदी के पार कैसे जाऊं जाने नदी कितनी गहरी, कहां से कैसा रास्ता हो' ? यह पथिक विचार ही रहा था कि इतने में एक ऐसा पुरुष जो नदी के समीप ही रहता था और उसके आंखें और पैर दोनों थे और कईवार उसकी नदी मंझाई हुई थी आया और बेडर नदी मंझाने लगा और उस पुरुष से जो संशय में खड़ा था कहा 'कि' तुम मेरे पीछे बेडर चले आओ'। वह संशयात्मा पुरुष उसके पीछे चल पड़ा और नदी के पार गया ' बस इसी प्रकार जिनके बुद्धि रूप चक्षु और कर्म करने की शक्तिरूप पग और आचरणरूप नदी वेदों को मंझाते हैं उन्हीं के पीछे मनुष्य चल सके हैं। जिन्होंने केवल सुना ही है और बुद्धि रूप नेत्रों से अन्धे हैं उनकी बात कोई नहीं मान सका और न उनकी कि जिन्होंने बुद्धिरूप चक्षुओं से देखा तो है पर कर्म करने रूप पगों से लङ्गड़े, आचरण शून्य, स्वयं भ्रष्टाचारी हैं-बात मान सका। इस लिये अगर हम दुनियां को सुधारना या अच्छे आचरणों पर लाना चाहते हैं तो आवश्यकता यह है कि प्रथम हम सुधरें और हम अपने आचरणों को अच्छा बनावें।

विदुषी जनता शृणुते कलति, ह्यपि नाचरणं विधिवत् कुरुते। कलिपीडितभारत दुःखिनि-ष्टि रथोभविता कथमित्यनघे ॥

७७-(मेल से लाभ)

एक पुरुष के चार पुत्र थे, जब वह मरने लगा तो उसने अपने चारों पुत्रों को बुला एक रस्सी दी और एक एक बेटे से कहा 'कि तुम इसे तोड़ो' पर वह किसी से भी न टूट सकी। फिर पिता ने कहा कि 'तुम चारों मिलके इसको तोड़ो' पर वह फिर भी न टूट सकी। फिर उसने कहा कि 'अब इस रस्सो को उधेल डालो और एक एक लर तोड़ो'। बच्चोंने ज़रा ही देर में रस्सी उधेल उसके टुकड़े २ कर दिये। फिर पिताने कहा कि 'देखो एक तिनका तुम्हें वर्षा में पानी से नहीं बचा सका, परन्तु जब तुम बहुतसा फूस इकट्ठा करके छप्पर छा लेते हो तो वह बड़ी बड़ी ओलों के गिरने में भी बचाता है, इसी प्रकार जब तक तुम आपस में मिले रहोगे तबतक कोई तुम्हारा कुछ नहीं कर सक्ता पर जहां तुम अलग हुये वहां रस्सीकी तरह टुकड़े टुकड़े कर दिये जाओगे-किसी कविने कहा है:—

चौबे जी। नीचे को झुक देखकर बोले 'ला भगवती ओढ़ना ही ला अब तो बांध लूं'।

शिक्षा– प्यारे भंग के पीने वालो! इस दृष्टान्त से आपको लाभ उठाना चाहिये जिसके नशे से चौबेजी की यह दुर्गति हुई उसको सभ्य।पुरुष कभी ग्रहण नहीं करेंगे।

७९-(अविश्वासियों का अदालत से नाश)

एकबार दो बिल्लियां कहीं से खोये की चार लोई उठालाईं परन्तु उनके परस्पर बांटने में झगड़ा हुआ, अतः दोनों ने निश्चयकर एक बन्दर के पास जा कहा कि 'आप चलकर हमारी खोये की लोई बांट दें'। बन्दर ने कहा 'अच्छा तुम कहीं से तराजू ले आओ'। जब बिल्लियां तराजू ले आईं तो बन्दर ने दो लोइयां एक तराजू के पलड़े पर रक्खीं और दो लोइयां दूसरे पलड़े पर रक्खीं, परन्तु एक पलड़े की लोइयां बनिस्बत दूसरे पलड़े की लोइयों के कुछ भारी थीं इस कारण जब बन्दर ने तराजू उठाई तो भारी लोइयों वाला पलड़ा नीचे को लचक गया। बन्दर उसमें एक हौकला मार खा गया। बिल्लियों ने कहा कि 'तू यह क्या करता है, खाता क्यों है'? बन्दर

ने कहा कि "यह कोट .फीस है" जब बन्दर ने फिर तराज़ू उठाई तो अब वह पलड़ा कि जिसमें हौकला नहीं लगाया था नीचा हो गया, बस बन्दर फ़ौरन ही उसमें भी एक हौकला लगा खा गया। बिल्लियों ने कहा 'यह क्या करता है' ? बन्दर ने कहा "यह तलवाना है"। पुनः पहिले वाला पलड़ा फिर नीचा होगया तो बन्दर ने पुनः उससे हौकला मार खागया। बिल्लियों ने कहा कि 'तू यह वार वार क्या करता है' ? बन्दर ने कहा 'यह हर्जा है'। अब एक पलड़ा तो बिलकुल साफ़ हो गया और दूसरे में कुछ खोया रह गया। बन्दरने अबकी वार बिना ही तराज़ू उठाये वह शेष खोया भी खालिया। बिल्लियों ने कहा 'यह क्या' ? बन्दर ने कहा 'यह शुकराना है'। बस मित्रो! समझलो कि अदालत विश्वासहीन पुरुषों के सर्वस्व को इसी प्रकार साफ़ कर देती है, वहां दोनों के दोनों नाश हो जाते हैं। इस लिये आप लोगों के यहां जैसी पुरानी प्रथा थी कि गांव में पञ्च नियत थे और वही सब न्याय किया करते थे ऐसे ही अब भी पञ्च नियत कर चाहे कितना ही वहां नुकसान पड़े पर घर घर ही में निबटारा कर लिया करो, कभी भूल कर भी अदालत में न जाओ।

८०—(अन्धपरम्परा)

एक महात्मा के पास कुछ तांबे के पात्र थे। महात्मा जब बाहर भ्रमण को जाने लगे तो सोचा कि 'इन पात्रों को कहां लादे २ फिरेंगे इस लिये इन्हें कहीं रखदें'। यह सोच महात्मा ने बरतन ले जंगल में एक स्थान पर गाड़ दिये और उसके ऊपर महात्मा एक कूरी बांध रहे थे कि जिसमें हमारा चिन्ह बना रहे ताकि लौट कर अपने पात्र खोदलें। इतने में कुछ गांव के लोगों ने महात्मा को जङ्गल में कूरी बनाते देखा, बस महात्मा तो बाहर भ्रमण को चले गये और गांव वालों ने यह निश्चय किया कि गांव से जो कोई बाहर जाय वह फलां २ जङ्गल में एक कूरी अवश्य बना जाय इस से बड़ी सिद्धि प्राप्त होती है। बस गांव से जब कोई कहीं जाता था तो वहीं जहां कि महात्मा कूरी बना गया था एक कूरी बना देता। इस प्रकार थोड़ेही दिनों में वहां तमाम कूरी २ ही हो गईं। कुछ काल के बाद जब महात्मा जी लौटे तो कहा 'चलें अमुक जङ्गल से अपने बरतन खोद लावें'। जब वहां पहुंचे तो देखते क्या हैं कि तमाम कूरी २ ही बनी हैं। महात्मा यह चरित्र देख बोले कि:—

श्लोक।

गतानुगतिको लोको न लोकः पारमार्थिकः।
पश्य लोकस्य मूर्खत्वं हृतं मे ताम्रभाजनम्॥

अर्थ –लोक बड़ा ही गतानुगतिक—एक के पीछे दूसरा चलने वाला अर्थात् भेड़िया धसान है,पारमार्थिक नहीं अर्थात् यही नहीं बिचारते कि यह क्या बात है, लोक की मूर्खता तो देखो कि हमारे बरतन भी नष्ट कर डाले, अब क्या जान पड़े कि कौनसी कूरी के नीचे हमारे बरतन हैं।

८१—(भेड़िया धसान)

एक ब्राह्मण बेचारे बड़े ही सीधे साधे ईश्वरभक्त नित्य पूजा पाठ किया करते थे। उनके मकान के पीछे एक कुम्हार का मकान था, अतः पण्डितजी जब दिन में पूजा किया करते और अपना शंख बजाते थे तो साथही उनके मकान के पीछे जिस कुम्हार का घर था उसका गधा इन पण्डितजी के शङ्ख के साथही नित्य बोला करता था। पण्डितजी ने गधे को नित्य अपने सङ्ख के साथ बोलता देख सोचा कि यह कोई पूर्वजन्म का महात्मा जीव है इस कारण पण्डितजी ने उस गधे का नाम 'शंखेश्वर' रख दिया था। एक

दिन अनायास महाराज शंखेश्वरका देवलोक होगया। जब पण्डितजी ने उस दिन दोपहर को पूजा की और शंखेश्वर संख बजाने के साथ न बोला तो जाकर कुम्हार से पूंछा कि 'आज शंखेश्वर कहां गये' ? पण्डितजी को पता लगा कि शंखेश्वरजी का देवलोक होगया। पण्डित जी ने सोचा कि 'खैर ! यदि हमसे और कुछ नहीं हो सक्ता तो महात्मा संखेश्वरके शोक में बाल ही बनवा डालें'। बस पण्डित जी अपनी मूंछ डाढ़ी सिर सब घुटवाकर स्नान कर बनिये की दुकान पर कुछ सौदा लेने पहुंचे। बनिये ने पूंछा 'महाराज ! आज बाल कैसे मुंडवाये हो' ? पण्डित जी ने उत्तर दिया कि 'एक महात्मा शंखेश्वर थे कि जिन का आज देवलोक हुआ सुन हमने सोचा कि महात्माओं के शोक में यदि और कुछ नहीं होसकता तो बाल ही बनवा डालें इस लिये बाल बनवाये हैं। बनिये ने कहा कि 'महाराज ! कहिये तो महात्मा के शोक में हमभी बाल बनवा डालें' ? पण्डित जी ने कहा 'इससे उत्तम क्या' ? बस सेठ जी भी घुटा बैठे। दूसरे दिन बाज़ार के लोगों ने सेठजी से पूंछा कि 'सेठजी ! आपने बाल कैसे बनवाये' ? सेठ जी ने कहा कि 'एक महात्मा शंखेश्वर थे उनका देवलोक होगया तो

हमने सोचा कि अगर महात्मा के शोक में हमसे कुछ और नहीं हो सक्ता तो बाल ही बनवा डालें' । बाज़ार वालों ने सेठ से कहा कि 'क्या हम सब लोग भी महात्मा के शोक में बनवा डालें' ? सेठजी ने कहा 'बड़ी ही अच्छी बात है' । अब तो सब बाज़ार का बाज़ार घुटा बैठा । तीसरे दिन पल्टन के लोग बाज़ार में रसद लेने आये। उन्होंने बाज़ार वालों से पूंछा कि 'क्यों भाई ! आज तुम सब लोग बाल कैसे बनवाये हो' ? बाज़ार वालों ने जवाब दिया कि एक महात्मा कि जिनका नाम शंखेश्वर था उनका देवलोक होगया तो हम लोगों ने कहा कि महात्मा जी के शोक में हम लोग से और कुछ नहीं हो सकता तो बाल ही बनवा डालें' । अब तो पल्टनवालों ने कहा कि 'अगर हम लोगों भी महात्माजी के शोक में बाल बनवा डालें तो क्या बुरा है' ? बाज़ार वालों ने कहा 'वाह वाह महाराज ! बुरा कि बहुत ही अच्छा है' । बस उन थोड़े लोग ने जाकर अपनी पल्टन भर में यह ख़बर करदी, बस पल्टन की पल्टन बाल घुटा बैठी । चौथे दिन जब कप्तान साहब क़वायत लेने आये तो पल्टन की यह सकल देख पल्टन के लोगों से पूंछा कि "वल तुम लोगों ने यह क्या किया, क्यों एक डम सब लोगों

ने अपना अपना बाल बनवा डिया" ? लोगों ने जवाब दिया कि 'हुजूर ! यहां एक महात्मा शंखेश्वर रहते थे वे मर गये, इस लिये हम लोगोंने उनकी रंज में ये बाल बनवाये हैं'। कप्तान ने पूंछा कि 'वह महात्मा कहां रहता था और कौन था' ? लोगों ने कहा 'हुजूर ! हम नहीं जानते, हम लोगों ने बाज़ार में सुना'। कप्तान ने कहा "वल टुम लोग बड़ा बेवकूफ डैम है, जब टुम उसे जानता नहीं फिर क्यों बाल बनवाया ? अच्छा चलो हम टुम्हारे साथ बाज़ार चलेगा" जब कप्तान साहब बाज़ार पहुंचे तो बाज़ार वालों से कहा कि "टुम लोगों ने जो हमारी पल्टन के लोगों से कहा है वह शंखेश्वर महातमा कौन है और कहां रहटा है" ? बाज़ार वालों ने कहा 'हुजूर ! हमसे इस बनिये ने कहा'। कप्तान साहब बनिये के पास पहुंचे और उससे पूछा कि 'टुमने जो बाल बनवाया है और सब लोगों से कहा है टुम जानटा है कि शखेश्वर महात्मा कौन है' ? बनिये ने कहा 'हुजूर ! हमने अमुक पंडित से सुना है'। कप्तान बोला 'आइयो डैमफूल टुम विना जाने बाल क्यों बनवाया और दूसरों से क्यों कहा' ? अब तो कप्तान साहब ने उस पण्डित के पास पहुंच कर पूछा तो मालूम हुआ कि 'महात्मा शंखेश्वर' एक

कुम्हार का गधा था। कप्तान बड़ा गुस्सा हो बोला 'आइयो काला डैम फूल टुम लोग बिलकुल उल्लू है'। अब तो सबके सब बिल्कुल शर्मिन्दा हो गये। प्रिय मित्रो! अब तो यह भेड़िया धसानी छोड़ो। हम अब भी देखते हैं कि जहां रेलमें एक किवाड़ी खुली उसीमें सब घुसते चले जाते हैं चाहे पास ही दूसरा डब्बा खाली क्यों न पड़ा हो ॥

फल—विचारशील पुरुषों को चाहिये कि जब तक किसी कार्य्य के परिणामको अच्छे प्रकार न विचारलें तब तक उसके करनेमें सहसा प्रवृत्त न हो जाना चाहिये।

८२-(तकल्लुफ़ बाजों की दशा)

दो मुसलमान साहब कहीं जारहे थे, अतः स्टेशन पर टिकट ले प्लेटफारम पर दोनों साहब गाड़ी आने की बाट देखने लगे। जिस समय प्लेटफारम पर गाड़ी आई और चढ़ने का समय आया तो एक साहब ने कहा 'चलिये आप सवार हूजिये' दूसरे ने कहा, चलिये चलिये आप सवार हूजिये' इसी प्रकार पहिले ने कहा 'अजी वाह! इसमें क्या? आप सवार हो जाइये, दूसरे ने कहा ' इनशा अल्ला आप सवार हूजिये'। बस इतने में गाड़ी सीटी दे चल पड़ी, ये दोनों

साहब (इनशा अल्ला) में ही रहगये। किसी शायर ने क्या ही सच कहा है :—

शैर—

है यार तकल्लुफ़ में तकलीफ़ सरासर।
आराम से वो हैं जो तकल्लुफ़ नहीं करते ॥

८३—(कष्ट आने के भय से ऐश्वर्य्य की निन्दा)

एक गांव में एक दरिद्र यहां तक दीन कि जिसके घरमें खाली एक मूसल के और कुछ न था। एक वार दैवयोग से अकस्मात् ही ऐसा हुआ कि उस गांव में आग लग गई। अब तो यह दरिद्र अपना मूसल ले, घरसे निकल, रास्ते में आकर नाचने लगा और बोला कि "आज दलिद्दर कामे आओ, आज दलिद्दर कामे आओ" यह गाता हुआ कूद रहा था—कि उसे देख कतिपय उद्यमशील तथा साहसी पुरुषों ने कहा कि सत्य है, वृद्ध जन ऐसों को ही मूसरचन्द कहा करते हैं कि आग के भय से सामान ही न जोड़े, पाखाने की दिक़्क़त से भोजन ही न करे। यह क्या अक्लमन्दी की बात है, सत्य है—

रत्नं न प्राप्नोति हि निर्मलत्वं,
शाणोपलारोपणमन्तरेण ॥

८४-(जब दैव सीधा होता है थोड़े में सब कुछ कर देता है)

एक गांव में आपस में बैठे हुए कुछ बनिये लोग अपने २ रोज़गार की प्रशंसा कर रहे थे। उनमें से एक बनियां बोला-'भाईयो ! यह तो निर्भ्रान्त बात है कि धनसे तो धन सब कमा ही लेते हैं इसमें क्या बड़ी बात है-मैंने पहिले बिना धन के ही लक्ष्मीको पैदा किया था। जब कि मैं गर्भ में था और मेरे पिताजी का देहान्त होगया तो मेरे मूर्ख कुटिल भाइयों ने मेरी पूज्य माता से सब धन छीन लिया। मेरी माता मेरे गर्भ के बचाने के वास्ते मेरे पिता के मित्र रामदास बनिये के यहां रही, वहीं मेरा जन्म हुआ। मेरी माता बड़े परिश्रम और बड़े कठिन कार्य्य करके मेरा पालन पोषण करने लगी। जब मैं कुछ बड़ा हुआ, तो मेरी माता ने एक पाठशाला में मुझे पढ़ने भेज दिया। जब मैं कुछ हिसाब किताब पढ़गया तब मेरी माता ने मुझ से कहा कि 'बेटा ! तू वणिक् पुत्र है, अतः अब तुम कुछ रोजगारकरो। इस नगर में एक धनराय बड़ा धनी

सेठ रहता है, जो कि कुलीन निर्धन बनियों के पुत्रों को धन देता है कि व्यौपार करें सो तुम उनके पास जाकर उनसे कहो कि महाराज मैं दरिद्री हूं, मुझे कुछ धन रोज़गार करने को दो। मैं माता के कहने से उसके पास गया। वहां जाकर मैंने प्रणाम किया। वह सेठ धनराय एक बनिये के पुत्र से क्रोध में यह कह रहा था कि 'भाई! यह जो मरा मूसा पड़ा है इससे भी बुद्धिमान् मनुष्य धन पैदा कर सकते हैं। तुझे तो मैंने इतनी अशर्फी दी थीं उनका बढ़ाना तो अलग रहा तू मूर्ख उनको भी न रख सका। मैंने यह सुनकर वह मूसा ले लिया और सेठके मुनीम की बहीमें वह मूसा मैंने अपने नाम चढ़वा लिया। जब मैं वहां से उसे लेकर चला तो सेठ जी और उसके मुनीम हंस पड़े। वहां से आ मैंने एक बनिये को उसकी बिल्ली के वास्ते दो मुट्ठी चनों से उस चूहे को बेच दिया और उन चनों को लेकर भाड़ पर भुनवाकर पानी का ठण्डा घड़ा ले शहर से बाहर छाया में सड़क के किनारे एक टीली पर जा बैठा।

उसी रास्ते को लकड़हारे बन से लकड़ी बेचने आते थे। मैं उनको शीतल जल और चने बड़ी विनय पूर्वक देता था तब हरेक लकड़ी के बोझ वालों ने मुझे प्रसन्न हो दो

दो लकड़ी दीं, मैंने वे लकड़ी शहर में लाकर बेच दीं, फिर चने ख़रीदे और भुनवाकर फेर ले गया, फिरभी मैंने उसी तरह उनको चने और पानी दिया। इसी प्रकार कुछ दिन मैंने किया तो मेरे पास कुछ धन हो गया। तब कुछ दिन के बाद मैंनेही उनकी सब लकड़ियां ख़रीदलीं। दैवयोग से मेंह वर्ष गया, नदी बढ़ गई, तब वह मेरी ख़रीदी हुई लकड़ी कई सो रुपये को बिकीं, फिर मैंने बज़ाजे की दुकान कर ली। इसी प्रकार करते २ जब मैं बड़ा धनिक हो गया तब मैंने सोने का मूसा बनवा सेठ धनराय को दिया, सेठ ने मेरी बुद्धि की बड़ी प्रशंसा की और अपनी कन्या का विवाह मेरे साथ कर दिया। इस प्रकार मुझ निर्धन ने लक्ष्मी प्राप्त की। यह सुन कर और बनियों को आश्चर्य हुवा। चित्र अर्थात् विलक्षण कामों से बुद्धि ही बिना दिवारके चित्र बनाई जाती है।

८५—(एक आर्य्य और उसकी पौराणिक भावज की वार्त्ता)

एक आर्य्य पुरुष किसी ग्राम में निवास करते थे। कालवस इनके ज्येष्ठ भाई का देवलोक होगया। इनकी भावज पौराणिक विचार की थी। इन्होंने कहा कि हम भाई की अन्त्येष्टि वैदिक रीति से करेंगे पर भावज ने जिसने कि गरुड़ पुराण सुन रक्खा था यह बात

न मानी और कहा 'यह कभी नहीं हो सकता, हमारा पति मार्ग में कष्ट भोगेगा, इस लिये हम पौराणिक रीति से ही करेंगी।' भाई बिचारा चुप हो गया। भावज ने पौराणिक रीति से ही उस की क्रिया वैतरणी गोदान आदि विधान पूर्वक की। भाई ने अपनी उस भावज से कहा 'क्यों भावज! गरुड़पुराण में तो अंगुष्ठप्रमाण शरीर लिखा है तो फिर उसी अङ्गुष्ठ प्रमाण वाले शरीर के ही अनुसार भाई जी के हाथ होंगे तो जो गौ तुमने इस ख्याल से दान की है कि इसकी पूंछ पकड़ के वह वैतरणी पार होंगे सो उस अंगुष्ठ प्रमाण वाले शरीर के अनुसार भाई जी के छोटे २ हाथों में इतनी मोटी पूंछ कैसे पकड़ी जावेगी? पुनः जब दशगात्रादि कर एकादशाह का दिन आया तो भावज ने सम्पूर्ण वस्त्र कुरता, धोती, साफा, रजाई गद्दा, पलङ्ग, बरतन, हाथी और घोड़ा आदि सब कुछ महापात्र के देने को एकत्र किया। तब भाई ने अपनी भावज से कहा कि 'जब अंगुष्ठ प्रमाण जीव का शरीर गरुड़पुराणमें लिखा है तो उसके लिये आपने ये साढ़े तीन हाथ की चारपाई क्यों दी? इस पर वह अंगुष्ठ प्रमाण कहां लोटा लोटा फिरेगा और यह पांच हाथ की रजाई गद्दा क्यों दिया? इसमें तो अंगुष्ठ प्रमाण

शरीर दब जायगा और निकल भी नहीं सकेगा। जिस दिन जहां यह ओढ़ के पड़ेगा वहीं दबा पड़ा रहेगा और इसे उठा के उसके साथ कौन चलेगा? कुली कितने दान किये जो रथ पर उठा रक्खेंगे और फिर सिर भी गोज़मटर जितना होगा फिर यह १० गज का साफा कैसे बांधेंगे? पुनः पैर भी छोटे २ होंगे फिर इस तेरह अंगुल का जूता वह कैसे पहिरेंगे? वह तो मय शरीरके जूता के पञ्जे ही में पड़े रहेंगे'। भावज ने कहा 'भाई! हम से बहस न करो, हमें करने दो।' पुनः भाई ने अपनी भावज से कहा कि 'ये रथ हाथी घोड़े बरतन वस्त्र और भोजन जो आप ने महापात्र को कराये ये तो सब भाई जी को पहुंचे होंगे परन्तु हमारे भाई जी अफिऊन भी खाते थे सो आधपाव अफिऊन भी इन महाराज महापात्र जी को घोर के पिलाओ जिसमें उन्हें अफिऊन भी पहुंच जाय क्योंकि बिना अफिऊन उन्हें बड़ा कष्ट होगा, यहां तक कि उनसे तो बैठा तक न आयगा।' भावज ने कहा 'यह तो ठीक है, उसने आधपाव अफिऊन मंगा के महापात्र से कहा 'महाराज! इसे खाइये क्योंकि इसके बिना मेरे पति को बड़ा कष्ट होगा, नहीं तो मैंने जो कुछ दिया है सब फेर लूंगी।' पुनः भाई

ने कहा 'भौजाई ! तुम तो भाई जी को बहुत प्यारी थीं, यहां तक कि तुम एक क्षण भी भाई जी से अलाहिदा हो जाती थीं तो भाई जी को बड़ा कष्ट होता था इस लिये तुमभी महापात्र के साथ जाव जिसमें उन्हें स्त्री भी मिल जाय, क्योंकि स्त्री के विना भाई जी को बड़ा कष्ट होगा, बस भावज के समझ में यह सब आडम्बर आ गया और इसने महापात्र से सब सामान वापिस ले लिया ॥

—०—

८६—(बुद्धिबल से एक भी बहुतों को जीत लेता है)

किसी नगर में एक जिमीदार के खेत में चार पुरुष आ घुसे। उनमें एक—ब्राह्मण, २—क्षत्रिय, ३—वैश्य और ४—नाई था। खेत वाले ने आकर इन चारों को खत में घुसा हुआ देख विचारा कि मैं अकेला और ये चार हैं, अतः लड़ने में तो ये मुझे ही दुरुस्त कर देंगे' यह शोच और बुद्धि से उपाय विचार कर बोला कि " महाराज ! तुम ब्राह्मण होने से गुरु, क्षत्रिय—गुरुभाई, और वैश्य महाजन इन तीनों का तो कुछ पश्चात्ताप नहीं, परन्तु बताइये तो भला इस नाई ने

क्या सोचकर मेरा खेत सत्यानाश किया ? इसका आपही न्याय करें "। यह सुन तीन तो चुप रहगये, बस फिर क्या था किसान ने नाई को खूब ठीक बनाया और गन्ने छीन खेत से बाहर निकाल दिया। फिर इन तीनों से कहा —' ब्राह्मण ! तुम गुरु, यह गुरु भाई, हम तुम दोनों का धन एक ही है पर इस बनिये ने क्या समझ खेत में नुकशान किया ? आप ही विचारिये कि हम या तुम यदि इसके यहां से रुपय लावें तो क्या यह ब्याज छोड़ देगा ?" यह सुन जब वे चुप हो गये तो उसने वैश्य का गला पकड़ और बहुत कुछ उसकी मरम्मत कर खेत से निकाल बाहर किया। फिर इन दोनों से कहा ' क्यों भाई ! तुम दोनों में भाई बराबर का, हम राजपूत हैं तो क्या आप के समान हुआ चाहता है ! बराबरी सध चुकी, देखली आपकी सज्जनता" । यह सुन जब वे मौन हुए तो 'भाई साहब जाइये यह मार्ग है, यह कह कर रजपूत जी भी विदा किये और ब्राह्मण से कहा— महाराज ! आप भी कृपा कीजियेगा" यह सुन ब्राह्मण भी ' चिरञ्जीव ' कह चले गये। इस दृश्य को आस पास के लोग जो कि देख रहे थे कहने लगे कि बड़े आश्चर्य की बात है देखो इस एक ने ही चारों को तिरस्कृत कर निकाल

दिया और सब गन्ने छीन लिये। तब उनमें से एक ने कहा कि 'भाई! क्या तुमने यह कहावत नहीं सुनी है कि—"फूट फूटा नर्द मारी गई" यह बिलकुल सत्य है'। यह सुन सब चुप रह गये।

फल—जिन पुरुषों में एकता नहीं होती उनकी सर्वत्र ऐसी ही दुर्दशा होती है, अतः विचारशील पुरुषों को चाहिये कि अपने समूह में महारानी 'फूट' का प्रवेश न होने दें।

—❀—

८७—[तत्त्वपदार्थ की पुड़िया]

एक पण्डित १६ वर्ष पर्यन्त काशी जी में अध्ययन करते रहे। एक दिन वह पण्डित जी एक वैद्यराज के पास पहुंचे और कुछ देर तक बैठे हुए यह देखते रहे कि वैद्यराज के पास जितने रोगी आते थे तो वैद्यराज प्रथम प्रायः सभी को जुल्लाब दिया करते थे। बस पण्डित जी ने सोचा कि संसार में यदि कोई तत्त्व पदार्थ है तो यही जुल्लाब है। बस पण्डित जी भी वैद्यराज से दो तीन जुल्लाब कोई सनाय, कोई अरण्डी के तेल का और कोई जमालगोटे का सीख अपने घरको चले गये। इनके गांव में आते ही यह हल्ला मच गया

कि अमुक पण्डित १६ वर्ष काशी पढ़ के लौटा है और इसके अतिरिक्त यह भी बात थी कि पण्डित जी ने स्वयं भी ग्राम वालों से यह कह दिया था कि 'हम एक ऐसी तत्वपदार्थ की पुड़िया सीख आये हैं कि उस से दुनियां के सब काम सिद्ध होजाते हैं' । अतः ग्रामवासियोंने यह भी जान रक्खा था। एक दिन उसी ग्राम के एक धोबी का गधा खोगया था, धोबी बड़ा हैरान था । इतने में उस धोबी की स्त्री ने कहा कि 'तू इतना हैरान क्यों होता है ? क्यों नहीं उस पण्डित के पास जाकर जो काशी में १६ वर्ष पढ़े हैं उन से एक तत्त्वपदार्थ की पुड़िया ले आता है' ? धोबी ने वैसा ही किया । धोबी पण्डित जी के पास जा हाथ जोड़ बोला कि 'महाराज ! मेरा गधा खोगया है'. पण्डित जी बोले 'तू क्यों नहीं हमारे पास से एक तत्त्वपदार्थ की पुड़िया ले जाता है कि जिससे तेरा गधा मिल जाय' ? अतः पण्डित जी ने धोबी को सनाय के जुल्लाब की एक पुड़िया दी । धोबी को पुड़िया खाने के कुछ पश्चात् पाखाना लगा और धोबी अपने गांव में एक तालाब जो गांव के मकानोंके पीछे था पाखाने गया' वहां उसका गधा चर रहा था, धोबी गधा पा बड़ा प्रसन्न होगया और उसको सच्चा विश्वास हो

गया कि तत्त्वपदार्थ की पुड़िया बड़ी अच्छी है । कुछ दिन के बाद उस राजा के ऊपर एक फ़ौज़ चढ़ी आती थी। राजा साहब इस दुःख से बहुत ही दुःखित थे और यह बिचार में नित्य ही राजसभा में प्रविष्ट रहता था। एक दिन यह धोबी राजा साहब के कपड़े धोकर लाया और बहुत काल तक बैठा रहा, किसी ने कपड़े न लिये तो धोबी ने राजा के खिदमतगारों से कहा कि 'भाई साहब! कपड़े ले लो, मुझे और काम है'। राजा के भृत्यों ने कहा 'तुझे कपड़ों की पड़ी है, राजा साहब के ऊपर अमुक राजा की .फ़ौज़ चढ़ी आती है सो यहां आफ़त मची है, तू अपनी निराली ही गाता है'।

तब यह सुन धोबी ने कहा 'राजा साहब उस पण्डित को जो कि १६ वर्ष काशी में पढ़ा है बुलवा कर क्यों नहीं तत्त्वपदार्थ की पुड़िया ले लेते जो दुश्मन की सेना अपने आप .फ़ते हो जाय'? भृत्यों ने जाकर राजा से कहा कि 'एक धोबी यह कहता है'। राजा ने धोबी को बुला कर पण्डित जी की व्यवस्था पूंछी। धोबी ने कहा 'अन्नदाता! पण्डितजी के पास एक तत्त्व पदार्थ की ऐसी पुड़िया है कि उससे सब काम सिद्ध होजाते हैं। एक बार मेरा गधा खोगया था। मैं

पण्डित जी के पास जाकर तत्वपदार्थ की पुड़िया ले आया और उसे खाई कि फ़ौरन ही गधा मिल गया'। राजा को निश्चय आगया, अतः राजा साहब ने पण्डितजी को बुलवा बड़ी प्रतिष्ठा की और पीछे हाथ जोड़ के पूंछा कि 'महाराज! पण्डितजी! हमारे ऊपर अमुक राजा की फ़ौज चढ़ी आती है और उस राजा की सैना बड़ी प्रबल है सो क्या उपाय करें'? पण्डितजी ने कहा महाराज हम आपकी सेनाको एक ऐसी तत्व पदार्थ की पुड़िया देंगे जिस से कि शीघ्र ही शत्रु का पराजय और आप का विजय होगा; लेकिन आप हमें २ मन जमालगोटा मंगा दीजिये'। यह सुन राजा ने तुरन्त ही जमालगोटा मंगा दिये और पण्डित जी ने उन्हें कूट पीस, ठीक कर तयार कर रख लिये। जब इस राजा पर शत्रु की सेना चढ़ आई और इस राजा की सेना भी लड़ाई के लिय वर्दी पहर अस्त्र ले तय्यार हुई तब इन राजा साहब ने काशी के पण्डित जी को बुलाकर कहा कि 'महाराज! अब आप कृपाकर इस सेना को तत्वपदार्थ की पुड़िया दीजिये'। पण्डित ने सम्पूर्ण सेना को मय राजा के जुल्लाब दे दिया। जिस समय इस राजा की सेना शत्रु सेना के सन्मुख पहुंची तो इस राजा की सारी सेना को दस्त आने

शुरू होगये और यह दशा हुई कि कोई कहीं और कोई कहीं। कोई किसी नदी और कोई किसी नाले में धोती पतलूने खाले पाखाने फिर रहा है। शत्रु सेना ने दूर से यह दृश्य देख, शत्रुसेना के अफ़सर बड़े विस्मित हुये कि यह क्या कोई नई कवायत है? कभी हम लोगों ने किसी शत्रुसेना को इस भांति लड़ते नहीं देखा। यह सोच शत्रु के अफ़सरोंने एक अपना जासूस इस राजा की सेना की यह नई कवायत देखनेको भेजा। जासूस ने आकर देखा कि सबों ने जुल्लाब ले रक्खा है और सबों को दस्त आ रहे हैं। जासूस ने जाकर अपने दल में ज्योंही यह वृत्तान्त कहा त्योंही उस सेना ने चढ़ कर इसका विजय किया।

फल–सत्य है अन्धविश्वास से नाश ही होता है। हमारे यहां भी सोमनाथ पट्टन को विदेशियों ने तत्व पदार्थ की पुड़िया के ही निश्चय से तोड़ा। किसी कवि ने सच कहा है:—

श्लोक।

न भूतपूर्वा न कदापि दृष्टा,
न श्रूयते हेममयी कुरंगी।

तथाऽपि तृष्णा रघुनन्दनस्य,
विनाशकाले विपरीतबुद्धिः ॥

—*—

८८—[परिहास से दुर्दशा]

कोई ब्राह्मण अपने घर में तीन भाई थे। उन में बड़ा भाई कुछ पढ़ा लिखा था इस लिये कचहरी का काम किया करता था, अन्य दो भाई कुछ पढ़े लिखे न थे इससे ये काश्तकारी का काम किया करते थे। एक दिन इन मूर्ख दोनों भाइयों ने परस्पर सलाह की कि "भाई जी बड़े चालाक हैं, आप तो दिन भर कचहरी का काम करते छाया में रहते हैं, और हम तुम दोनों से खेती का काम लेते है। अब कल से हम तुम भी कचहरी चला करेंगे और भाई साहब से कहेंगे कि तुम हल जोतने जाओ"। जब सायंकाल को ये दोनों मूर्ख जङ्गल से आये और बड़ा भाई कचहरी से आया तो दोनों ने बड़े भाई से कहा 'भाई साहब ! कल आप हल ले के जांय, कल से हम में से एक कचहरी जायगा'। बड़े भाई ने बहुत कुछ समझाया और कहा कि 'तुम एक अक्षर पढ़े नहीं, कचहरी जाकर क्या करोगे'? इन्होंने कहा 'कुछ हो हममें स कल से एक

कचहरी जायगा'। बड़े भाई ने बहुत समझाया पर ये दोनों दूसरे दिन हल न ले गये। जब बड़े भाई ने बैल बंधे देखे तो यह बेचारा बैल जोड़ हल जोतने चला गया। अब इन दोनों में से मंझला भाई आज अपने बड़े भाई की पोशाक पहिर कचहरी पहुंचा। वहां बादशाह मुसलमान था और उस समय बादशाह साहब बाल बनवा रहे थे। यह मूर्ख बादशाह को देख खूब ही खिल खिला के हंसने लगा। बादशाह ने अपने आदमियों से पूंछा 'यह कौन पुरुष है? इसको यहां लाओ। बादशाह ने पूंछा तुम एका एक क्यों हंसे'? इसने कहा कि 'हमें तुम्हारा कलौंदा सा सिर देख यह ख्याल हुआ कि अगर आपका कोई सिर काट डाले तो क्या पकड़ के उठावे, क्योंकि आपके चोटी वोटी तो है ही नहीं'। बादशाह ने यह गुश्ताखी देख उसे उसी समय जेल भेज दिया और कहा 'इसका मुकद्दमा दूसरे दिन करूंगा'। परन्तु दूसरे दिन इस मूर्ख का छोटा भाई भी पहुंचा। जब यह पहुंचा तो बादशाह ने पूछा 'तुम कौन हो?' इसने कहा 'हुजूर! हम उस के भाई हैं जिसको आपने कल कैद किया है'। तब तो बादशाह ने कहा 'क्योंजी! तुम्हारा भाइ बड़ा ही है बेवकूफ। मैं कल हजामत बनवा रहा था कि

इतने में तुम्हारा भाई आया और एका एक खड़ा हो कर हंसने लगा। हमने उसे बुलवा के पूंछा कि तुम क्यों हंसे ? उसने जवाब दिया कि मैं इस लिये हंसा कि अगर आपका कोई सिर काट डाले तो चोटी तो आपके है ही नहीं क्या पकड़ के उठावे'। यह सुन यह दूसरा मूर्ख बोला कि 'हुजूर ! वह मूर्ख था अगर सिर में चोटी नहीं तो मुंह में लाठी घुसेड़ के उठाले'। बादशाह ने इस बेवकूफ़ को भी उसी के साथ जेल भेज दिया। अब तो तीसरे दिन उन दोनों मूर्खों का बड़ा भाई जो रोज कचहरी में जाया करता था पहुंचा और बादशाह को सलाम कर और बात चीत करके मौक़ा पा बोला कि 'हुजूर ! आपके यहां हमारे दो बैल कैद हैं जिनसे दो हल बन्द हैं"। बादशाहने कहा कि आज क्या आप भी पागल हो गये हैं ? 'कैसी बातें करते हो ? कहीं दो बैलों से दो दो हल बन्द हुआ करते हैं ? 'इन्होंने कहा 'हुजूर ! वे इसी क़िस्म के बैल हैं'। तब तो इन्होंने उनकी मूर्खता का सारा समाचार वर्णन किया कि इस इस तरह मुझे उन दोनों मूर्खों ने हल जोतने का भेजा और आपकी खि़दमत में आके यह गुस्ताखी की'। बादशाह ने उन्हें मूर्ख जान छोड़ दिया।

दोहा।

मूरखका मुख बम्ब है, निकसत वचन भुजङ्ग।
ताकी औषधि मौनहै, विष नाहिं व्यापत अँग॥

८६—[विना सोचे शीघ्र काम करने से हानि]

एक किसी चतुर ब्राह्मण ने एक तोता को पढ़ा कर यह संस्कृतक वाक्य कण्ठ करा दिया था कि—"अत्र कः सन्देहः ?" [इसमें क्या शक है ?] जब तोता ने यह अच्छे प्रकार कण्ठ कर लिया तो वह उसे बेचने को गया। एक साहूकार ने पूछा कि 'इस तोते का क्या मूल्य है ?' ब्राह्मण ने कहा—'लाख रुपये'। साहूकार ने कहा कि 'इसमें ऐसा क्या गुण है जिससे इसका लाख रुपया मूल्य है ?' ब्राह्मण ने कहा 'संस्कृत बोलता है, पूछ लीजिये'। साहूकार ने तोते से कहा 'क्यों भाई ! तेरी लाख रुपये क़ीमत है ? क्या तू संस्कृत बोलसकता है'? तोते ने कहा—'अत्र कः सन्देहः?' बस साहूकार जी मोहित हो गये और लाख रुपये दे तोता ख़रीद लिया। उसे घर ले जाकर कहा—'चुग्गा खावेगा, पानी पीयेगा ?' इसके जवाब में तोते ने कहा—'अत्र कः

सन्देहः ’। साहूकार ने परीक्षार्थ कि इसे और भी कुछ आता है या नहीं पूछा—‘तोते ! भूसा चरेगा ?’ कहा ‘अत्र कः सन्देहः’। फिर कहा ‘मरेगा? ’ तोते ने कहा ‘अत्र कः सन्देहः’। निदान प्रत्येक बात के उत्तरमें जब वह यही कहता रहा तो वणिये ने जान लिया कि इसे सिवाय ‘ अत्र कः सन्देहः ’ के और कुछ नहीं आता तो लाचार हो कर कहा ‘अरे ! ये लाख रुपये व्यर्थ ही गये तो कहा ‘अत्र कः सन्देहः ’। यह ‘सुन वेचारा साहूकार अपने घर में पछता कर बैठ रहा। किसी कवि का यह वचन सत्य है:—

सहसा विदधीत न क्रिया-
मविवेकः परमापदां पदम्।
वृणुते हि विमृश्य कारिणं,
गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः॥

फल—मनुष्य को चाहिये कि कोई भी काम क्यों न हो पहिले अच्छे प्रकार सोच लेवे, शीघ्रता से न करने लगे, अन्यथा पश्चात्ताप के सिवाय फिर और कुछ हाथ नहीं आता।

—*—

६०–[बहुत चालाकी से सर्वस्व नाश]

किसी नगर से चार आदमी बाहर व्यापार के लिये निकले। कुछ दिन बाहर रहकर चारों ने अच्छा धनोपार्जन किया। जिस समय वे चारों धन सञ्चित कर घरको लौटे तो मार्ग में एक स्थान पर चारों रात में ठहर गये। अब जिस समय भोजन की फिकर हुई तो चारों की यह सम्मति निश्चित हुई कि दो आदमी जाकर भोजन ले आवें। अतः उनमें से दो आदमी भोजन लेने गये और दो स्थान पर असबाब की रक्षा में रहे, परन्तु अब वहां दशा यह हुई कि जो दो आदमी भोजन लेने गये उन्होंने तो यह सम्मति की कि 'यार! ऐसा भोजन ले चलो कि जिसमें उस भोजन को खा के वे दोनों आदमी मर जांयें तो उनका द्रव्य भी हम तुम आधा आधा बांट लेंगे'। यह सोच विषमिश्रित लड्डू ले आये और इन स्थानिक दोनों पुरुषों ने यह सम्मति की कि 'वे ज्योंहीं भोजन लेके आवें तो उन दोनों को जान से मार दो ताकि उन दोनों का द्रव्य हम तुम दोनो बांट लें'। उन लोगों को आते ही इन स्थानिक दोनों ने उन्हें तलवार से मार दिया। पश्चात् उनका भी द्रव्य ले चलने की तय्यारी की। जब चलने लगे तो सोचा कि 'यार! यह भोजन जो वे दोनों

लाये थे रक्खा है, इस लिये आओ दोनों प्रथम भोजन करलें, फिर चलें परन्तु भोजन में तो वहां विष मिले लड्डू थे ज्यों ही उन दोनों ने वे लड्डू खाये कि कुछ देर के बाद दोनों सो गये। अब आप सोचलें कि चालाकी से क्या परिणाम निकला ॥

६१–[अभ्यास]

एक गड़रिये के पास दो कुत्ते बड़े शिकारी थे। गड़रिया रोज उन्हें दो चार कोश दौड़ाता था और खाने को उन्हें साधारण ही बेझड़ की रोटी और मट्ठा दिया करता था। एक साहब बहादुर के पास भी दो कुत्ते थे जिन को कि साहब बाहदुर रोज दूध आदि मंगा मंगा खिलाया करते थे और उनको बड़ी सजावट के साथ रक्खा करते थे। एक दिन गड़रिये के कुत्तों की प्रशंसा सुन के कि वे बड़े शिकारी हैं गड़रिये को बुलाके कहा कि 'शिकार खेलने में तुम अपने कुत्ते हमारे कुत्तों के साथ छोड़ोगे'? गड़रिये ने कहा 'हां' और अपने कुत्ते ला साहब बहादुर के कुत्तों के साथ छोड़े तो गड़रिये के कुत्ते साहब बहादुर के कुत्तों से आगे निकल गये। यह देख साहब बहादुर बड़े शरमाये और गड़रिये से बोले

कि–'वल गड़रिया ! तुम अपने कुत्तों को क्या खिलाटा है' ? गड़रिये ने जवाब दिया कि 'वेभड़ की रोटी और मट्ठा' साहब बहादुर ने देखा तो गड़रिया वास्तविक में वेभड़ की रोटी और मट्ठा ही खिलाता था। यह देख साहब बहादुर ने गड़रिये कहा कि 'तुम अपने कुत्ते हम को दे दो'। गड़रिये ने कहा 'हम अपने कुत्ते हुजूर कभी नहीं दे सकते'। पुनः साहब बहादुर ने कहा 'अच्छा अगर तुम दोनों कुत्ते नहीं देते तो एक कुत्ते के साथ बदल डो'। गड़रिये ने एक कुत्ता बदल दिया। साहब को ख्याल था कि यह कुत्ता जब गड़रिये के यहां केवल वेभड़ का रोटी मट्ठा पाता है तब तो इतना शिकारी है और जब रोज दुग्धादि पायेगा तो बड़ा शिकारी होगा। बस साहब बहादुर कुत्ते को ले जाकर दुग्धादि खिलाने लगे लेकिन कुत्ता साहब बहादुर के यहां जंजीर में बंधा रहे था और गड़रिये ने साहब बहादुर का कुत्ता ले अपने कुत्ते के साथ रोज उसे दो चार कोश दौड़ाना और शिकार को टोरना दिखलाया। कुछ दिन के पश्चात् साहब बहादुर ने गड़रिये से कहा कि 'अब तुम हमारे कुत्तों के साथ अपने कुते को छोडो' गड़रिये ने अपने कुते छोड़े तो गड़रिये के कुते फिर आगे निकल गये। पुस्तकाल

फिर वह शर्मिन्दा हुये और गडरिये को कुछ दे के जो गडरिये का दूसरा कुता था वह भी ले लिया और दोनों कुतों को खूब दुग्धादि वगेरः खिला तैय्यार किया परन्तु गड़रिया साहबके कुत्तोंको ले वही रोज दौड़ाता और शिकार दबोचना सिखाता रहा। कुछ दिन में साहब ने गडरिये को बुला कहा कि 'अच्छा तुम अब अपने कुट्टों को हमारे कुट्टों के साट छोड़ो'। परन्तु फिर भी गडरिये ने ज्याहीं अपने कुत्ते छोडे, इसके कुत्ते आगे निकल गये, सच है:—

श्लोक।

अभ्यासदृशो नैव, लोकेऽस्मिन्हितसाधकः।
अतः स एव कर्तव्यः, सर्वदा साधु वर्त्मना॥

६२—(मूर्खोंका ससुराल जाना)

चार पुरुष अत्यन्त मूर्ख थे। उन में १—मूर्ख, २—मूर्खस्वामी, ३—मूर्खनेता और ४—मूर्खमूर्ख (मूर्खों में भी अतिमूर्ख) था। संयोगवश ये चारों किसी स्थान पर एकत्रित होगये और अपनी २ मूर्खता की प्रशंसा करने लगे। उनमें से पहिले मूर्ख बोला—

भाइयो ! मैं पहिले एक दिन अपनी ससुराल में किसी बड़े उत्सव के कारण गया। मार्ग में चलते २ रात्रि होगई। मैंने सोचा कि रात्रिमें वहां जाना ठीक इस लिये नहीं कि इन मेरे वस्त्र तथा उत्तमोत्तम आभूषणोंको रात्रि में कोई ठीक २ न देख सकेगा और ऐसी दशा में इनका पहिरना व्यर्थ सा हो जायगा। यह विचार मैं उसी ग्राम के समीप एक साधु की कुटी में ठहर गया। साधु ने भी मुझे सजा धजा देख मेरा बड़ा सत्कार इस लिये किया कि यह कोई बड़े कुल का आदमी है। मैं वहां ठैर अवश्य गया परन्तु रात्रि में क्षुधा देवी के कोप से व्याकुल हो मुझे निद्रा न आई और मैं यहांतक व्याकुल हुआ कि भ्रमवश भिक्षा मांगता हुआ अपने ससुर के घर ही चला गया। वहां स्वयं मेरी साली ही भीख लेकर चली आई और कहा-'ले मंगते ! भीख ले' ऐसा कहती हुई जब मेरे समीप आई तो मैं उसकी आवाज़ पहिचान उलटे पगों इस लिये हटा कि यह पहिचान न ले। मैं पिछाड़ी सरका वह आगे २ सरकती चली आती थी, निदान ऐसा हुआ कि मैं पीछे एक भारी गढ़े में जा गिरा। यह देख आस पास के लोग दीपक ले आये और मुझे गढ़े से निकाल पहिचान लिया तो सब लोगों ने बड़ी

लानतें दीं। उसी दिन से मैं अति लज्जित हुआ फिर ससुराल नहीं गया हूं और इसी लिये मेरा नाम मूर्ख पड़ गया।

६३–(मूर्खस्वामीका ससुरालमें जाना)

मूर्खस्वामी बोला कि भाई! मैं भी एक समय अपनी ससुराल में गया। वहां के लोगोंने जब घरकी कुशल वार्ता पूछ मुझ से यह कहा कि चलिये भोजन कर लीजिये'। मेरे मुख से निकल गई कि 'मैं खा कर ही चला था।' मेरे ऐसा कह देने पर भी जब उन लोगों ने बहुत आग्रह किया तो मैंने सोचा कि 'जाय लाख रहे शाख' अब खाना ठीक नहीं। उन के बहुत कुछ कहने पर भी भोजन करना स्वीकार न किया और सो रहा। परन्तु रात्रि में भूख के मारे चैन न पड़ने के कारण मैं उठा और उनके घरमें भोजन जो ढका और संभाला हुआ रक्खा था देखने लगा। इस देखाभालमें खुड़का होजाने से मेरी सास जाग उठी और उसने मुझे चोर जानकर पकड़ लिया। मैंने एक लड्डू मुंह में रख लिया पर वह सख्त होने के कारण फूट न सका अर्थात् ज्यों का त्यों मुह में ही रक्खा रहा। अन्त में उन्हों ने मुझे पहिचान

भी लिया परन्तु यह भी पूछते रहे कि 'तू कोन है?' और मैं उत्तर में 'हूं हूं' करता रहा। तब उन्हों ने यह जान करकि किसी रोगवश इनका मुख बन्द होगया है। एक वैद्य बुलाये। वैद्य जी महाराज भी पूरे पहुंचे हुए ही थे आपने मेरा गाल फूला देख कर झट नस्तर मारदिया जिससे कि ख़ूनकी धार वह निकली, परतु मैंने भी उस समय ऐसी बुद्धिमानी की वह लड्डू इधर से दूसरी तर्फ़ रखलिया। तब वैद्यजी बोले कि अब यह रोग उधर से इधर आगया है, बस अब के नस्तर में काम साफ़ है यह कह कर उस मूर्ख वैद्य-राज जी ने उस तर्फ़ भी नस्तर लगा मेरा गाल फाड़ डाला। फिर क्या था, लड्डू बाहिर निकल पड़ा, भेद खुल गया और वहां के सब लोग हंस पड़े। मैं यह कह कर कि 'तुम लोग बड़े बेवक़ूफ़ हो' अपने घर चला आया जिस के सबब अब तक वहां नहीं गया हूं।

—:—

६४—(मूर्खनेता का ससुराल जाना)

यह सुन 'मूर्खनेता' बोला कि एक समय मैं भी अपनी ससुराल में गया। मार्ग में एक कुए के आश्रय निद्रा आजाने से मैं सो रहा। मार्ग में चलने के परि-श्रम से थक जाने के कारण मुझे ऐसी गाढ़ निद्रा

आई कि संज्ञा बिल्कुल न रही और मेरी पगड़ी शिर से उतर कुए में जा पड़ी। जब मैं भड़ भड़ाकर उठा और देखा कि दिन थोड़ा ही रह गया है बड़े वेग से नंगे शिर ही चल दिया। चलता २ जब मैं ससुराल के पास पहुंचा तो प्रथम वही नाइन मिली जो कि मेरे ससुर के घर आती जाती थी। उसने मुझे देख पहिचान लिया और नंगे शिर देखकर यह जाना कि इसकी धर्मपत्नी का परलोकवास हो गया है तभी तो ये नंगे शिर आते हैं। उसने घर जाकर कह दिया कि 'लाला जी स्वर्गवासिनी अपनी पत्नी की बदख़बरी सुनाने आते हैं'। बस फिर क्या था इतना सुनते ही वहां रोना पीटना पड़ गया। मैं वहां पहुंचा और उन्हें रोते हुए देखा तो मैंने यह समझा कि इन के यहां कुछ अशुभ होगया है उनके साथ ही रोदन करने लगा। अन्त में जब उन्होंने ही हार कर यह मुझ से पूछा कि 'खैर जो कुछ हुआ सो हुआ, होनहार में किसी का बल नहीं चलता, ईश्वर की इच्छा, पर आप तो सकुशल हैं?' तदनन्तर मैंने भी कहा, कि—'आपके यहां तो कुशल है?' उत्तर मिला कि—'हां यहां तो सब ईश्वर की कृपा से सकुशल हैं'। मैंने पूंछा 'तो आप फिर रोये क्यों'? उन्होंने कहा—'आपको नंगे शिर आते देख

यह समझ कि इन के घर वाली चल बसीं, हम रो पीट रहे हैं। यह सुनते ही मैंने आपा संभाला और लज्जित हो मैं वहां से तुरन्त ही भगा, तब से अब तक मारे लज्जा के मैंने उन्हें अपना मुंह नहीं दिखाया है।
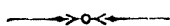
६५.–(मूर्खमूर्ख का श्वसुरालय आना)

इन तीनों का वृत्तान्त सुन चौथे 'मूर्खमूर्ख' भी अपनी विद्वत्ता की प्रशंसा करते हुए बोले—मैं पहले एक राजा के यहां बड़े विश्वासयोग्य पुरुषों में कामदार था। वहां रहते हुए मैंने बहुत सा धन सञ्चय किया और व्यर्थ व्यय भी खूब किया। एक दिन एक बुढ़िया ने कहा कि 'यदि तू १०००) रुपये खर्च करे तो मैं तेरा विवाह करादूंगी'। यह सुन मैंने बुढ़िया को १०००) रु० दे दिये। कुछ समय के पश्चात् वह बुढ़िया आई और मुझ से कह दिया कि 'तेरी शादी होगई'। मैं भी यह सुन कि मेरा विवाह हो गया फूले अंग न समाता था। थोड़े दिन के बाद ही फिर उस बुढ़िया ने यह खुश खबरी सुनाई कि 'आप के दो पुत्र उत्पन्न हुए हैं। उनके पालन पोषण के लिये कुछ और रुपये लाइये'। यह कह कर वह और रुपये ले गई। निदान

इसी प्रकार अपने पुत्रादि के पालनार्थ रुपये देता २ मैं बहुत ही निर्धन हो गया और तंग आगया तो मैंने बुढ़िया से कहा कि अब तक हमने उनके पालन पोषण में बड़ा धन खर्च किया है यहां तक कि तङ्ग हो आये हैं, कृपा करके अब हमें हमारे कुटुम्ब से तो मिला दे क्योंकि अब कुछ दिन वहीं सुख से बितायेंगे। यह सुन वह बुढ़िया मुझे ले गई और एक मकान के पास ले जाकर बोली कि "आज बहू जी किसी बात पर मुझसे अप्रसन्न हैं,मुझे देखकर और नाराज़ होंगी.इससे अच्छा हो कि आप ही इस स्थान के भीतर चले जावें और आवाज़ दें तो दोनों लड़के आप के पास आ जावेंगे"। बस मैं निश्शङ्क और भार्या पुत्रादि के मिलने रूप आनन्द में निमग्न हो भीतर घुस गया और आवाज़ दी तो सुनते ही दो लड़के आये, मैंने उन्हें मिठाई दी और वे लेकर अपनी माताके पास गये। उसने समझा कि यह कोई मेरे पति का मित्र है अतः उन्हीं लड़कों के हाथ मेरे लिये इतर, पानदान भेजा जो कि मैंने अहो-भाग्य कह सादर ग्रहण किया और उन दोनों लड़कों को गोद में बैठाकर जिस आनन्द का अनुभव किया उसे मैं ही जानता हूं, वह अकथनीय था, अतः कहते नहीं बनता। इतने ही में उसका पति घर चला आया

जिसने कि मुझे देखते ही प्रणाम किया और कुशल पूछने के पश्चात् उसने भीतर घरमें जाकर अपनी स्त्री से पूछा कि 'यह कौन पुरुष है जो हमारे पुत्रों को गोदी में लिये बैठा प्यार कर रहा है' ? स्त्री ने कहा कि 'मैंने तो आप का मित्र समझ कर ही इस का इतना सत्कार किया है,अतः आप ही निश्चय करें'। उस ने आकर मुझ से बड़ी नम्रता से कहा 'क्षमा कीजिये, मैंने आपको पहिचाना नहीं है, आप मुझे अपना नाम बता दीजिये'। मैं झट से बोल उठा कि–"अजी साहब ! आप मुझे पहचानते नहीं हैं ? मैं आप का रिश्ते में 'बहनोई' हू, आपकी बहिन मुझे व्याही है और ये दोनों आपके भानजे हैं"। बस इतना सुना कि उसकी क्रोधाग्नि का वारापार न रहा, क्रोध से होठ कांपने लगे और दांत पीसता हुआ मुझसे बोला-'रे दुष्ट ! ऐसा कहते हुए तुझे लज्जा नहीं आती ? क्या तेने मदिरा तो न पीली है ? मालूम होता है कि तुझे मृत्यु ने घेर लिया है, बस अब शीघ्र ही चले जाइये, नहीं तो अब आपकी जूतों से ही महमानी मनाइ जावेगी'। बस यह सुन मेरे होश उड़ गये, लज्जा से मुख नीचा होगया, जमीन खोदने लगा और मैं अपने जूताओं को भी वहीं छोड़कर भाग आया

जिससे मारे भय के अब तक उस मार्ग की तर्फ नहीं फटका हूं।

फल—प्रिय पाठकगण! देखी मूर्खों की प्रतिष्ठा? मूर्ख मनुष्य चाहे कहीं और कैसी भी प्रतिष्ठा के योग्य जगह क्यों न जांय सर्वत्र उनके अवगुणवश उनकी जूता ही से पूजा होती है। इस लिये प्रत्येक मानशील पुरुषों का कर्त्तव्य है कि इसके जाल से बचने के लिये भगवती विद्या देवी का आश्रय ग्रहण करें।

———*———

६६–(यथा राजा तथा प्रजा)

एक राजा के यहां एक बार एक पण्डित कहीं से पधारे! राजाने पण्डितजी से पूंछा कि "महाराज! इस समय हमारी एक घोड़ी और एक गाय दोनों गर्भिणी हैं, आप बतावें कि दोनों क्या व्यायेंगी"? पण्डितजी ने उत्तर दिया कि "महाराज! गाय बछड़ा और घोड़ी बछेड़ा व्यायेगी"। पण्डित जी तब तक राजा के यहां ही ठहरे जब तक कि उन दोनों के व्याने का समय आया और व्यायीं तो राजा के कर्मचारियों ने बछेड़े को उठाके गौके नीचे और बछड़े को उठाके घोड़ी के

नीचे कर दिया और राजा साहब को यह ख़बर दी कि 'महाराज ! आप की गाय ने बछेड़ा और घोड़ी ने बछड़ा उत्पन्न किया है, आप चलकर देख लीजियेगा। राजा ने गाय के नीचे बछेड़ा और घोड़ी के नीचे बछड़ा देख कर कहा ' सच कहो पण्डित जी ! आप तो कहते थे कि गाय बछड़ा और घोड़ी बछेड़ा देगी' बस राजा ने पण्डित जी को कुछ भी न देकर अपने यहां से चले जाने ही की भेंट प्रदान की। पण्डितजी ने चलते समय विचार किया कि हमारे कपड़े बहुत मैले हो गये हैं सो धुला लें। ऐसा विचार कर अपने कपड़े जब धोबी के यहां डाले तो कई दिन तक धोबी कपड़ा ही देने न आया। कई दिन व्यतीत होजाने पर जब पण्डित जी को सन्देह हुआ और स्वयं उस धोबी के यहां अपने कपड़े मांगने गये तो धोबी ने कहा 'महाराज ! आप के कपड़े जब मैं नदी में धोने गया तो वहां पानी में आग लगने से जल गये'। यह सुन पण्डित ने राजा के यहां फरियाद की। राजा ने धोबी को बुला कर कहा 'क्योंरे ! तू पण्डित जी के कपड़े क्यों नहीं देता !' इसके उत्तर में धोबी ने कहा ' सरकार ! मैं पण्डित जी के कपड़े नदी में धोने गया था सो नदी के पानी में आग लगजाने के कारण कपड़े जल गये'

राजा ने कहा 'क्योंरे ! मूर्ख कहीं पानी में भी आग लग सकती है' ? तब तो धोबी ने कहा किः—

अश्विन्यां च यदा वत्सःकामधेनौ तुरङ्गमः ।
संजायते तदा नद्यां वन्हेर्लग्नं किमद्भुतम् ॥

'महाराज ! जब घोडी बछड़ा और गौ बछेड़ा उत्पन्न कर सकती है तो नदी में आग लगना क्या असम्भव है ?' राजा यह सुन समझ गया और लज्जित हो पण्डित जी को बुलाकर बड़े सत्कारपूर्वक भेट प्रदान कर जब विदा किया तब धोबी ने भी पण्डित जी के कपड़े दे दिये ।

९७ (बुद्धि और भाग्य)

एक बार बुद्धि और भाग्य में परस्पर झगड़ा हुआ । बुद्धि कहती थी कि मैं बड़ी और भाग्य कहता था कि मैं बड़ा । यह देख बुद्धि ने भाग्य से कहा कि 'यदि तू बड़ा है तो इस गड़रिये को जो कि वन में भेड़ें चरा रहा है तू इसे बिना मेरी सहायता के राजा बना दे तो मैं अवश्य मानलूंगी कि तू बड़ा है' । यह सुन भाग्यने उसको राजा बनाने का प्रयत्न प्रारम्भ किया ।

भाग्य ने एक बहुमूल्य खड़ाऊं का जोड़ा जिसमे लाखों रुपये के जवाहिरात जड़े हुये थे लाकर गड़रिये के आगे रख दिया। गड़रिया उनको पहिन कर फिरने लगा। फिर भाग्य ने एक सौदागर को वहां पहुंचा दिया और सौदागर उन खड़ाऊं को देख चकित हो गया। उसने गड़रिये से कहा कि 'तुम यह खड़ाऊं का जोड़ा बेचोगे?' गड़रिये ने कहा 'हां बेचूंगा लेलीजिये'। सौदागरने कहा 'क्या दाम लोगे?' गड़रिये ने कहा और दाम क्या बताऊं मुझे रोज रोटी खाने के लिये गांव में जाना पड़ता है, यदि तुम दो मन भुने चने इस खड़ाऊं के जोड़े की कीमत दे दो तो में चने चबाकर भडों का दूध पीलिया करूंगा और गांव में जाने के दुःख से छूट जाऊंगा' । निदान इस दुर्बुद्धि गडरिये ने ऐसी बहु मूल्य खडाऊं जिसमें एक २ हीरा लाखों रुपये का था दो मन भुने चनों में बेच डालीं। यह देखकर भाग्य ने और बल दिया कि उस सौदागरको एक राजा की सभा में पहुंचा दिया। जिस समय वहां सौदागर ने खड़ाऊं राजा के आगे रक्खीं तो राजा उन्हें देखकर चकित होगया और उसने सौदागर से पूंछा कि 'तुम ने यह खड़ाऊं का जोड़ा कहां से लिया'? सौदागर ने जवाब दिया कि 'एक राजा मेरा मित्र है,

उस ने यह खड़ाऊं मुझे दी है'। राजा ने पूंछा क्या उस राजा के पास ऐसी और भी खड़ाऊं हैं'? 'सौदागर ने उत्तर दिया कि 'हां हैं''। राजा ने पूंछा 'क्या उस राजा के कोई लड़का भी है'? सौदागर ने कहा हां, उस के लड़का भी है'। यह सुनकर राजा ने कहा 'जनाब! मेरी लड़की का सम्बन्ध उस राजा के लड़के से करादो'! यह सब बातें जब भाग्य के बल से कह चुका तो सोदागर अब राजा की पिछली बात को सुनकर आश्चर्ययुक्त होगया क्योंकि उसे ज्ञात था कि खड़ाऊं का जोड़ा तो मैंने गड़रिये से लिया है न वह कोई राजा है न राजा का पुत्र परन्तु इस झूंठ बात के मुंह से निकल जाने से उसने सोचा-कि यदि इस समय मैं अपने झूंठ का भेद खोलता हूं तो राजा न मालूम क्या दण्ड देवेगा, यह सोचकर उसने विचार किया कि जिस तरह होसके राजा के शहर से निकल चलना चाहिये। उसने राजा से कहा कि 'मैं आप की लड़की की सगाई करने के लिये जाता हूं'। यह कहकर जिस ओर से आया था उसी ओर को पुनः प्रस्थान किया। जब उस स्थान पर पहुंचा जहां उसने गड़रिये को देखा था तो क्या देखता है कि वह गड़रिया उससे विशेष मूल्य का

खड़ाऊं का जोड़ा पहिने हुए है। सौदागर यह देख हैरान होगया और उसने सोचा कि यह कोई सिद्ध पुरुष है जिसको इस प्रकार की वस्तुयें कुदरत से प्राप्त होजाती हैं। उसने सोचा कि यहां ठहर कर इसका हाल मालूम कर लेना चाहिये। यह सोचकर उसने वहां डेरे लगादिये। उसके पास तांबा लदा हुआ था। वह सब सामान वृक्षके नीचे एक ओर रखदिया। जब दोपहर हुई तो गडेरिया धूपका मारा उस वृक्षके नीचे आया कि जहां तांबे के ढ़ेर पड़े हुये थे वह उस ढेरके साथ अपना सिर लगाकर सोगया। उसके तकिये लगाने से भाग्यने उस तांबेको सोना करदिया। जब सौदागर ने यह देखा तब उसे ख्याल आया कि 'जिस मनुष्यके सिरलगाने से तांबा सोना होजाता है उसको राजा बनाना कौन बड़ी बात है।' यह सोचकर सौदागर ने कुछ गांव मोल लेलिये और उन गांवों में दुर्ग बनाना प्रारम्भ करदिया और कुछ सेना भी रखली। जब सब सामान तैयार होगया तब उस गडेरिये को पकड़कर दुर्गमें लेगया और उसे अच्छे राजाओं के से कपडे पहना दिये और मंत्री सेवक आदि सभी रखदिये। पुनः उस राजा को चिट्ठी लिखी कि 'हमारे राजाने आपकी लड़की की सगाई स्वीकार करली है विवाह जिस तिथि का आप नियत करें बरात उसी दिन पहुंच जाय'।

राजाने तिथि नियतकर लिख भेजी। इधर व्याह की तय्यारी होने लगी। एक दिन जब दर्बार लगा हुआ था और सारे मंत्री आदि बैठे हुये थे। गड़रिया राज्य सिंहासन पर तकिया लगाये राजा बना बैठा था। उस समय गडरिये ने सौदागर से कहा कि 'तुम मुझे छोड़दो, देखो मेरी भेड़ें किसी के खेत में चली जांयगी और वह मुझे पीटेगा'। यह सुनकर सब लोग हंस पड़े और सौदागर दिलमें सोचने लगा 'इसका क्या इलाज किया जाय, जो कहीं उस राजा के सम्मुख इसने ऐसा कह दिया तो मेरी खूब खबर ली जायगी।' पुनः सौदागरने उस गड़ेरिये से कहा कि यदि तुमने फिर कभी सभा के बीच ऐसा कहा तो तुम्हें बड़ा भयंकर कठिन दण्ड दिया जावेगा, जो कुछ कहना हो मेरे कान में कहना। निदान विवाह की तिथि समीप आगई। सौदागर बरात लेकर रवाना हुआ। जब राजाके नगर के समीप आगया और उधर से राजा का मंत्री बहुत से जनों और सेना के सहित अगवानी (पेशवाई) को आया तो उन्हें देखकर गडेरिये को ख्याल आया कि शायद मेरी भेड़ें उनके खेत में जापड़ीं और ये मेरे पकड़ने को आये हैं परन्तु बात कान में कहेजाने के कारण किसी को विदित न हुई और लोगों ने सौदागर से पूंछा कि 'राजा साहब क्या कहते हैं'? सौदागर ने जवाब दिया कि

राजा साहब का कथन है कि जितने मनुष्य अगवानी के लिये आये हैं उन सबको पांच पांच लाख रुपये भेट में दिया जाय' और सब को पांच पांच लाख रुपया दिया गया। शहर में प्रसिद्ध होगया कि एक बड़े भारी राजा साहब ब्याहने के लिये आये हैं जो प्रत्येक पुरुष को लाखों रुपये इनाम देते हैं। यह सुन कर वहां का राजा भी डरा कि 'मैंने बड़े भारी राजा से सम्बन्ध जोड़ लिया है, परमेश्वर प्रतिष्ठा रक्खे'। उस गड़रिये का विवाह राजा की लड़की से हो गया। यहां तक बुद्धिमान् सौदागर के सिलसिले से भाग्यकृत कार्य्य हुआ परन्तु रात को गड़रिया अकेला राजा के महल में रहा तब झाड़ फनूस लेम्प जलते देख उस गड़ेरिये को ख्याल आया कि जंगल में जो भूतों की आग सुना करते थे वह यही है, कभी ऐसा न हो कि मैं इस में जलकर भस्म हो जाऊं। वह इसी सोच विचार में था कि इतने में राजा की लड़की उस की तरफ़ आई और जब उसने ज़ेवरों की आवाज़ सुनी तो उसे ख्याल आया कि कोई चुड़ैल मेरे मारने के वास्ते आ रही है यह सोचकर वह झट पट एक दर्वाज़े की ओट में छिप गया। राजपुत्री ने देखा कि राजपुत्र यहां नहीं है अतः वह दूसरे कमरे में चली गई। उसे वहां भी झाड़ देख इसे ख्याल आया कि अभी एक

चुड़ैल से बचा हूं न मालूम यहां और कितनी चुड़लें हैं इस लिये यहां से भाग चलना चाहिये । यह सोच ही रहा था कि उसे एक जीना ऊपर की तरफ दृष्टि पड़ा । वह झट ऊपर चढ़ गया और एक तरफ छज्जे को हाथ डाल कर उसने नीचे कूदकर भागने का इरादा किया । उस समय बुद्धि ने भाग्य से कहा कि देख केवल तेरे बनाने से यह राजा न बना बल्कि अब यह गिर कर मरने का सामान कर रहा है ।

समाने हस्तपादादौ दैवाऽधीने च वैभवे ।
यो बुद्धिं निन्दते नित्यं स मूर्ख इति कथ्यते ॥

६७-(अकबर की प्रशंसा)

अकबरशाह बादशाह जो सुमेरु से लगा समुद्रपर्य्यन्त पृथ्वीकी रक्षा करता, निज प्रताप से युक्त गौओं को मृत्यु से बचाता और तीर्थयात्रा वणिग् व्यापार का कर लेना जिसने छोड़ दिया और जिसने पुराण श्रवण किये और दिनकर सूर्यके नाम जपता तथा योगाभ्यास करता और जो गंगाजलसे इतर जल नहीं पीता था ऐसा अकबर बादशाह जय को प्राप्त हो अर्थात् सर्वोपरि-वर्तमान अचलराज्याधिकारी थे ऐसे अकबरशाह के दरबार में वजीर महामन्त्री श्रीयुत वीरबलशर्मा हुए ।

ये गौड़ ब्राह्मण के पुत्र थे। इनका वहां जाने का ऐसे प्रसंग हुआ कि एकवार बादशाह ने दश गाड़ी मंगाने का हुक्म दिया तो परवाने में "दश गाड़ी भर के भेज देओ"। यह लिख भेजा और (कलई) का नाम नहीं लिखा तो वह रुक्का तहसील में किसी से सिकरा नहीं। सबने सोच लिया पर किसी की बुद्धि न चली। निदान बीरबल भी जो वहां नित्य जाता था पहुंचा तो वह रुक्का इनके आगे धरागया। इसने सोच समझ के यही निश्चय किया कि आजकल वर्षा समय है, हजूर ऊपर चढ़े होंगे तो कलई पानी के मारे फीकी होगई होगी इससे वही मंगाई है, अतः यही उत्तम वस्तु प्रतीत होती है. बस यही भेजदेनी चाहिये। यह बात सबके मन मान गई और वही भेजी तो बादशाहने अभीष्ट वस्तु भरी देख उसी वक्त हुक्म दिया कि भेजने वाले को शीघ्र ले आओ ऐसा ही हमें वजीर चाहिये। तब तो शीघ्रही हलकारा चला और वहां पहुंच बोला 'कलई भेजने वाले पुरुष को बुलाया है'। यह सुनकर सबने हर्ष कर बीरबल को उसके साथ भेजा। जाते ही बादशाह ने देख प्रसन्न होकर वजीर बनाया। तभीसे इनका संग बहु प्रसंग विदित हुआ और बीरबल की स्त्री भी इधरही के पास की जमींदारे गांव की थी। यह प्रसंग ऐसे हुआ कि

एक वार वीरबल सादेभेस घर को आता था कि एक गांव मे ठहरा तो प्यास से आकुलहो एक ब्राह्मणके घरमें गया तो वह ब्राह्मणी बड़ी चतुर थी। इसने जो पानी मांगा तो उसने उस पानी में कुछ मीठा मिला थोड़े तिनके भी डालदिये और इसको दिया। यह तिनके देखकै बोला कि ये ऊपर से मिलाये मालूम होते हैं, इनका कारण कहो तो वह बोली 'लाला! तुम ताव में जल्दी२ चले आते हो अभी जो जल पीवोगे तो बिगाड़ करेगा इस से इन तिनकों के निकालने के बहाने से आप का खून चलने से जो ताव खा रहा है वह ठंडा हो जावेगा तो जल आपको कुछ बिगाड़ न करसकेगा'। बस वीरबल इस चतुराई के वाक्य को सुन बड़ा प्रसन्न हुआ और मन ही मन विचारने लगा कि धन्य है इस स्त्रीजाति की बुद्धिमानी और दयालुता को। ऐसी स्त्री जिसघर में हो वहां अज्ञानसे हुई दुर्दशा का प्रवेश कभी नहीं होसकता पर जो मेरे प्रारब्ध कर्म अच्छे हैं तो इसकी कुक्षि से जन्मी पुत्री भी ऐसी ही बुद्धिमती होगी और वह मुझको बिवाही जावे तो अपने भाग्य को सराहूंगा, यह बिचार वह उसके घर सो रहा तो वह ब्राह्मणी भी इसे देख मन में विचार ही रही थी कि ऐसा सुन्दर वर मेरी पुत्री को मिलै तो अहोभाग्य है सो ही उसका पति भी आ गया तो दोनों ने जगा-

कर विवाह के लिये पूछा तो वह बोला 'यही इच्छा करता मैं सोया था सो ही भगवान् ने पूर्णकी'। यह सुन शीघ्र ही उसने टीका बीरबल के करदिया और कुछ दिन में धूमधाम के साथ यथाविधि से इसके साथ निज पुत्री का ब्याह बड़ी प्रसन्नता से किया तो यह स्त्री ऐसी चतुर थी कि जो २ प्रश्न बादशाह ने किये और जिन २ का उत्तर बीरबल से न हो सका उन २ का उत्तर वह आप करती थी। जैसे बादशाहको किसी ने कह दिया कि अमुक रोग में भैंसे का दूध गुणदायक है, वह बीरबल के लाए आसका है तो इसे हुक्म हुआ कि 'कहीं से भैंसे का दूध तलाश करके लाओ नहीं तुम को दण्ड होगा'। यह सुन चुप हो चला, घरमें जाय चिन्ता करने लगा कि यह असम्भव वस्तु कहां से कैसे लाई जावे नहीं तो यह दुष्ट दण्ड देवेगा, इस विचार में इसको छः महीने बीते और दिन २ शोच में रहते २ इसका शरीर पीला पड़ गया तो स्त्री ने पूछा कि 'आप को क्या चिन्ता है'? तब उसने बादशाह की आज्ञा कह सुनाई। वह सुनते ही बोली'स्वामी! आपने मुझ से पहले ही क्यों न कह दिया? वृथा ही इतने दिन चिन्ता कर २ निज देह को दुर्बल किया'। अब चिन्ता न करो। बादशाह से कह दीजिये उड़ती चीज़

का मूत्र ला दीजिये, उसके बिना काम अटक रहा है। यह सुन बादशाह चुप हो रहे फिर भैंसेका दूध वीरबल से नहीं मांगा।
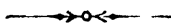
६८-(नाक की ओट में परमेश्वर)

दक्षिण देश की तर्फ प्रथम राजाओं के यहां नाक कान हस्त पादादि छेदन का दण्ड दिया जाया करता था बस इसी पृथा के अनुसार एक वार वहां के एक अपराधी को नासिका छेदन का दण्ड दिया। वह अपराधी राजा के फाटक से निकलते ही कूद कूद के नाचने लगा और तालियां पटका पटका बड़ा ही प्रसन्न होता था। लोगों ने पूंछा'तू इतना क्यों प्रसन्न होता है'? उसने कहा कि 'नाककी ओटमें परमेश्वर था सो मुझे तो नाककी ओट न रहनेसे परमेश्वर दीखता है।' इस प्रकार नाच नाच के इसने नाक कटाने पर कई मनुष्यों को तय्यार किया। इसने कहा जिस समय तुम नाक कटालोगे तुम्हें परमेश्वर दीखैगा। लोगों ने इस विश्वास पर आ नाकें कटालीं। इस एक नकटे नाचने वाले ने लोगों से कहा कि आखिर तो अब आप लोगों की नाक कट ही गई है इस लिये तुम भी नाचने लगो

और कहदो कि हमें भी परमेश्वर दीखने लगा नहीं तो लोक में बड़ी निन्दा होगी' । यह सुन वे कई मनुष्य भी नाचने और यह कहने लगे कि 'हमें भी नाक कटने से परमेश्वर दीखने लगा' । इस प्रकार होते होते उन नकटों के एक हजार मनुष्यों का समुदाय बन-गया । एक बार ये नक्कटे नाचते नाचते एक राज्य में पहुंचे तो राजा को खबर मिली कि एक हजार नक-कटों का झुण्ड इस भांति नाचते फिरता है और वे कहते हैं कि नाकके ओटमें परमेश्वर दीखने लगा है अतः राजाने उस गिरोह को बुलाया और पूंछा तो वे सब राजाके सामने भी वैसाही नाचने लगे और बोले कि 'महाराज! हमें परमेश्वर दीखता है'। राजाने कहा 'यदि ऐसा है तो हम भी नाक कटावेंगे और अपने ज्यो-तिषी जी से राजा बोला कि 'ज्योतिषी जी ! आप पत्रा में देखिये कि हमारे नाक काटने का मुहूर्त्त कब बनता है' ? ज्योतिषीजी ने पत्रा निकाला और मीन मेष कर कहा "आपके नाक कटाने को माघवदि द्वितीया के दिन प्रातःकाल बहुत ही अच्छा है" । धन्य ज्योतिषी जी! आपके पत्रेमें नाक कटने का भी मुहूर्त्त निकला । इसके बाद वे नक्कटे चलेगये और राजा के दीवान ने अपने घरजा अपने बाप से कहा जिस की अवस्था अस्सी वर्ष के करीब थी और यह ४०

वर्ष राजाके यहीं दीवान भी रहचुका था सो इस बुड्ढेने यह सुन दूसरे दिन राजा के यहां जाकर राजाको अभिवादन कर नाक कटाने का सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछ बोला कि 'अन्नदाता ! मैंने आपका नमक पानी तमाम उमर खाया है और बुड्ढा भी हूं इस लिये आप प्रथम मुझे नाक कटाकर देख लेने दीजिये, अगर मुझे नाककटानेपर परमेश्वर दीखनेलगे तो आप नाक कटावें नहीं तो आप न कटावें'। राजा के यह बात समझ में आगई अतः राजाने ज्योतिषी जी से कहा कि 'ज्योतिषी जी ! अब आप हमारे पुराने दीवानजी के नाक कटाने का मुहूर्त्त देखिये'। ज्योतिषी जीने पुनः पत्रा निकाल मीन मेष वृष मिथुन कर कहा कि 'पुराने दीवानजी के नाक काटने का मुहूर्त्त पौष सुदि पूर्णिमा के दिन अच्छा है'। राजाने पौषसुदि पूर्णिमा के दिन नक्कटों को बुला एकत्र किया और दीवान जी को बुलवा नक्कटों से कहा 'लो इनकी नाक काटो और परमेश्वर दिखाओ'। उनमें से एक ने बहुत तीक्ष्ण छुरा ले दीवान जी की नाक काटली । दीवान जी विचारों को बड़ाही कष्ट हुआ। दीवान हाथ से कटी नाक पकड़ेही रहगये। पुनः नक्कटों ने दीवान जी की नाक काट उनके कान में कहा कि 'अब आप की नाक तो कटही गई है इस लिये तुमभी नाचने कूदने

लगे और यह कहने लगे कि हमें परमेश्वर दीखता है नहीं तो लोक में बड़ी निन्दा होगी' । दीवान जी ने राजा से साफ़ कहदिया कि 'ये सब बड़े ही धूर्त्त हैं, इन्होंने हज़ारों आदमियोंकी व्यर्थ नाकें कटा डालीं। नाक काटने पर परमेश्वर वरमेश्वर कुछ खाक़ नहीं दीखता बल्कि अभी नाक काटकर हमारे कानमें इन्होंने मुझसे ऐसा कहा'। राजा ने यह भेद जान उन सब को पकड़वाकर उचित दण्ड दिया और उस गिरोह को तोड़ा। आप लोग दुनियां का प्रवाह देखिये कि ऐसे ऐसे मतों ने भी प्रचार पाया।

फल—बुद्धिमान् पुरुष को चाहिये कि प्रत्येक पुरुष की बात को इस राजा के समान शोच समझ कर ही प्रमाणित करे।
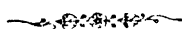
६६-(मन्त्रियों के साथ विरोध से हानि)

एक वैश्य किसी राजा के यहां मोदीपने का काम किया करता था, परन्तु था बड़ा स्वार्थी । परोपकार का तो वह कभी स्वप्न भी न देखता था। यही कारण था कि उस से मन्त्री आदि सब राजपुरुष अप्रसन्न रहते और यही चाहते रहते थे कि किसी न किसी

प्रकार से इसका यहां से बिदा हो जाना ही अच्छा है। संयोगवश वह कभी आवश्यक कार्य उपस्थित होने से छुट्टी लेकर घर चलागया और फिर आया तो सब मन्त्रियों नें आपस में सलाह करके उसकी राजासे भेट न होने दी। एक दिन राजा के पूछने पर भी कि 'अमुक मोदी अब अपने काम पर नहीं देख पड़ता है' उनमें से किसी ने कह दिया कि 'श्री महाराज! वह तो मर गया'। एक दिन ऐसा हुआ कि राजा साहब अपने महल की छत पर खड़े हुए थे कि इस मोदी जी की उन पर दृष्टि पड़ी। इसने नीचे से सामने जाकर प्रणाम किया। राजा साहब इसे देख चकित हुए और बोले "मोदी! तूं जिन्दा है"? वह बोला-'जी हां' तब राजा ने उसे अपनीं सभा में बुलाकर उस पुरुष से जिसने कि मरा बतलाया था अति क्रोधयुक्त हो कर कहा-'अरे! यह मोदी तो जिसे तू ने मरगया बतलाया था जीवित है, तैंने क्यों व्यर्थ झूंठ बोला'?वह पुरुष उसे देखता हुआ भी न दीखता हुआ सा जतलाकरबोला-श्रीमन्!वह मोदी कहां है? मुझे तो यहां कहीं भी नहीं दीखता'। यह सुन फिर राजा साहब और भी क्रुद्ध हुए और दूसरे को बुलाकरबोले-'अरे देख तो यह मन्त्री पागल होगया है,इसे सामने खड़ा और दिनमें भी मोदी नहीं दीखता'। उन सब की एक मति तो थी ही वह भी बोला'हुजूर!

'मुझेभी नहीं दीखता'। तीसरे को भी बुलाकर पूछा तो उसने भी यही उत्तर दिया कि 'मुझे तो आप की सभामें मोदी का कहीं निशान भी नहीं दीख पड़ता'। अन्ततोगत्वा उन मन्त्रियों ने यह कहकर राजा से प्रार्थना की कि-' श्री महाराज! आप ध्यान तो दीजिये, कदाचित् ऐसा न हो कि वह मरा हुआ मोदी प्रेत बन कर आप को अपने उसी रूप में दीखता हो'। यह सुन राजा उनके इस कहने को सत्य मान गया और डर कर भीतर महल में चला गया। तब उन मन्त्रियों ने मोदी साहब की गर्दन पकड़ बाहर किया।

फल—प्रत्येक पुरुष को चाहिये कि अत्यन्त स्वार्थी न बने, कुछ दूसरों को प्रसन्न रखने का भी ध्यान रक्खे, अन्यथा इस कृपण मोदी के समान ही स्वार्थ से भी पतित हो जाता है।

—:०:—

१००—(सब से नीचा कौन है ?)

एक दिन सभा में बैठे हुए बादशाह ने बीरबलसे पूछा कि-'हे बीरबल! आप हमारे इस प्रश्नका उत्तर दीजिये कि 'सब से अधिक नीचजाति कौन है' ? बीरबल बादशाह के इस प्रश्न को सुन संकोचवश इसका उत्तर न देते हुए बोले—'हुजूर! इस का

उत्तर प्रत्यक्ष रूप से मैं इस समय नहीं दे सकता, हाँ, कल इसका उत्तर अवश्य कर दिखाऊंगा'। यह कहकर घर चला आया और सन्ध्या के समय शहर में सर्वत्र मनादी करादी कि 'कल सब भङ्गी बादशाह के यहां दर्बार में हाजिर हों क्योंकि कल वे सब मुसलमान किये जायगे'। यह बादशाही हुक्म सुनकर सब भङ्गियों ने पञ्चायत कर यह निश्चय किया कि यहां से चलकर कहीं अन्यत्र जा बसना अच्छा है पर दीनसे बेदीन होना अच्छा नहीं' यह निश्चय कर उन सब भंगियों ने प्रातः काल होते ही गधे तथा भैंसाओं पर अपना २ सामान लाद कर चल दिये। जब बादशाह के महल के नीचे होकर निकलने लगे तो उस समय के उनके शोर को सुन कर बादशाह बोले कि 'यह क्या शोर है' ? लोगों ने कहा कि 'हुजूर ! भङ्गी निकल कर अपने सामान को गधा आदिकों पर लादे हुए भागे जा रहे हैं'। बादशाह ने पूछा कि 'क्यों, क्या कारण है, ये लोग क्या चाहते हैं ? इनसे यह पूछा जावे'। जब उनसे पूछा गया तो वे बोले-'दोहाई हुजूर की, हम मुसल्मान होना नहीं चाहते, आप का देश छोड़ कहीं और जगह जा बसेंगे'। यह सुन बादशाह बड़े लज्जित हुए और अपने प्रश्न का उत्तर मनमें समझ संकुचित हो चुप होगये।

२–इसी प्रकार एक दिन बादशाह शैर करते हुए तमाखू के खेत में गधा को खड़ा हुआ और तमाखू न खाता हुआ देख कर बोले—'बीरबल ! देखो इसे गधा भी नहीं खाता है'। बीरबल ने इसके उत्तर में कहा—'हुजूर ! इसे गधाओं ने ही छोड़ा है, इनके अतिरिक्त औरों के लिये यह बड़ी प्रिय वस्तु है'।

१०१–(प्रकृतिही परमेश्वर के प्राप्त कराने में साधन है)

एक वार एक ब्राह्मण के पच्चीस वर्षकी अवस्था में पुत्र उत्पन्न हुआ परन्तु जैसे आज लड़का पैदा हुआ और कल ब्राह्मण जीविकार्थ परदेश चला गया और पच्चीस वर्ष पर्यन्त यह ब्राह्मण विदेश ही में रहा और तबतक यहां इसका पुत्र पूर्ण युवा अवस्थाको प्राप्त होगया और डाढ़ी मूछें सभी इसके निकल आईं। लड़के के पिता की चिट्ठी पत्री यद्यपि आया करती थी पर यह अपने पिता को पहिचानता न था, क्योंकि इस के जन्म के दूसरे ही दिन इसका पिता विदेश चला गया था और न पिता ही इसे पहिचानता था। एक दिन यह युवा लड़का अपने किसी कार्य्य

के लिये किसी गांव को गया और जब उस कार्य्य को करके लौटा तो दूर होने के कारण रात को किसी गांव में एक वैश्य के घर पर टिक रहा। इतने में इस का बाप जो पच्चीस वर्ष बाहर रहा था वह भी संयोगवश उसी वैश्य के घर जहां उसका पुत्र था आकर ठहर गया और रातभर ये दोनों पिता पुत्र एक ही स्थान में लेटे रहे परन्तु एक दूसरे को न पहिचान सके। लड़का प्रातःकाल उठके घर चला आया और पिता शौच, दन्तधावन स्नानादि करके कुछ देर में चला इस कारण लड़के से कुछ देर बाद घर आया। लड़का मकान के अन्दर खड़ा था। लड़के ने इसे देख कहा 'यह कौन हमारे घरमें घुसा आताहै?' माता ने पुत्र से कहा 'बेटा ! यह तो तुम्हारे पिता हैं'। पुत्र ने यह सुन पिताको प्रणाम किया और कहा 'माता! मैं और पिता जी तो कल रात भर एक ही थानमें लेटे रहे पर एक दूसरे को न पहिचान सके, आप के बतलाने से अब पहिचाने हैं कि ये पिता हैं' और यही शब्द उसके पिताने कहे। इसका दार्ष्टान्त यह है कि जीवात्मा रूप पुत्रके जन्मते ही पिता परमात्मा अलग हो जाते हैं और यह सांसारिक प्रयत्नों में फंसा रहता है परन्तु पुनः इसे जिस प्रकार माता ने पुत्र को पिता का

ज्ञान कराया था इसी भांति प्रकृति माता, पिता परमात्मा का बोध, पुत्र जीवात्मा को कराती है।

—०—

१०२—(साठ असर्फियों वाला साधु)

एक साधु ने सब अवस्था दुःख भोग और बड़े २ कष्ट सह कर साठ अशर्फियां इकट्ठी करली थीं। उन्हें अपनी जटाओं में इस भय से रखता था कि कोई चुरा न लेवे। उनको रक्षा में यहां तक तत्पर रहता था कि नित्यप्रति स्नान कर चुकने पर संभाल लिया करता था। एक दिन इन्हें संभालते हुए किसी चालाक ने देख लिया और इस साधु के पास आकर बड़ी नम्रता से कहा—'महाराज! आज अपने शुभागमन से हमारे ही स्थान को पवित्र कीजिये'। ऐसा कह साधु जी को अपने घर में ला बड़ी सेवा की। साधु जी भोजनादि से निवृत्त हो सुखपूर्वक सो रहे। इस चतुर चालाक पुरुष ने प्रथम अपनी स्त्री से सब हाल सुना बुझा कर बाहर से आकर कहा कि—'वे साठ अशर्फियां ले आव दे आऊं'। वह घर में भीतर जा देख भाल कर बोली—'यहां तो नहीं है'। वह बोला 'जाती कहां? अभी तो मैंने अमुक जगह पर रक्खी हैं,

दुष्टे ! तू बड़ी चालाक है' । ऐसा कह हल्ला गुल्ला मचा कर उसे पीटने लगा जिससे बहुत से लोग इकट्ठे हो गये और पूछने लगे कि 'यह क्या बात है' ? वह बोला—'बात क्या है, साठ अशर्फियां अभी लाकर रक्खी थीं सो यह कहती है नहीं हैं' । लोगों ने यह सुन कहा 'भला कहीं ऐसा हो सकता है,घरमें कौन २ थे' ? उसने कहा—'सिवाय इसके और कौन था । एक यह साधू जी थे जो कि बेचारे सो रहे हैं'। लोगों ने कहा 'इसके सब वस्त्र अच्छे प्रकार देखलो'। उसने दिखला दिये । पति ने उसके शिर के बाल तक खोल के देख डाले और अशर्फियें न निकलीं । साधु जी यह दृश्य देख कर बड़े चकित हुए, पीले पड़ गये और डरते २ बाहर आकर बोले—'भाई हमारे भी कमण्डलु, डोर और लंगोट देख लो' । तब उस स्त्री ने कहा 'जटा न अलग २ खुलवाऊंगी क्या' ? यह सुन साधु के होश उड़ गये । लोगोंने कहा 'साधुजी! आपभी जटा खोल दिखला दीजिये' । वह बोला—'भाई ! मेरी जटा छः मास से बंधी हैं' । लोगों ने कहा—'आज खुलेंगी'।जब साधुजी ने जटा न खोलीं तो एक चालाक पुरुष ने जटाओं को जो झटका दिया तो वे साठों अशर्फियां निकल कर जमीन में गिर पड़ीं । लोग हंसने लगे । बेचारे साधुजी लाचार हो जब चल दिये तो

वह चालाक साधुभक्त शिष्य बोला—'महाराज ! फिर भी कभी कृपा करना'। साधु जी ने कहा 'बच्चा ! न साठ अशर्फी होंगी और न फिर हम आयेंगे'।

फल—साधुओं को चाहिये कि धन की अभिलाषा को छोड़कर निष्काम ईश्वर भजन करें जिससे कि इस साधु के समान धन सञ्चय के झंझट में फंस व्यर्थ दुःख उठाना न पड़े।

१०३—(कलियुग में धर्मात्मा दुखी और अधर्मात्मा सुखी है)

एक शहर में एक वैश्य की दूकान थी। वैश्य बेचारा बड़ा ही धर्मात्मा सीधा और सच्चा मनुष्य तथा ईश्वरभक्त था। प्रातःकालसे उठ अपने नित्यनियम धर्मों का पालन करना, सत्य बोलना, धर्म से जीविका करनी आदि आदि सेठजी में विचित्र गुण थे परन्तु इस प्रकार के व्योहार से सेठजी को पैदा तो बहुत थोड़ी थी लेकिन सेठ जी अपनी सद्वृत्ति और संतोष से सुखी रहा करते थे। कुछ काल के पश्चात् एक अहीर ने सेठ जी की दूकान के सामने जो एक दूसरी दूकान गिरी हुई पड़ी थी उसने आकर उससे किराये में लेली। अहीर के पास उस समय

केवल १)रु० की कुल पूंजी थी। अहीर उसी दिन दो चार पैसे के बरतन भांड़े कुम्हार के यहां से ला।) आने का दूध लाकर, उसमें उतना ही पानी मिला, दूध बेचने लगा। इस प्रकार चौधरी साहब के तो उसी दिन दूने हुये। पुनः तीसरे दिन चौधरी साहब १)रु० का दूध ला उसमें उतना ही पानी मिला बेचडाला, अब तो चौधरी साहब के फिर भी दूने हुये। इस प्रकार कुछही दिन में चौधरी साहब माला माल होगये और थोड़ेही दिन पूर्व जहां चौधरी एक लंगोटी लगाये फिरते थे वहां अब उनके ठाठ ही निराले हो गये। यहां तक कि उस गिरी हुई दूकान को मोल ले और चौधरीजी ने तिखण्डा मकान खड़ाकर दिया और बहुतसे नौकर चाकर भी रहने लगे। अब तो सेठ जी यह दृश्य देख बड़े ही विस्मय को प्राप्त थे और मन में यह कहने लगे कि लोग जो कहा करते हैं क्या सचमुच कलियुग में अधर्म ही करने से सुख मिलता है। सेठ जी इन संकल्प विकल्पों में ही रहा करते थे। और जो कोई साधु महात्मा इनके पास आता उसी से यह प्रश्न करते थे कि 'महाराज! मनुष्य धर्म से फलता है या अधर्म से'? यदि उत्तर में वह यह कहते कि धर्म से तो वह कहता कि नहीं, मैं रोज़ धर्म का कुछ २

पालन करता हूं मुझे तो भोजन भी संकोचसे ही मिलता है और यह अहीर सामने रोज दूध में पानी मिला मिलाकर इतना बढ़ गया। यदि धर्म से फलता तो मुझे सुख होता और इस अहीर को दुःख'। यह सुन सन्त जन चुप्प रह जाते थे। कुछ दिन बाद एक बड़े विद्वान् महात्मा उस ग्राम में पधारे। सेठ जी ने जब सुना कि यहां एक महात्मा बड़े विद्वान् आये हुये हैं तो सेठजी ने महात्मा की शरण में जा दण्डवत् प्रणाम कर कहा कि 'महाराज! क्या कलियुग में अधर्म ही करने से सुख मिलता है? देखो हम नित्य प्रातःकाल उठके शौच, दन्तधावन, पञ्चयज्ञ का सेवन करते हैं और कभी भी किसी जीव को दुःख न देना, सत्य बोलना आदि आदि नियम धर्मों में ही दिन व्यतीत होता है सो हमें तो खाने भर को भी कठिनता से पैदा होता है और एक अहीरने हमारी दूकान के आगे अभी थोड़े ही दिनसे दूका[illegible] थी उसके पास कुल १) रुपया था परन्त[illegible] ही उसने दूध में आधा पानी मिला २ बेचना प्र[illegible]भ किया कि अच्छा धनी हो गया। इससे ज्ञात होता है कि आजकल अधर्म से ही उन्नति होती है'। महात्मा ने [illegible]। 'सेठ! हम इसका उत्तर तुम्हें आठ रोज के [illegible] देंगे'। अतः

महात्मा ने सेठ जी से आठ हाथ का गहरा गढ़ा खोदवा कर सेठ जी को उस गढ़े के भीतर खड़ा किया और लोगों से कहा कि तुम लोग कुये से पानी भर भर ज़रा इस गढ़े में तो डालो। जिस समय जल सेठ जी के गांठों तक आया तो महात्माने पूछा 'कहो सेठजी! आप को कुछ कष्ट तो नहीं मालूम होता'। सेठजीने कहा 'महाराज ! अभी तो कोई कष्ट नहीं मालूम देता'। पुनः महात्मा ने उस गढ़े में दस बीस घड़े पानी और छुड़ाया। जब जल सेठजी के कमर तक आया तो महात्मा ने सेठ जी से कहा-'कहो सेठ जी ! आप को कोई कष्ट तो नहीं'। सेठ जी ने कहा 'कोई कष्ट नहीं है' पनः महात्मा ने फिर गढ़े में और जल छुड़वाया जब जल सेठ की छाती तक आया तो फिर पूछा पर सेठ ने फिर भी यही उत्तर दिया कि 'कोई कष्ट नहीं।' अब तो महात्मा ने फिर कुछ जल छुड़वा जब सेठजी के तक जल आया तो महात्मा ने पूछा कि 'सेठजी . ' कहिये कोई कष्ट तो नहीं'? सेठजीने कहा 'महाराज ! कोई कष्ट नहीं'। अब आप लोग विचारलें कण्ठ तक जलसे डूबा सेठ खड़ा और कहताहै कि व कष्टनहीं परन्तु अब की वार महात्मा ने ज्योंही दस बीस घड़े और गढ़े में डलवाये कि

त्योंही सेठ डूबने लगे और लम्बे२ श्वासले बोले 'महात्मा जी! हमें शीघ्र इस गढ़े से निकालो, नहीं तो प्राण निकलते हैं'। महात्मा जी ने सेठ को निकाल सेठ जी से कहा कि 'आप अपने प्रश्न का उत्तर समझ गये? सेठजीने कहा 'महाराज! नहीं समझे'। महात्मा जी ने कहा कि 'जब आपकी गांठों तक पानी आया और मैंने पूछा तो आपने कहा कि मुझे कोई कष्ट नहीं, पुनः जब आप के कमर तक जल आया और मैंने पूछा तो आपने कहा मुझे कोई कष्ट नहीं, यहां तक कि आप के कण्ठ तक जल आगया और १० ही घड़े की कमी थी कि आप डूब जाते पर आपने कहा मुझे कोई कष्ट नहीं, इसी भांति उस अहीर के अब कण्ठ तक पाप भर आये हैं, अब डूबने में कमी नहीं परन्तु तुम को सुखी मालूम पड़ता है और उसे भी नहीं जान पड़ता है। किसी कवि ने क्याही सत्य कहा है:—

अन्यायोपार्जितं द्रव्यं दशवर्षाणि तिष्ठति।
प्राप्त एकादशे वर्षे समूलञ्च विनश्यति॥
अधर्मेणैधते तावत् ततो भद्राणि पश्यति।
ततः सपत्नान् जयति समूलस्तु विनश्यति॥

१०४-(मनुष्य को चाहिये कि कुछ उदार भी रहे)

किसी नगर में एक धनी पुरुष के दो पुत्र थे। उन में एक सरलस्वभाव, मृदुभाषी, सत्यवक्ता और उदार भी था परन्तु दूसरा इस के विरुद्ध क्रूरस्वभाव, कटु भाषी, मिथ्यावादी और महाकृपण था। यह उदार पुरुष स्वयं अच्छा भोजन, उत्तमोत्तम आभूषण तथा वस्त्र पहिनता और बड़े२ शूरवीर पुरुषों को अपने पास रखता तथा उन के साथ भी भोजनादि में संकोच न कर अपने वैसा ही व्यवहार रखता था और वह कृपण सस्ते भाव का अन्न और कम खाता था और सदा थोड़ी तनख्वाह के नीच जाति के पुरुषों को ही अपने पास रखता था। एक समय दैववश ऐसा हुआ कि उन पर उन के किसी शत्रु ने चढ़ाई की तो उस उदार पुरुष के साथ तो वे सब वीर पुरुष अस्त्र शस्त्र लेकर युद्ध के लिये सम्मुख आडटे इस लिये उस पर तो शत्रु सेना का कुछ बल न चल सका परन्तु उन कृपण जी का खूब मुण्डन संस्कार किया गया क्योंकि इस के कुछ नीच जाति के कायर सहायकों ने तो शत्रु की सेना का आना सुनकर घरों में घुस अपनी प्राणरक्षा

की ओर जो सम्मुख गये वेभी बेचारे अपनी कायरता के वश थर २ कांपने लगे अतः इसी का सब धन लूट शत्रु चलता बना। किसी कवि ने यह बचन बहुत ही सत्य कहा हैः—

सदा दाता विजयते, कृपणश्चावसीदति।
कदश्वश्चेद्रणे जेता, सदश्वे कोऽव्ययस्तदा॥

अर्थ--दानी पुरुष सदा विजय पाता है और कृपण सदा पराजय आदि से दुःखित रहता है। यदि कदश्व (छोटे टट्टू वाला) पुरुष संग्राम में विजय पा लेवे तो सदश्व=उत्तम अश्व अर्थात् तुर्की घोड़े के लिये कौन बुद्धिमान् व्यय कर सकता है ?

फल—नीतिनिपुण पुरुष को चाहिये कि दानी बनकर उत्तम कुलोत्पन्न वीर पुरुषों को अपने पास रक्खे, नीच जाति के कायर पुरुषों को नहीं।

१०५—(बच्चों को हमीं बुरा बनाते हैं)

सम्पूर्ण बच्चोंकी आत्मायें पैदा होने के समय शुद्ध और पवित्र हुआ करती हैं। मा बाप हो चाहें बच्चों का सत्यवक्ता, चाहें झूठा, चाहें चोर, चाहें शाह, चाहें व्यभिचारी और चाहें सदाचारी बना दें। यथा :—

एक मनुष्यको कुछ झूठ बोलने तथा चालसे बात करने की बान थीं अतः उसके बच्चे की भी आदत वैसी ही पड़ने लगी। बापने सोचा कि 'बच्चा भी हमारा वैसा ही हुआ जाता है जैसे कि हम, इस भयसे बच्चे को उस की ननसाल में भेज दिया। जब कुछ दिनके बाद यह पुरुप अपनी सुसराल बच्चे के पास गया तो इस ने सोचा कि भला बच्चे की परीक्षा तो लें कि इसका झूठ बोलना कहां तक छूटा है अतः बाप ने कहा 'बेटा! आज गंगाजी में एक बड़ी भारी पहाड़ी टूटकर गिरी'। बच्चा बोला कि-दादा! छीटें तौ मेरे ऊपरभी आई थीं॥

—+—^—+—

१०६—(एकही प्रकार के अपराधियों को पृथक् २ दण्ड)

एक समय राजा विक्रमादित्य के शासनकाल में चार पुरुप एक ही अपराध में पकड़े गये जिन्हें कि एक सा ही दण्ड मिलना उचित था परन्तु ऐसा न हुआ किन्तु राजा ने उन में से एक को बुला और एकान्त में ले जाकर कहा-'फिर कभी तुम ऐसा काम मत करना' ऐसा कह कर उसे छोड़ दिया। दूसरे को बुला कर बहुत धिक्कार दिये और दो चार गालियें दे निकाल

दिया। इसी प्रकार तीसरे को बुला कर गाली प्रदान पूर्वक कुछ जूतियों से दुरुस्त करा बाहिर किया; परंतु चोथे का काला मुख करा, गधे पर चढ़ा, नगर के चारों तर्फ, परिक्रमा करानी शुरू की तो इस न्याय को देख राजा के कर्मचारी गण सब ही आश्चर्ययुक्त हो कहते थे कि 'यह कैसा न्याय है ? अपराध एक और दण्ड पृथक् २ क्यों' ? निदान जब वे इस बात का निर्णय न कर सके तो राजा साहब से जाकर बोले— 'श्री महाराज ! एक से अपराधियों को अलग २ दण्ड देने का क्या कारण है' ? राजा ने कहा—'इनकी परीक्षा करो—तुम स्वयं ही जान लोगे'। वे इन की परीक्षा में लगे। राजा ने जिस से यह कहा था कि 'फिर ऐसा मत करना' उसने विष खाकर प्राण त्याग दिये। जिसे गालियां प्रदान की थीं वह नगर छोड़ कहीं अन्यत्र जा बसा। जिस की जूताओं से खातिर कराई थी वह लज्जित हो कहीं छिपकर रहा और जिसका काला मुख करा, गधे पर चढ़ा कर शहर की परिक्रमा कराने का दण्ड दिया था वह निर्लज्ज शिरोमणि परिक्रमा करता और मूछों पर हाथ फेरता हुआ जब मार्ग में अपने घर के समीप आया तो अपनी स्त्री को देख बुलाकर बोला "दुष्टे ! पीने के लिये थोड़ा

जल तो ला" उसने उत्तर में कहा-"निर्लज्जाधिराज ! रोटी क्यों न खाता जाय ? तय्यार हैं"। यह सुन आप हुज़ूर बोले—"अभी थोड़ा शहर घूमना और बाक़ी है, अभी आकर भोजन करता हूं, गर्म जल भी तैयार रखना, क्योंकि ज़रा सूरत ठीक बनानी है"। उन राजकीय परीक्षक पुरुषों ने इस प्रकार चारों की परीक्षा कर श्री राजा विक्रमादित्यजी की बुद्धिमत्ता को धन्यवाद देते और इस न्याय की प्रशंसा करते हुए अपने २ स्थान को प्रस्थान किया।

फल—प्रत्येक राज्य के अधिकारी पुरुष का कर्तव्य है कि इसी प्रकार एकसा अपराध होने पर भी उचितानुचित का विचार कर दण्ड प्रदान करें।

---

१०७ (गाड़ी की अन्त्येष्टि क्रिया)

एक सेठने एक लोध के हाथ अपनी गाड़ी बैल अपने लड़के की सवारी के लिये किसी गांव को भेजे। वह गांव सेठ के गांव से २० कोश की दूरी पर था और रास्ता १० कोश कच्चा और १० कोश पक्का था। गाड़ी बहुत दिन से उंगी हुई न थी इस कारण

बोलती थी। पक्की सड़कपर गाड़ी बराबर बोलती चली गई परन्तु कच्ची पर पहुंची तो गाड़ी का बोलना बन्द होगया। यह देख लोधे ने गाड़ी फौरन् ही खड़ीकर दी और गाड़ी का बांस पकड़कर रोने लगा और कहा—'हाय! तुम्हें क्या होगया? अबतक तो तुम बोलते बताते अच्छी चली आती थीं परन्तु अब जाने क्या होगया'। इस भांति लोधेने रोकर गांव के लोगोंसे पूछा कि 'क्यों भाई! कोई वैद्य भी इस गांव में रहता है'। लोगों ने कहा 'हां उस तरफ़ रहता है'। यह लोधा वैद्यराज के पास जाकर रोने लगा और बोला कि 'महाराज! मैं फलाने गांव से गाड़ी लैकै चलो सो १० कोश पक्की सड़क २ तो नीके बोलते बताते चली आई परन्तु अब जाने का ह्वैगया जो वहिका वचन बन्द हूगया'। वैद्यराज ने कहा कि 'नाटिका देखाई भी कुछ है'? उसने कहा 'महाराज! मोरे पास गाड़ी बैलवाका छोड़ि और कछु नाहीं है'। पुनः वैद्यराज बोले कि 'अच्छा यदि हमने नाटिका भी देख दी तो जब तेरे पास कुछ नहीं तो दवा किस प्रकार कर सकेगा इससे तू एक बैल अपना बेच डाल कि जिसमें दवा के लिये भी दाम हो जांय और हमारा नज़राना भी होजाय'। इस प्रकार एक बैल तो वैद्यराज ने बेचवा डाला और जाकर वैद्य-

राजने कहा कि आप की गाड़ी मर गई सो कुछ तो गोदान बैतरणी कराके लिया और थोड़ासा फूंस नीचे रखा गाड़ी की भस्म क्रिया करा पुनः वहां के पण्डितों ने दूसरा भी बैल बेचवा कर दशगात्र एकादशाह कराकर सब ले लिया और लोधेजी तेरही का दुपट्टा सिर में बांध जब आ बिराजे तब तो सेठजी ने कहा कि 'बैल गाड़ी कहां छोड़ी'? लोधा बोला 'लालाजी मैं ह्यासे गाढ़ी लैकै चल्यो सो १० कोश पक्की भर तौ नीके ब्वालत बतलात उई चली गई जो कच्ची पर पहुंच्यो साई उन का वचन बन्द ह्वैगया सो वैद्का लई कैदेखायऊ सो एक बलं बेंचि कै तौ गाढ़ी की दवादारू औ वैद के नजराने मा दीन्ह्यों औ दसर गाड़ी कै भस्म क्रिया कै दशगात्र एकादशा कै आ गयऊं'॥

१०८—(उर्दू की अस्पष्टता)

एक तहसीलदार को एकबार साहब कलेक्टर ने अपने पेशकार से कहा कि उसके नाम एक हुक्मनामा लिखो कि अमुक तारीख़ को गङ्गा नदी पर बीस या पच्चीस कश्तियें तय्यार रक्खें और मल्लाहों के झोंपड़े जो गङ्गा के किनारे हैं उनको वहांसे फेंकवा दे। यहां तहसीलदार साहब ने उसे पढ़ा कि 'बीस या

पच्चीस कस्त्रियें (वेश्यायें) अमुक २ तारीख़ को गङ्गा के किनारे तय्यार रक्खो और उस के किनारे जो मल्लाहों के झोंपड़े हैं उन्हें फुंकवादो'। बस तहसीलदार साहब ने बीस पच्चीस वेश्यायें बुलवाकर साथ ले उस तारीख़ को गङ्गा के किनारे हाजिर हुये और उस के किनारे के सब मल्लाहों के झोपड़ों को फुंकवा दिया। उधर जब साहब कलेक्टर आये तो क्या देखते है कि एक नाव पर तहसीलदार बीस पच्चीस कस्त्रियें (वेश्यायें) लिये खड़ा है। साहब ने पूंछा 'वल तह-सीलदार यह क्या'? तहसीलदार ने कहा "हुज़ूर का हुक्म था कि अमुक तारीख़ को बीस या पच्चीस कस्त्रियां गङ्गा के किनारे तयार रक्खें"। साहब ने कहा 'पशकार! तुमने तहसीलदार को क्या लिखाथा'? पेशकार साहब बोले कि -मैंने तो यह लिखा था कि बीस या पच्चीस कश्त्रियें तयार रक्खो'। साहब बोला 'फिर आपने ऐसा क्यों किया'? पेशकार ने कहा कि 'हुज़ूर उर्दू में कश्तियें का कश्त्रियें भी पढ़ा जा सक्ता है'। थोड़ी देर में साहब के आगे मल्लाह हाथ जोड़ आ खड़े हुये और कहा "हुज़ूर! हम लोगों के सब झोंपड़े तहसीलदार ने फुंका दिये।' साहब कलेक्टरने कहा "तहसीलदार! तुमने इनके झोंपड़े क्यों फुंकाये'?

तहसीलदार ने कहा कि 'हुज़ूर आपने हुक्म दिया था'। पुनः तहसीलदार के पेशकार से पूछा तो पेशकार ने कहा कि "हमने तो हुज़ूर यह लिखा था कि मल्लाहों के झोंपड़े फेंकवादो पर उर्दू में वैसा भी पढ़ा जा सका है"। यह सुन साहबने कहा उर्दू बड़ी ख़राब ज़बान है।

१०६–(अश्रद्धालु श्रोता)

एक वैश्य नित्य प्रति कथा श्रवण को जाया करते थे। एक दिन सेठ जी को कोई आवश्यकीय कार्य आ उपस्थित हुआ इस कारण कथा में न जा सकने के कारण सेठ जी ने अपने पुत्र से कहा कि "बेटा! आज कल अमुक स्थान पर कथा हुआ करती है सो तुम वहां जाकर कथा सुन आना"। लड़का कथा सुनने गया तो कथा के प्रसंग में ऐसा सुनने में आया कि 'यदि कहीं गौ खाती हो उसे न मारे'। अतः दूसरे दिन सेठ का लड़का दूकान पर बैठा था और अनायास गौ भी आके सेठ की दूकान पर जो पलरे में चावल रक्खे थे खाने लगी, परन्तु लड़के ने उस गौ को न मारा इस लिये कुछ चावल बिखर गये और कुछ गौ खा गई। थोड़ी देर में सेठ के लड़के

का पिता आया और वह अपने बेटे से बोला 'क्यों रे ! ये चावल कैसे बिखरे पड़े हैं' ? उसने कहा 'गौ के खा जाने से बिखड़ गये'। सेठ जी क्रोध में हो बोले 'तो तैंने गौ को हटाया क्यों नहीं' ? लड़के ने कहा— 'आप ही ने तो कल कथा सुनने भेजा था उसमें सुनने में आया था कि यदि गौ कहीं खाती हो तो उसे न मारे'। बाप ने कहा "अरे बेवकूफ ! अगर हम ऐसी कथा आज तक सुनते तो काहे को घर रहता ? अरे मूर्ख ! जब कभी हम कथा सुनने गये तो वहां जाकर चादर का कौना फैला दिया और जब चलने लगे तो वहीं झाड़ दिया और कह दिया कि पं० जी यह लो अपनी कथा"। सत्य है—

मुक्ताफलैः किं मृगपक्षिणाञ्च,
मिष्टान्नपानं किमु गर्दभानाम् ।
अन्धस्य दीपो बधिरस्य गानं,
मूर्खस्य कः शास्त्रकथाप्रसङ्गः ॥

———

११०—(मुड़िया भाषा)

एक समय एक वैश्यजी ने शहर में रूई का भाव तेज होने के कारण आपने एक चिट्ठी अपने घरको

इस अभिप्राय की लिखी कि "लाला तौ अजमेर गये; हमहूं रुई लीनि, तुमहू रुई लेव और बड़ी बही को भेज देव"। लोगों ने वहां इस चिट्ठी के आशय से विरुद्ध इसे इस प्रकार से पढ़ा कि "लाला आजमर गये, हमहूं रोय लीन, आपौ रोय लेव और बड़ी बहू को भेज देव"। बस यह पढ़ वहां घर के आदमी खूब रोये पीटे, अच्छे प्रकार से अजमेर गये लाला जी का शोक मनाया गया और बड़ी बहू को वहां लालाजी के शेष रोने की पूर्त्ति के लिये भेज दिया। बहू रोती हुई दूकान के आगे आ खड़ी हुई। सेठ जी ने कहा 'यह क्या, यह क्या बात है? रोती क्यों है?' तब तो जो लोग बहू के साथ थे कहा "लालाजी! है क्या, हम तो आपका 'आज मर गये' सुन रोतेहुए आए हैं"। लालाजी ने क्रोध में हो कहा कि 'यह क्या बकते हो'? तो बहू के साथ के लोगों ने कहा 'यह लो अपना पत्र पढ़ो'। लालाजी ने कहा 'हमने तो "अजमेर गये" लिखा था' उन्होंने कहा 'हमने तो "आज मर गये" समझा था'॥ बस यह सुन दोनों तर्फ़ के लज्जित हो चुप रह गये।

---

१११ (एक के करने से क्या होगा)

एकबार एक बादशाह ने अपने गांवमें एक पक्का तालाव जो बहुत शुद्ध और साफ़ पड़ा था उसमें दूध भराने के लिये गांवभर के लोगों को जिनके कि यहां दूध होता था आज्ञा दी कि 'एक एक घड़ा अपने अपने घर से भर कर उस तालाव में सब डाल आवो'। सबने अपने २ घर यह ख्याल किया कि 'इतने बड़े दूध भरे तालावमें एक घड़ा पानी का यदि मैं डाल आऊंगा तो क्या जान पड़ेगा'? इसी प्रकार दूसरे और तीसरे ने हो नहीं किन्तु सभी गांव वालों ने ख्याल कर दूध के बजाय पानी डालना शुरु किया तो पानी से तालाव भर गया। जब बादशाह ने देखा तो लोगों की यह दशा देख चकित होगया। इसी भांति यदि प्रत्येक लोग सोचने लगें कि 'मुझ अकेले के करने से क्या होगा, तो संसार के सभी कार्य छिन्न भिन्न हो जायं और कभी किसी के कार्य पूर्ण ही न हो सकें।

११२-(कायर पुरुषों से संग्राम में मानहानि)

किसी राजा के यहां गानविद्या में बड़ा निपुण विकटखां नामक एक गायक रहता था। अच्छा गाने

वाला होने से राजा के बड़े मन चढ़ा हुआ था और साथ ही रहा करता था। एक दिन किसी शत्रु ने उस राजा पर चढ़ाई की। यह देख राजा ने भी संग्रामाङ्गण में चलने के लिये अपने साथियों को अस्त्र-शस्त्रादिकों से सुसज्जित कर उस बिकटखां से भी कहा कि 'आप भी शस्त्रागार से शस्त्र और अश्वशाला से अश्व लेकर तय्यार हो जाइये क्योंकि तुमको भी हमारे साथ संग्राम भूमि में चलना होगा'। बस यह सुनते ही उसका चित्त कम्पायमान होगया परन्तु लज्जावश वह राजा के सम्मुख जाना स्वीकार कर अश्वशाला से अश्व लेने के बहाने से अपने घर चला आया और स्त्री से बोला कि 'इस नगर से अब शीघ्र ही चल देना चाहिये, नहीं तो कल राजा के साथ युद्ध में अवश्य जाना होगा, जिसकी मुझे बड़ी चिन्ता है'। वह स्त्री बड़ी बुद्धिमती थी, समझ कर बोली 'स्वामिन्! जो युद्ध में जाता है, वह विना मृत्यु के नहीं मरता, यह कह कर उसने चक्की में चने दलकर दिखलाये और कहा कि—"देखिये जिस प्रकार इस चक्की में दलनेपर भी बहुत से दाने समूचे रह गये इसी प्रकार युद्धमें वीर पुरुष भी विना मृत्यु के नहीं मरता"। यह सुन वह पुनः बोला कि "इस में जो २ दाने पिस गये उन्हीं में मैं भी हूं"।

वह स्त्री इसके हठ को देख कर बोली कि "जो तू अपने ऐसे स्वामी के साथ यदि विश्वासघात करेगा तो मैं भी तेरे साथ न रहूंगी" यह सुन वह लज्जित हो निरुत्तर होगया और विवश उसे राजा के पास जाना पड़ा और जैसे तैसे शस्त्र धारण कर तथा अश्व पर चढ़ प्रातःकाल युद्धार्थ राजा के साथ हुआ। संग्राम-भूमि में पहुंच जाने पर जब दोनों दल लड़ने को उद्यत हुए और युद्ध के बाजे बजने लगे तथा अस्त्र शस्त्र चलने और वाण वृष्टि होनेवाली ही थी कि इसका घोड़ा विगड़ चला और यह जब गिरने लगा तो राजा से बोला कि 'महाराज! मैं गिरत हौं, परन्तु राजा यह समझा कि यह शत्रु सेना पर गिरने को कहता है, अतः राजा ने कहा कि 'नहीं मेरे हाथी के साथ ही अपना घोड़ा रक्खो' इसके दो तीन वार कहने पर राजा ने यही उत्तर दिया। अन्त में इसका अश्व इसे शत्रु दल में ले ही गया तब विकटखां ने अपनी कटि से दुपट्टा खोल घुमाया जिससे उस दल के पुरुष लड़ने से रहगये और इसके पास आकर कहा कि 'तू क्या सन्देशा लाया है'? इसने कहा मुझे घोड़े से उतारो तो कहूं'। उन्होंने तुरत इसे घोड़े से उतार दिया और यह बोला-'तुम किस लिये युद्ध

करते हो और क्या चाहते हो' ? यह सुन उस शत्रु ने कहा कि 'दश लाख रुपये और अपनी लड़की यदि तुम्हारा राजा देना स्वीकार करे तो युद्ध बन्द कर दिया जाय अन्यथा युद्ध करना होगा'। यह सुन इसने कहा कि 'यह सब हमारे राजा को स्वीकार है और इसका उत्तर कल दे जाऊंगा' । यह सुन वह शत्रु बड़ा प्रसन्न हुआ और बहुत सा धन देकर बिदा किया और उस दिन युद्ध बन्द रक्खा। दूसरे दिन जब यह राजा पुनः युद्ध के लिये तय्यार हुआ तो उस राजा ने संदेशा भेजा कि 'कल तो तुम्हारा आदमी हमें दश लाख रुपये और बेटी देना राजा की तर्फ से कह गया और लड़ाई बंद करा गया आज उस के विरुद्ध आप युद्ध के लिये तय्यार हैं यह क्या बात है'? राजा ने कहा तलाश करो कि कौन पुरुष वहां गया था तलाश करने पर विदित हुआ कि विकटखां गया था। अतः उसे बुलाकर राजा ने कहा कि तू किसकी आज्ञा से इस प्रकार सन्धि करने की प्रतिज्ञा हमारी तर्फ से कर आया' ? यह सुन वह बोला कि 'महाराज इसमें मेरा कुछ अपराध नहीं है, इस घोड़े पर जो चढ़ेगा वह मनौती करेगा'। यह सुन सब वीर पुरुषों ने कहा कि 'ऐसे भीरु पुरुष का संग्राम में क्या काम'? यह कह उसे सेना से निकाल बाहर किया।

फल—ऐसे कायर पुरुषों को संग्राम-भूमि में कभी न ले जाना चाहिये क्योंकि ऐसे पुरुषों से विजय प्राप्ति के स्थान में पराजय रूप हानि ही मिलती है।

—:—

११३—(उजबक)

एकबार एक उजबकजी को यह सूझी कि किसी प्रकार रामचन्द्र के दर्शन करना चाहिये। उजबकजी इस ख्याल में थे कि हमें कोई ऐसा गुरु मिल जाये जो सहेज में ही साधारण युक्ति बता दे ताकि बिना परिश्रम ही राम दर्शन हो जायें। उजबक ऐसे गुरु की तलाश में ही था कि इसको "यादृशी शीतला देवी, तादृशः खरवाहनः" के अनुसार एक घोंघा-बसंत मिल गये। इन्होंने घोंघा बसंतजीसे कहा 'महा-राज! हमें कोई ऐसी युक्ति बताओ कि सहज में ही राम दर्शन हो जायें' घोंघाबसंत ने उपदेश किया कि 'आज से आप जब प्रातःकाल पाखाने जाया करें तो अपने लोटे में जो कि जल भरके पाखाने के लिये ले जाते हो कुछ जल आबदस्त लेने से बचा रक्खा करो और वही जल तुम नित्य प्रति बबूलपर चढ़ाया करो।

इस प्रकार करने से तुम्हें प्रथम हनुमान्‌जी के दर्शन होंगे, पश्चात् वे तुम्हें रामचन्द्र के दर्शन करायेंगे'। उजबकजी ने यही व्रत धारण किया। उस दिन से पूरे तौर से आबदस्त भी न लेते थे पर बबूल पर जल चढ़ाने के लिये अवश्य बचा रखते और रोज़ जल चढ़ाया करते थे। एक दिन एक वुड्ढा पुरुष जिसकी लम्बी लम्बी डाढ़ी थी प्रातःकाल पाखाने गया और वह उस बबूल के उस तरफ़ बबूल की जड़ से मिल के पाखाने बैठ गया। शीतकाल का समय था जाड़ा खूब पड़ रहा था इतने में यह उजबक पाखाने गया और झटपट पाखाने हो, जल चढ़ाने के कारण पूरे तौर से आबदस्त भी न ले, लोटे में आधा पानी रख, उसी बबूल पर वह लोटा का जल ज़ोर से फेंक दिया। जल बहुत ही शीतल था। यह जल ज्यों ही उस बूढ़े के ऊपर जो कि बबूल की जड़ से भिड़ा हुआ उस ओर पाखाने बैठा था जा पड़ा। जल पड़ने ही वुड्ढा भरभरा के उठ बैठा। यह दृश्य इस उजबक ने ज्यों ही देखा तो इसे क्या मालूम पड़ा कि यह बबूल के अन्दर से निकला है और सम्भवतः ये हनुमान् हैं बस उजबक ने यह सोचकर उस बुड्ढे के पैर पकड़ लिये वह बेचारा पाखाने हुये था इस कारण बोलने से लाचार था और

यह उजबक बोला कि 'महाराज! बहुत दिन के बाद आप के दर्शन मिले और यह बेचारा बुड्ढा बोलने से तो लाचार ही था परन्तु हाथ हिलाता था और संकेतों से यह कहता था कि तुम अलग जावो परन्तु यह उजबक कहता था वाह महाराज! खूब रहे १२ वर्ष हमने जब बबूल पर जल चढ़ाया है तब आप के दर्शन मिले हैं सो आप अलग अलग करते हैं, भला मैं आप को छोड़ सक्ता हूं ? आप तो हनुमान् हैं'। यह बुड्ढा फिर हाथ हिलाकर संकेत से कहता रहा कि मैं हनुमान् नहीं हूं, तुम अलग हटो परन्तु इसने कहा-'अरे जाव महाराज! अब एक नहीं चलने की, हमने बहुत दिन में आप के दर्शन पाये हैं, आप तो भक्तों से पहिले ऐसा कहा ही करते हैं'। बेचारे बुड्ढे को आबदस्त लेना कठिन होगया। इस प्रकार जब बुड्ढे ने देखा कि इससे पीछा छूटना कठिन है तो बोला कि 'अच्छा मैं हनुमान् हूं, तुम अपना अभिप्राय कहो क्या है'? इस ने हाथ जोड़ कहा 'महाराज! हमें राम के दर्शन कराओ। बुड्ढा यह सुन हैरान हुआ कि मैं इसे रामचन्द्र के दर्शन कहां से कराऊं परन्तु अनायास उसी समय चार सवार घोड़े पर किसी राजा के पास डाक लिये जाते थे। जब बुड्ढे ने देखा कि यह कि यह किसी प्रकार

न मानेगा तो बुड्ढे ने कहा देखो वे चारों भाई जा रहे हैं और बोला कि—

आगे आगे राम जात हैं पीछे लक्षमन भाई।
उन के पीछे भरत जात हैं पीछे शत्रुघ्न दिखाई॥

यह सुन वह उजबक बुड्ढे को छोड़ सवारों की ओर दौड़ा। उन में तीन सवार आगे निकल गये थे पीछे वाले सवार के साथ यह उजबक जा चिपटा और बोला कि बहुत काल के बाद दर्शन हुये। सवार ने कहा 'हें क्या है? क्यों चिपटता है? तू कौन है'? यह बोला 'महाराज मैं आप का भक्त हूं। कृपानाथ! बारह वर्ष तो बबूल पर जल चढ़ाया तब तो हनुमान्जी ने आपको बताया है'। यह सुन सवार बोला 'अरे भाई हम सरकारी सवार हैं डांक लिये जाते हैं हमें तुमने क्या समझ रक्खा है'। उजबक ने कहा 'महाराज! दास को धोखा क्यों देते हो'? राम लक्ष्मण भरत और शत्रुघ्न चारों भाई हो। सवार ने कहा 'नहीं हम सवार हैं'। उसने कहा 'आप तो प्रथम भक्तों से ऐसा ही कहा करते हैं कि जिस में हमें छोड़ दें सो हम आप को छोड़ने वाले नहीं' सवार ने जब देखा कि यह इस प्रकार पाछा न छोड़ेगा और डांक को मुझे

देर होती है तो ले हण्टर पीटने लगा और यह गिर पड़ा। पीछे बोला कि।

"मारे गये चाहे पीटे गये दर्शन तो कर ही लिये"

सम्पादिता सपदि दर्दुरदीर्घनादा
यत्कोकिला कलरुतानि निराकृतानि।
निष्पीतमम्बुलवणं ननु देवनद्याः पर्जन्य तेन
भवतां विहितो विवेकः॥

११४–[स्त्रियों के परदे से हानि]

एकवार एक सेठजी कलकत्ता के निवासी अपनी बहू की विदा बाम्बे से और दूसरे सेठ कानपुर निवासी अपनी बहू की विदा दक्षिण हैदराबाद से कराये आ रहे थे। दोनों का इलाहाबाद स्टेशन पर संगम होगया और दोनों बहुयें एक ही बिस्तर पर बैठ गईं, परन्तु अब बात यह थी कि परदा के कारण न तो कानपुर वाले सेठ अपनी बहू को पहिचानते थे और न कलकत्ता वाले सेठ अपनी बहू को पहिचानते थे। थोड़ी देर के पश्चात् दोनों ओर की जाने वाली

गाड़ियों का मिलान वहीं पर हुआ। सेठों ने बहुओं से कहा कि "बहुओ! तुम ज़रा अलग खड़ी होजाओ तो हम असबाब सम्हाल लें"। अन्त में प्रतिफल यह हुआ कि कलकत्ता के सेठ की बहू कानपुर वालों के साथ चली आई और कानपुर वालों की बहू कलकत्ता वालों के साथ चली गई। जब ये बहुयें कलकत्ता और और कानपुर चार २ दिन रह चुकीं तो पीछे मालूम हुआ कि कलकत्ता की बहू कानपुर और कानपुर की बहू कलकत्ता चली गई। अन्त में यह हुआ कि कलकत्ता वाला सेठ कानपुर अपनी बहू को लेने आया और अपनी स्त्री को रास्ते ही में मार दिया, दूसरा कलकत्ते से कानपुर आकर यहां उसे छोड़ दिया कि तू हमारे काम की नहीं।

— —

११५—(वर्त्तमान स्त्रियों की विद्या)

एक लड़की ने अपनी माता के यहां रहकर विचारी ने एक एक पैसा जोड़ बड़े २ कष्ट सह कर १००) सौ रुपये जोड़े थे। जब यह अपने सासुरे गई तो इसे सौ तक गिनती तो आती ही न थी इस कारण अपने रुपयों को दो दो बराबर कर लिया करती थी और

जब दो दो बराबर होजाते थे तो समझ लेती थी कि अब मेरे रुपये पूरे हैं परन्तु निकालने वाली भी बड़ी ही चतुर थी। यह भी दो ही दो निकाला करती थी। यहां तक कि निकलते निकलते इसके पास केवल २४) चौबीस रुपये रह गये, परन्तु जब भी यह अपने बराबर कर लेती और समझ लेती थी कि मेरे पूरे हैं। एक दिन निकालने वाली चोट्टी इसके रुपये निकाल रही थी कि यह आगई, इस कारण निकालने वालीने एक ही रुपया निकाल पाया। इसने फ़ौरन ही अपने रुपयों को दो दो बराबर किये परन्तु जब एक घट गया तब इसे मालूम हुआ कि मेरी चोरी आज होगई। तब इसके शोर मचाने पर इसकी सास ने कहा कि 'ला मैं तेरे रुपये गिन दूं'। यह २२) रुपयों को दो दो के हिसाब से ग्यारह जगह जोड़ कर और एक बचे २३ वें रुपये को दिखला कर बोली कि १) रुपया वो बढ़ता है तू १। और किसका चुरा लाई? यह सुन यह बेचारी अपने १००) के २३) रह जाने पर भी उल्टी चोट्टी बनाई जाने पर चुप हो बैठ रही। अब आप लोग सोच लें कि इनके सपुर्द हमारा सब घर का कारखाना और बाल बच्चे हैं ऐसी स्त्रियों की सन्ताने जितनी न मूर्ख हों उतना ही थोड़ा है।

११६—(बेवा स्त्रियों का मुख्य धर्म)

एकबार किसी स्थानपर एक पण्डित कथा बांच रहे थे और झांसी की महाराणी लक्ष्मणबाईजी कथा श्रवण करने गईं। कथा में पण्डितजी ने एक दृष्टान्त यह कहा कि इन बेवा स्त्रियों के मक्कर तो देखो कि जब तक इन का पति जीवित रहता है तब तक तो कांच की कच्ची चूरियां चार चार या छै छै पैसे की पहिनती है और जब पति मर जाता है तो सोने या चांदीका गहना या पनरिया दस दस बीस बीस आदि रुपये का गहना ठहरता है। महाराणी लक्ष्मणबाई ने पण्डितजी को उत्तर दिया कि 'महाराज! क्षमा कीजिये, आपने इसके महत्त्व को नहीं समझा। इसका मतलब यह है कि जब तक इनका रिश्ता अपने विवाहित मनुष्य से है तो ये समझती हैं कि मेरे इस पति का पञ्चभौतिक अनित्य क्षणभंगुर शरीर कांच की कच्ची चूरी की तरह ज़रा ही धक्के में टूट जाने वाला है और कुम्हार के कच्चे घड़े की तरह फूटने वाला है तब तक कांच की कच्ची चूरियां धारण करती हैं और जब पति मर गया तो अब संसार के सिवा उस पक्के परमात्माके साथ रिश्ता है कि जो कभी भी टूटने फूटने

वाला नहीं इस लिये ये सोना चांदी की पक्की चूरियां पहिर ईश्वर भक्ति में जन्म को बिता देती हैं।

११७—(चोरकी डाढ़ी में तिनका)

एकवार एक मनुष्य के यहां चोरी होगई थी। उसका पता लगना बड़ा ही कठिन होगया था। उस पुरुष ने जाकर बादशाह के यहां प्रार्थना की, बादशाह का वज़ीर बड़ा ही चतुर था! उसने तमाम बदमाशों और चोरों को इकट्ठा कर कहा कि 'चोर की डाढ़ीमें तिनका' अब तो जिस पुरुष ने चोरी की थी वह अपनी डाढ़ी देखने लगा बस वज़ीर ने समझ लिया कि इसने चोरी की है।

११८—(आजकल की सती)

किसी स्त्री ने अपनी सास से पूंछा कि 'सती के क्या माने हैं'? उसने जवाब दिया कि 'जिसने सात पति किये हों उस को सती कहते हैं' इस पर उसने कहा कि 'तेरा लड़का मेरा आठवां पति है'। यह सुन उसकी सास ने जवाब दिया कि 'तूने अब दूसरे सत पर क़दम रक्खा है'।

११६—(विना सम्बन्ध के वार्त्ता)

एक वैद्यजी एक रोगी को देखने गये और उन के साथ उनका एक मूर्ख शिष्य भी गया। वैद्यजी ज्यों ही रोगी के पास पहुंचे तो वहां चने के छिलके इधर उधर पड़े देख वैद्यजी उस के अपथ्य (बद्‌परहेज़ी) पर चिढ़कर बोले कि 'तुम्हारी नाड़ी से तो यह मालूम होता है कि तुमने चने चाबे हैं'। रोगी यह सुन हाथ जोड़ बोला 'महाराज! आज भूल होगई, मैंने अवश्य थोड़े चाब लिये, पर आइन्दा ऐसा कभी न होगा।' थोड़ी देर में वैद्यराज वहां से चले आये। मार्ग में शिष्य ने पूंछा 'महाराज! आपने यह कैसे जान लिया कि इस ने आज चने चाब लिये हैं'। वैद्यजी ने कहा कि 'चनों के छिलके उसकी चारपाई के पास पड़े थे इस लिये ऐसा कह दिया'। दूसरे दिन जब उस रोगी के घर के मनुष्य फिर लिवाने गये तो वैद्यराज तो रोगी की बद्‌परहेज़ी से चिढ़े थे इस कारण आपने उसी शिष्य को भेज दिया कि जावो उस रोगी को देख आओ। इतने में रोगीके घर कोई उसका महमान ऊंट पर आया और वह ऊंट की कांठी रोगी की चारपाई के पास रख बैठ गया। जब वैद्यराज के शिष्य रोगी को देखने पहुंचे तो इन्हों ने वहां ऊंटकी कांठी पास रक्खी देख रोगीकी

नाड़ी पकड़ के वैद्यराजजी के बुद्धिमान् शिष्य बोले कि 'आज तो यह ऊंट खा गया है, इसकी नाड़ी में ऊंट कूद रहा है'। रोगी के घरके लोगों ने कहा 'महाराज! क्या पागलपन आपके शिरपर सवार है? भला कोई मनुष्य कभी ऊंट खा सकता है? जाइये कृपा कीजिये, बाज़ आये ऐसी चिकित्सा से'। यह कहकर उन सबने बड़े सम्मान पूर्वक उन्हें विदा किया।

१२०—(अत्यन्त लोभ से हानि)

किसी नगर में एक सेठजी का बहुत दिन से यह विचार था कि यदि कोई सब से थोड़ा खानेवाला ब्राह्मण मिले तो एक ब्राह्मण जिमावें। यद्यपि सेठ जी अपने घर के बड़े मालदार थे परन्तु अत्यन्त लोभी होने के कारण यह दशा थी। सेठजी बहुत दिन तक ऐसे ब्राह्मण की खोज में रहे पर ऐसा ब्राह्मण न मिल पाया। सेठजीके बहुत दिन यह विचार रहनेके कारण गांववाले ब्राह्मणों ने समझ लिया था कि सेठ उच्चकोटि के लोभी हैं और उनका ऐसा विचार है। एक दिन सेठजीसे एक गांववाले ब्राह्मण की वार्त्ता हुई। सेठजी ने पूछा 'आप कितना खाते होंगे?' ब्राह्मण ने कहा—'एक छटांक भरके के क़रीब' बस फिर क्या था. सेठजी यह सुनते ही

बड़े प्रसन्न हुए और उनका चिरकाल का मनोरथ सिद्ध होगया, क्यों न हो:—

जिहका जिहपर सत्य सनेहू।
सो तिहि मिले न कछु सन्देहू॥

यह सुन सेठजी ने उसी समय उस ब्राह्मण को दूसरे दिन के लिये न्योत दिया और ब्राह्मण से बोले कि 'पण्डितजी ! मैं तो कल फलाने स्थान में सौदा तुलाने जाऊंगा आप मेरे घर जाके भोजन कर आवें'। ब्राह्मण ने कहा 'बहुत अच्छा, लालाजी की जय बनी रहे, हम तो हमेशा आप ही लोगों का खाते हैं' यही समाचार सेठ ने अपने घर जाके सेठानीजी से कह दिया कि 'हम अमुक ब्राह्मण को कल के लिये न्योत आये हैं सो मैं तो कल अमुक स्थान में सौदा तुलाने जाऊंगा और तुम जो २ ब्राह्मण मांगे सो दे देना'। क्योंकि सेठजी ने यह तो जान ही लिया था कि जब पण्डितजी की छटांक भर खुराक है तो मांगे हीं गे क्या। दूसरे दिन सेठ तो सौदा तुलाने चले गये और ब्राह्मण ने आके सेठानी को आशीर्वाद दिया। सेठानी वैसी लोभिनी न थी और बड़ी साध्वी पतिव्रता ब्रह्म भक्त थी। उसने पूछा कहिये 'पं० जी आप को

क्या क्या चाहिये ?' इन्होंने कहा—'१० मन आटा, २ मन घी, ४ मन शाक, २ मन शक्कर, ५ सेर नमक, २ सेर मसाला तो घर भेज और 'हमारे लिये जल्दी चौका लगवाओ'। सेठानीजी ने चटपट चौका लगवा, पण्डितजी को भोजन बनवाये। बाद भोजन करने के पण्डितजी बोले कि 'सेठानीजी ! अब हमारी १०० अशर्फियां जो दक्षिणा की चाहियें वह भी मिल जायं तो हम तो आशीर्वाद दे घर चलें'। सेठानीजी ने १०० अशर्फियां भी दे दीं। ब्राह्मण आशीर्वाद दे विदा हुआ और अपने घर में जा खट्वा की शरण ले पड़ रहा और अपनी स्त्री ब्राह्मणी से कहा कि 'यदि सेठ आवें तो तू रोने लगना और कहना कि पण्डित तो जब से आप के घर से भोजन करके आये हैं तब से ही बहुत सख्त बीमार हैं यहां तक कि बचने की आशा नहीं। जाने आप ने क्या खिला दिया'। इधर जब सन्ध्या हुई तो सेठ दिन भर के भूखे यहां तक कि यह कभी लोभ से कंकड़ी भर गुड़ खा के पानी भी बाहर नहीं पी सकते थे जब घर में आये तो सेठानी से पूछा 'ब्राह्मणजी भोजन कर गये' ? सेठानी ने कहा कि 'हां पण्डितजी ने इतना इतना सामान घर के लिये मांगा

और आप ५ सेर तक पूड़ियां बनी यहां से खा १०० अशर्फियां दक्षिणा की भी ले गया।' सेठ यह सुन मूर्छित हो गया। थोड़ी देर में जब सेठ को होश आया तो वह उस ब्राह्मण के घर पहुंचा। ब्राह्मणी दर्वाजे पर बैठी थी। सेठ ने पूछा कि 'ब्राह्मण कहां हैं'? यह सुन ब्राह्मणी फूट २ कर रोने लगी और बोली कि 'उनको तो जब से आप के यहां से भोजन कर आये हैं जाने क्या होगया, बहुत सख्त बीमार हैं, बचने की आशा नहीं, जाने आप के घर में क्या खिला दिया' सेठ ब्राह्मणी के हाथ जोड़ने लगे और बोले कि 'चिल्लाओ मत' हम २००) तुमको और दिये जाते हैं सो उनकी चिकित्सा कराओ यह मत कहना कि सेठ जी के घर खाने गये थे सो जाने क्या खिला दिया।

२२१-(स्वप्न में भी कपड़ा बेचना)

किसी नगर में एक वैश्य के यहां कई पीढ़ियों से बजाज का काम चला आता था अतः वह भी अपनी पहली परिपाटी के अनुसार उसी काम में लीन रहता था। उठते, बैठते, खाते, पीते, जगते, सोते अर्थात् प्रतिक्षण कपड़ा के लेन देने में ही उसका समय अधिक व्यतीत होने के कारण उसके अन्तःकरण में इसी के

प्रबल संस्कार जमे हुए थे। उसी नगर में एक स्थान पर कोई पण्डित कथा बांचा करते थे। एक दिन यह वैश्य भी कथा सुनने गया। वहां दैववश इसे निद्रा आगई और यह लालाजी सुपना देखने लगे, परन्तु ये स्वप्न में ठाली न रहे, किन्तु अपने किसी ग्राहक को कपड़ा देने का मोल भाव करने लगे। इनके पास में ही कथा बांचनेवाले पण्डितजी का दुपट्टा लटक रहा था। इन्होंने शीघ्रता से पकड़, उस दुपट्टे के दो टुकड़े कर दिये और कहा-'अरे भाई! बोनी के वक्त ले पौने ही आठ आने में ले' यह देख सहित पण्डितजी के सब श्रोतागण हंसी के मारे लोट पोट हो गये। और लालाजी के व्यवहार को बड़ी प्रशंसा की।

फल—मनुष्य जिन कामों में अधिक संलग्न रहता है उन्हीं का संस्कार इसके अन्तःकरण पर डेरा जमा लेता है अतः बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिये कि शुभकर्मों में ही संसक्त रहे।

१२२-(एक कृपक कोली और परमहंस)

किसी नगर में एक कोली को भाग्यहीन होने के कारण अपने काम में सदा हानि रहती थी अतः

उसने कोलीपने का कार्य छोड़ कर खेती करनी प्रारम्भ की परन्तु उस में भी जब कि उसका प्रारब्ध अनुकूल नहीं था तो लाभ कैसे हो सका था किन्तु सर्वथा हानि ही रही और हानि भी यहां तक कि वह जब सरकारी कर भी न दे सका तो सरकार ने उसका सब माल असबाब छीन नंगा कर गांव से निकाल दिया। वह जंगलों में घूमता हुआ एकान्त में एक सघन निर्जन बन में पहुंचा। वहां अति रमणीय एक एकान्त स्थान में वीतराग परमहंस महात्मा, जगद्विधाता, भक्तजनत्राता, परमपिता, परमात्मा के ध्यान में नंग धड़ङ्ग बैठे निमग्न थे। यह कोली उन्हें भी अपने जैसे नंगे देख बोला कि "भाई! क्या तू ने भी खेत किया था? तुझ पै भी हाकिमी नहीं दी गई क्या"? यह दृश्य देख एक कवि ने कहा:—

याद‍ृशस्ताद‍ृशं पश्तेज्जनं वै कृषिकृद्यथा। गत्वा हंससमीपे तु कृषेर्दुःखं हि पृष्टवान्॥

———

१२३–(कर्कशा)

एक क्रूर स्वभावा स्त्री हमेशा उलटा वर्त्ताव किया करती थी यहां तक कि जो पति के मुख से निकले उसके विरुद्ध करना ही इसका काम था। यदि पुरुष कहे कि 'इस साल एक यज्ञ कराऊंगा'। तो कहती था कि 'यज्ञ तो कभी न होगा और चाहे कुछ हो'। पति कहता कि 'इस साल ब्रह्मभोज कराऊंगा'। तो यह कहती थी 'ब्रह्मभोज कभी न होगा और चाहे कुछ हो'। जब इसने स्त्री का स्वभाव यह जान लिया तो युक्ति से काम लेने लगा यानी जो जो कुछ इस पुरुष को कर्त्तव्य होता था सदैव उलटा कहा करता था। यदि इसे यज्ञ करना हो तो कहता था कि "इस साल मैं यज्ञ, ब्रह्मभोज न करूंगा।"। तब तो यह कहती थी कि "और चाहे कुछ न हो पर यज्ञ और ब्रह्मभोज तो इस साल अवश्य होगा"। इस दृष्टान्त के लिखने का प्रयोजन यह है कि यदि मनुष्य बुद्धिवान् और युक्तिमान् है तो दुष्ट से दुष्ट और विरोधी से विरोधी मनुष्य भी उसका कुछ नहीं कर सका।

———

१२४-(धूर्त को धन कभी न सौंपे)

किसी सरलस्वभाव वाले सज्जन पुरुष ने अपने एक धूर्त मित्र को २०) रु० देकर कहा-"मित्र! आप ये रुपये रखिये मैं स्नान करके अभी आकर लिये लेता हूं"। यह कह वह स्नान से बहुत शीघ्र निवृत्त होकर आया और अपने रुपये मांगने लगा तो उस धूर्त ने कहा-"भाई! तू अपने सब रुपयों का पहिले मुझ से हिसाब ले ले तब कुछ मांगना"। यह सुन उस सज्जन पुरुष ने कहा-"भाई! रुपये देते में अभी देर ही जब कुछ नहीं हुई है तब हिसाब कैसा"? इस प्रकार जब उनका परस्पर विवाद बढ़ गया तो वहां आस पास के बहुत से मनुष्य एकत्र हो गये यह झगड़ा सुन उस धूर्त से बोले-"क्यों भाई! तैंने इसके रुपये किस हिसाब से दबाये? वह धूर्त बोला-"लीजिये हिसाब सुन लीजिये प्रथम जब इसने जल में घुसकर गोता लगाया और कुछ देर न निकला तो मैंने समझा कि डूब गया अतः ५) रुपये देकर एक आदमी इसके घर भेजा शेष रहे १५) और जब यह जल में से निकल ऊपर आया तो पुनः इसके कुशल समाचार सुनाने के लिये ५) दे दूसरा आदमी भेजा, शेष रहे १०) उन में से ५) इसकी बधाई में दिये-अब रहे ५) उनकी मुझ से लिखा

पढ़ी करा लीजिये–बात ही क्या है" ? यह सुन वह बेचारा सज्जन चुप होगया और बोला—'भाई कृपा कीजिये, बस भर पाये'।

१२५–(गर्जवन्दा बावला)

एक सेठजी ने एक बदमाश को १००० एक हज़ार रुपये कर्ज दे दिये। जब सेठजी उस बदमाश से विशेष तकाज़ा करने लगे तो बदमाश ने एक वैद्य-राज से जो उसके पड़ोस में रहा करते थे सलाह पूछी तो वैद्यराज ने कहा कि ' तुम बीमारी का बहाना कर अपने घर लोट रहो, तो हम सेठ का दो चार सौ रुपया बिगड़वा दें '। बदमाश ने ऐसा ही किया और गांव में वैद्यराज ने यह प्रगट किया कि बदमाश बहुत सख्त बीमार है, आज ही कल में मरनेवाला है। सेठजी विचारे तकाज़ा तो भूल गये और दुबक्ता उसे देखने आते थे और इसी फिकर में पड़े कि किसी तरह यह अच्छा होजाय जब सेठजी ने वैद्यराज से पूछा कि 'किसी युक्ति से यह अच्छा भी हो सक्ता है' ? वैद्य-राज ने कहा कि ' यदि अमेरिका का उल्लू कहीं मिल जाय तो उसका कलेजा निकाल कर इनकी दवा

बनाई जाय तो आराम हो सक्ता है' परन्तु अमेरिका का उल्लू ५००) रुपये में आता है' सेठजी ने सोचा कि यदि यह मरगया तब तो एक कौड़ी भी वसूल न होगी और इस प्रकार अगर ५००) उल्लू में चले जायंगे तो ५०० तो मिलेंगे अतः थोड़ी देर में वैद्यराज ने उसी बदमाश के किसी सम्बन्धी को उल्लू लेके बाज़ार में बेचने के लिये भेज दिया और यह कह दिया कि बाज़ार में कहना कि 'लो अमेरिका के जंगल का उल्लू'। सम्बन्धी ने बाजार में जा 'ले लो अमेरिका के जंगल का उल्लू' ऐसा कहा । सेठजी विचारे तो आसामी की बीमारी से घबड़ा रहे थे उन्होंने कहा लाओ अमेरिका के जंगल का उल्लू। उल्लू वाला यह सुन जब पास लाया तो सेठजी बोले 'इसकी क्या क़ीमत है'? उल्लू वाले ने कहा ५००) रु०। सेठजी ने फ़ौरन ही ५००) रु० उल्लू वाले को दे और उल्लू ले बदमाश के दर्वाजे पहुंच कर वैद्यराज से कहा 'लो हम अमेरिका के जंगल का उल्लू ले आये'। तब तो वैद्यराज ने कहा कि 'रोगी तो अच्छा हो गया, अब आप के उल्लू की क्या आवश्यक्ता है? आप अपना उल्लू ले जाइये'। अब तो सेठजी ने इसको एक पिंजड़े में बन्द करके अपनी दुकान के सामने टांग दिया और

जो कोई ग्राहक आके कहता था कि 'सेठजी हलदी है'? तो सेठजी कहते कि 'हलदी है, मिरचा है, धनियां है, उल्लू है'। कोई पूंछे कि 'सेठजी इलायची है' तो जवाब देते थे 'लौंग है, मिर्च है, इलायची है, उल्लू है'। अर्थात् जो कोई ग्राहक चाहे कुछ ही क्यों न पूंछे तो दो एक और चीज़ों के नाम ले पीछे कह दिया करते थे 'उल्लू है'।

--—※—--

१२६—(सच्ची गुरु भक्ति)
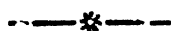
"पादपद्माचार्य्यजी" ईश्वर भक्त गुरुनिष्ठ गङ्गाजी के किनारे गुरु सेवा में रहा करते थे। गुरुजी कहीं देशाटन को जाने लगे। गुरुजी को जाते हुए देख यह चिन्ता में विकल हुए। इनको चिन्तित हुआ देख आज्ञा दी। कि गङ्गाजी को हमारा रूप समझना ये गुरु-आज्ञाको मानकर गुरुवत् गङ्गाजी की सेवा करने लगे। पर चरणको गङ्गा जल से कभी न स्पर्श करते थे। कूप जल से स्नान किया करते, परन्तु साधु लोग इनसे अप्रसन्न रहा करते थे। जब इन के गुरु देशाटन से लौट कर आश्रम पर आए तब सब महात्माओं ने इनकी बड़ी निन्दा की। परन्तु गुरुजी इनकी भक्ति से परिचित थे

सब जान गये कि यह गुरु-भक्तिसे गंगाजल में चरण स्पर्श नहीं करता। तब सब का मोह दूर करने को गंगाजी में स्नान करते हुए इनसे अगोछा मांगा। अब ये दुविधा में पड़े एक ओर तो गुरु रूप गंगाजो में चरणस्पर्शका पाप, उधर गुरु की आज्ञा का उल्लंघन ? इस ही चिन्ता में सोचते थे कि उस ही समय गंगाजीमें कमल प्रकटहोगए। ये उन्हीं पर चरण धरते हुए गये और अंगोछा गुरु महाराजको दिया। गुरुजीने इनकी अपार गुरुभक्ति देख कर छाती से लगा लिया। आशीर्वाद देकर उस ही समय (पाद पद्माचार्य्य) नाम रक्खा।

फल—देखिये गुरु भक्ति का प्रभाव ? वर्त्तमान समय के मनुष्य इसके प्रभाव को जानते ही नहीं हैं। जैसे गुरु बाबा, वैसे ही चेले।

१२७–(दो विवाह करनेवालेकी दुर्दशा)

एक सेठ के घर में चोर चोरी करने के निमित्त पैठै परन्तु उस सेठ के पास दो स्त्रियें थीं और उसका घर दुखण्डा बना हुआ था। एक औरत नीचे सोती थी और एक ऊपर सो रही थी, परन्तु नीचे से ऊपर जाने के लिये पास ही एक खिड़की थी। सेठजी नीचे

सोते ही थे। जब रात को उठके ऊपर जाने लगे तो नीचे की औरत ने तो साहूकार के पैर पकड़ लिये और और ऊपर वाली ने चोटी पकड़ ली और दोनों अपनी २ ओर को खींचने लगीं। इस प्रकार स्त्रियें रात भर खींचती रहीं और चोर तमाशा देखते रहे। प्रातःकाल चोर पकड़ लिये गये। चोरों को पकड़ सेठजी राजा के पास ले गये। राजा ने कहा चोरों को क्या क्या सजा होनी चाहिये? सेठजी ने कहा कि इनके दो २ विवाह होने की सजा दीजिये। यह सुन चोर बोले हुज़ूर चाहे हमें फांसी दे दी जाय पर दो २ विवाह होने की सजा न दी जाय। राजा ने कहा क्यों? चोरों ने कहा सेठजी से पूछ लीजिये।

१२८–(पाप का बाप लोभ)

एक पंडित को सन्देह हुआ कि पाप का बाप कौन है? वह इस ही सन्देहमें घरको त्याग विदेश को चल दिया। और जहां तहां पूंछने लगा कि पाप का बाप कौन है? तब एक वेश्या ने उसे बुलाकर कहा। 'महाराज! आप मेरे घर रसोई बना कर भोजन किया कीजये तो मैं

आप को एक अशर्फी दक्षिणा दिया करूंगी' । ब्राह्मण देवता यह सुनकर प्रसन्न हो गया । एक अशर्फी दक्षिणा- के लोभ से वहां गोबर से लीप रसोई कर जीमने लगा । फिर उस वेश्या ने कहा 'पंडितजी ? जो मैं स्नान कर शुद्धता से रसोई बना कर आप को जिमा दिया करूं तो क्या हानि है 'पंडितजी ने कहा ! 'हरे राम' तब वेश्या ने कहा 'महाराज ! दो अशर्फी दक्षिणा में दूगीं' । ब्राह्मण देवता दो अशर्फी दक्षिणा सुन कर प्रसन्न हो गया । और वेश्या से कहने लगा "कोई हानि नहीं हमारी स्मृति में मनु महाराजजी की आज्ञा है" । "अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति" शरीर तो जल से ही शुद्ध हो जाता है । पंडितजी की आज्ञा पाकर उस वेश्याने रसोई बनाई । जब ब्राह्मण देवता ने खाने को ग्रास उठा कर मुखके सामने किया तब वेश्या ने थप्पड़ मार कर कहा कि देख 'पाप' का बाप 'लोभ' ही है ।

फल—यह लोभ ही पाप का बाप है लोभ से परे और कोई पाप नहीं देखिए लोभी ब्राह्मण वेश्या के हाथ का भोजन करने को तैयार हुआ ।

———

१२६-(चार श्रोता)

एक पण्डितजी ने एकवार एक दृष्टान्त दिया कि श्रोता चार प्रकार के हुआ करते हैं। एक गपुआ, दूसरे तकुआ, तीसरे लखुआ और चौथे भकुआ। पण्डित जी बोले कि गपुआ श्रोता वे कहलाते हैं जो कथा में गप्पें लगावें और तकुवे जो यह ताकते रहते हैं कि अबके अच्छी वार्त्ता आवे तो सुनें और लखुआ वे जो अर्थ लखा करते हैं और भकुआ वे जो कथा में सो रहा करते हैं। एक कवि का वाक्य है:—

अप्रतिबुद्धे श्रोतरि, वक्तुर्वाक्यं प्रयाति वैफल्यम्। नयनविहीने भर्त्तरि, लावण्यमिवेह खञ्जनाक्षीणाम्॥

१३०—एकवार परीक्षित धूर्त्त के पास फिर न जाना चाहिये।

एक कुये के अन्दर एक सर्प जिसका कि नाम प्रियदर्शन और एक गोह जिसका नाम भद्रा और एक प्रधान मेंढक जिसका नाम गङ्गदत्त तथा और भी बहुत से मेंढक कुये में रहा करते थे। प्रियदर्शन और गङ्गदत्त

में परस्पर अति मित्रता थी परन्तु प्रियदर्शन उन कुओं के मेंढकोंमें से एक रोज खा लिया करता था इस प्रकार खाते २ उस कुये के सब मेंढक प्रियदर्शन ने खा लिये और एक दिन समय ऐसा आया कि प्रिय दर्शन के खाने को कुछ न रहा। इधर प्रियदर्शन ने सोचा कि और तो कोई मेंढक कुए में है नहीं अतः आज गङ्गदत्त ही को अपने खानेके काम में लाऊं। आप जानते हैं कि:-

"कलुषीभवच्च चेतः कथयत्येव हितैषिणं रिपुं च"

अर्थात् अपना चित्त ही जिस की तर्फ से निर्मल हो उसे हितैषी और मलिन हुआ शत्रु बतला देता है। इस न्याय के अनुसार मन को मन समझ जाता है अर्थात् उधर गंगदत्त ने भी समझ लिया कि इसने हमारे सब भाइयों को खा ही डाला और लाख दर्जे आज मुझपर हाथ साफ़ करने का विचार होगा अतः गंगदत्त कुये से घूम ज्यों ही प्रियदर्शन के पास पहुंचे तो बोले कि 'मित्र! आज हमें एक बात का बड़ा शोक है कि हमारे सब भाई तो निपट गये और अब केवल हम रह गये हैं सो यदि आप हमको भी खा लेंगे तो आज हमें खाके कल से आप क्या खांयगे? इसलिये यदि आप ऐसा करें तो आप को बहुत दिन को खाने का प्रबन्ध हो जाये'। प्रिय दर्शन ने कहा 'वह क्या' गंगदत्त

बोला कि 'बाहर एक तालाब में मेरे बहुत से भाई रहते हैं सो यदि आप भद्रा को आज्ञा दें तो वह मुझे यदि अपनी पीठ पर चढ़ा बाहर उतार आवे तो हम ताल के सब मेंढ़कों को लिवा लावें' ऐसा ही हुआ प्रियदर्शन ने फौरन ही भद्रा को आज्ञा दे दी कि 'तुम गंगदत्त को अपनी पीठ पर चढ़ा बाहर उतार आओ'। भद्रा ने पीठ पर चढ़ा जब गंगदत्त को बाहर उतार दिया उस समय गंगादत्त बोला कि—

श्लोक।

विभुक्षितः किन्न करोति पापं, क्षीणा-जना निष्करुणा भवन्ति। त्वं गच्छ भद्रे! प्रियदर्शनाय, न गंगदत्तः पुनरेति कूपम्॥

अर्थ-भूखा क्या पाप नहीं करता? क्योंकि क्षुधा से क्षीण हुए पुरुष में दया कहां? सो हे भद्रे! तुम प्रिय दर्शन के पास चली जाओ और उससे कह देना कि अब गङ्गदत्त तो फिर कुए में आने से रहा। तुम प्रियदर्शन के पास चली जाओ इन दृष्टान्तों को देख कहीं आप लोग यह कुतर्क न उठाने लगें कि सांप, गोह और मेंढ़क भी बोला करते और परस्पर बात चीत किया करते थे क्या? यह केवल मनुष्यों के समझाने के लिये सांप गोह मेंढ़कों के नाम ले ले अलंकार बांध बांध कहे गये हैं, इस लिये कोई दोष नहीं।

१३१—परमेश्वर से रक्षित को कोई नहीं मार सक्ता है।

एक वृक्ष के ऊपर एक कबूतरी और एक कबूतर बैठे हुए थे इतने में एक बहेलिया धनुषवाण लिये हुऐ शिकार को पहुंचा और इस कबूतरी और कबूतर को बैठा देख अपना धनुषवाण चढ़ा इनकी ओर पूरा निशाना लगा दिया और इतने में ऊपर की ओर एक उड़ता हुआ बाज़ कहीं से आ रहा था कि उसने भी अपनी घात यह लगाई कि इन पर धावा करना चाहिये। कबूतरी यह दशा देख अपने स्वामी कबूतर से बोली :—

कान्तं वक्ति कपोतिकाकुलतया नाथा-
न्तकालोऽधुना व्याधो ऽधोधृतचापसन्धित-
शरा शेनस्तु खे दृश्यते एवं सत्यऽहिना
सदष्ट इषुना शेनस्तु तेनाहतस्तूर्णं तौ
तु गतौ यमालयमहो दैवी विचित्रा गतिः॥

अर्थ—अपने पति से कबूतरी व्याकुल हो के बोली कि 'हे नाथ! काल सिर पर आगया, देखो नीचे दुष्ट बहेलिया धनुषबाण चढ़ाये पूरा पूरा निशाना लगाये

हुये ऊपर की ओर ताक रहा है धनुष से बाण छोड़ने ही वाला है और ऊपर की ओर देखो वह बाज जो उड़ रहा है वह भी पूरी पूरी घात लगाये हुये है, यहां तक कि झप्पा मारने ही वाला है परन्तु होता क्या है कि बहेलिये ने ज्योंही अपना बाण छोड़ना चाहा त्योंही उसके पैरमें एक सप चिपट गया और बहेलिये को काट खाया जिससे बहेलिया का निशान तिरछा होगया और ज्यों ही बहेलिये का बाण छूटा त्योंही वह ऊपर वाला बाज जो कबूतर कबूतरी पर झप्पा मारने के लिये समीप आरहा था जाकर उसके लगा बस बाज तो ऊपर मरा और बहेलिया नीचे मर गया परन्तु परमेश्वर ! तेरी महिमा धन्य है ।

१३२—विना परीक्षा के कोई काम न करना चाहिये ।

एक ब्रह्मणी ने एक न्योला पाल रक्खा था, जिस को वह बड़े प्यार से रखती थी । नित्य प्रति अच्छी से अच्छी वस्तुयें उस न्योले को खिलाया करती थी । एक दिन ब्राह्मणी अपने ६ मास के नन्हे बालक को एक खटोला पर लिटा कर कुवे से जल भरने चली गई । न्योला लड़के के खटोले के पास बैठा था कि इतने में

एक सर्प उस लड़के के काटने के निमित्त आया । न्योलाने सर्प को कुछ तो खा लिया और कुछ तोड़ फोड़ वहीं रख दिया । अब न्योला यह अपना कर्त्तव्य ब्राह्मणी को जनाने के लिये ब्राह्मणी के पास को चला । यह न्योला मार्ग में ब्राह्मणी को मिला । ब्राह्मणी ने इसके मुह में खून भरा हुआ देख उसके जी में यह ख्याल हुआ कि यह मेरे पुत्र को काट कर आया है । यह ख्याल करते ही ब्राह्मणी को क्रोध आगया और ब्राह्मणी ने अपने शिरके घड़े उसके ऊपर पटक दिये जिनकी आघातसे वह तत्क्षण ही मर गया। पश्चात् जिस समय वह ब्राह्मणी अपने स्थान पर पहुंची तो क्या देखती है कि मेरा बालक आनंदसे चार पाई पर खेल रहा है और उस बालक के खटोले के पास ही एक सर्प खुतरा हुआ पड़ा है । ब्राह्मणी ने जान लिया कि यह सर्प मेरे लड़के को काटने आया था और न्योला इसे तोड़ फोड़ मुझे यह दिखाने गया था कि देख तेरे लड़के को सर्प काटने आया था उसे मैं तोड़ फोड़ के रख आया हूं यह देख उस ब्राह्मणी को ऐसा पश्चात्ताप हुआ कि जब तक वह जीवित रही उस शोक को न भूली इसी लिये कहा है कि:—

श्लोक।

असमीक्ष्य न कर्त्तव्यं,
कर्त्तव्यं सु समीक्षितम्।

अर्थ-बिना परीक्षा किये कभी कोई काम न करना चाहिये, किन्तु प्रत्येक काम को भली भांति परीक्षा कर करना चाहिये नहीं तो इसी प्रकार पश्चात्ताप को प्राप्त होता है जैसे कि न्योला को मारने से ब्राह्मणी।

१३३-(बिना बुद्धि के विद्या निष्फल)

एक जंगल में एक महाबलवान् सिंह रहता था और जगल के जानवरों में बड़ा उपद्रव किया करता था। यहां तक कि खाता तो एक ही आध जानवर था परन्तु तोड़ फोड़ दस पांच को डालता था अतः जंगल के सम्पूर्ण जानवरों ने सम्मति की कि हम तुम सब मिल के वनराज के पास चलें और यह प्रार्थना करें कि 'ऐसा करने से आप को क्या फल? कि आप खावें तो एक और मारें दस को' इस प्रकार हम सब बहुत जल्द निबट जायंगे इसलिये यदि आपकी सम्मति हो तो हम लोग अपनी अपनी ओसरी बांध लें और एक रोज़ आप के पास चला आया करे इस भांति हम सब भी

कुछ दिन जीवित रहेंगे और आप को भोजन भी बहुत दिन तक मिलता रहेगा'। सिंह ने यह जानवरों की राय स्वीकार कर ली और ऐसा ही होने लगा यानी उन जानवरों में से एक रोज चला जाता था और सिंह अपनी तृप्ति कर लिया करता था। एक दिन एक खरगोश की बारी थी परन्तु यह खरहा सिंह के पास बहुत विलम्ब से पहुंचा। सिंह बड़ा ही क्षुधित और गुस्से से जला भुना बैठा था। ज्यों ही सिंह के सामने खरहा पहुंचा तो सिंह क्रोध में हो बोला कि क्योंरे दुष्ट! तू इतनी देर तक कहां रहा? खरहे ने उत्तर दिया 'महाराज! मैं तो आपकी सेवा में बड़े सवेरे ही आता था परन्तु मुझे दूसरा सिंह मिल गया सो बोला कि क्योंरे खरहे तू कहां जाता है? मैंने कहा कि उस वन में जो हमारा वनराज रहता है मैं उसके पास जाता हूं। बस उस ने मुझे घेर लिया और वापिस आने की शर्त पर आने दिया—अतः देरी होगई। तब तो सिंहने कहा कि चल उस सिंह को दिखला कि कहां है? खरहा ने थोड़ी दूर ले जाकर एक कुआ बतला दिया कि इस में है। सिंह ने ज्यों ही कुये में अपनी परछाई देख आवाज़ लगाई कि कुयें में से भी आवाज आई तो सिंह को यह निश्चय होगया कि इस के भीतर सिंह अवश्य है बस यह

समझ सिंह कुये में कूद पड़ा और मर गया। खरहे ने अपनी राह ली ।

१३४—(रस से भेली)

किसी सज्जन पुरुष के यहां बारात आई सब कार्य सानदं सम्पूर्ण हुए। पर दाने चारे पर नौबत झड़ने लगी। उधर से वह कहता है कि 'मैं तो भेली लूंगा' दूसरा कहता था कि "भेली की लाग धेली" आपस में ये ही जटल हो रही थी—निदान दो चतुर उस से बोले। भाई तू भेली मांगै भेली रस की ही तो होती है? उसने कहा हां तो जब तुम्हारा हमारा रस ही नहीं रहा अर्थात् झगड़ा हो ने से बेमन हो गया । तब भेली काहे की मांगे है। यह सुन कर वह कुछ नहीं कह सका।

फल—आपस में जब वैमनस्य हो जावै तब रस की सम्भावना कहां से हो सकती है।

१३५—(भेषधारी)

एक बिल्ली बड़ी ही दुष्ट और निशि दिन चूहे मारा करती थी इस कारण इसले चूहे भी होशियार

होगये थे अर्थात् इस के सामने कभी कोई चूहा बिल से बाहर नहीं निकलता था। जब बिल्ली ने देखा कि अब मेरा गुप्फा नहीं जमता तो बिल्ली ने यह आडम्बर रचा कि कुछ दिन उसने चूहा मारना छोड़ दिया और इधर उधर से लोगों के घरोंमें जा जा दूध रोटी आदि कुछ उठाकर खाया करती थी। थोड़े दिनों के बाद बिल्ली ने एक घड़े का घेरा अपने गले में पहिर चूहों के पास आके बोली—मैं केदारनाथ को गई थी सो यह केदार-कंकण पहिर आई हूं और वहां रहके मैंने बड़ा तप किया और ये प्रतिज्ञा की कि मैं अब से कभी हिंसा न करूंगी और न कभी किसी जीव को सताऊंगी सो अब तुम मत्र हमसे बेफिकर रहो मैं अब तुमको नहीं सताऊंगी। चूहे यह सुन बेखटके हो गये और अब सब चूहे बिल्ली के सामने निकलने लगे परन्तु बिल्ली जिस समय सब चूहे आते थे तब तो चुपचाप सीधी साधो खड़ी रहती थी और जब चूहे निकल जाते थे तो पीछे से एक उड़ा लिया करती थी। एक दिन चूहों ने अंतरङ्ग की कि क्यों भाई! यह बिल्ली तो तीर्थवासिनी और तपस्विनी तथा केदारकंकण पहिरे ही हुये है है फिर हम लोगों की तादाद नित्य कम क्यों होती जाती है? यह शोच सब चूहों ने एक बाणे चूहे से कहा

कि आज जिस समय हम लोग बिल्ली के सामने से चलने लगें तो पीछे आप रह जायं ताकि पता लग जायगा कि बिल्ली हम लोगों को खाती है या नहीं ? बाणे ने स्वीकार कर लिया और ऐसा ही हुआ जब बिल्ली के सामने से सब चूहे चले और बंडा पीछे रह गया तो बंड को बिल्ली शीघ्र ही निगल गई । उस दिन सब चहे संभाले और वह न मिला तब पुनः दूसरे दिन बिल्ली के सामने आते ही चूहे बोले कि तू कण्ठ में तो केदारकङ्कण पहिरे हो है और तीर्थ-वासिनी तथा महातपस्विनी भी है पर हम सब एक हज़ार थे सो उनमें से तूने १०० उड़ा लिये और उसका प्रमाण यह है कि आज बण्ऊ नज़र नहीं आते ।

—:o:—

१३६—कुसंग से महात्माओं का भी संचित तप नष्ट हो जाता है ।

परमवैराग्यमान श्रृंगीऋषिजी एकान्त बन में तपस्या करते थे उस देश के राजा ने यज्ञ करना चाहा तब लोगों ने कहा कि श्रृंगीऋषिजी आवैं तो आपका

यज्ञ सम्पूर्ण हो सकता है। यह सुनकर राजा ने उनको लाने के लिये अप्सरा भेजी। अप्सरा महात्माजी के पास गई। ऋषिजी अनेक वर्षों से समाधि लगाए बैठे थे इस कारण उन की आंखें न खुलीं अप्सरा का स्वार्थ सिद्ध न हुआ। दूसरे दिन वह उनके लिये उत्तम मिष्टान्न बना कर लेगई उस दिन भी वही हुआ। महात्मा जी की समाधि न खुली किन्तु अप्सरा मिष्टान्न उनके मुखसे लगाकर चली आई। फिर दूसरे दिन जाकर लगाया तो मुनिजी महाराज जीभ से चाटने लगे, ऐसे ही प्रतिदिन मिष्टान्न ले जाती रही। फिर तो महात्माजी मुख खोल कर उसकी प्रतीक्षा में बैठे रहा करते थे। और मिष्टान्न आने पर जीम लिया करते थे। फिर क्या था महात्माजी उससे बोलने भी लगे और कहा कि तुम हमको अपने आश्रम को ले चलो। अप्सरा का स्वार्थ सिद्ध होगया। उसके मन चाही हुई। उस ने कहा बहुत अच्छा चलिए महाराज! ऐसे कह राजधानी में ले आई। राजाका यज्ञ समाप्त हुआ। फिर जो कुछ शृंगीऋषि जी ने किया वह सब पर अनेक कथाओं से विदित ही है।

फल—संसर्गेणैव त्यजेत मुनेरस्तत्सञ्चित तपः।
यथा वेश्या मुनिं कृत्वा स्ववशश्चानयद् गृहे॥

देखिए बहुत काल श्रृंगी ऋषिजी भी कुमार्ग में रहने से गृहस्थ मार्ग में तत्पर हुए।

१३७–जो जिसके पास रहता है वही उसके गुण दोष जानता है।

एकबार महाराज रामचन्द्र तथा लक्ष्मणजी दनों चलते २ पम्पापुर के निकट पहुचे वहां महात्मा रामचन्द्रजी ने एक तालाब में बगुले को देख लक्ष्मणजी से कहा कि:—

श्लोक।

पश्य लक्ष्मण पंपायां, वकः परमधार्मिकम्।
मन्दं मन्दं पदं धत्ते, जीवानां वधशंकया॥

अर्थ–हे लक्ष्मण! इस पम्पासर में देखो कि यह बगुला कैसा धार्मिक है? देखिये कैसे धीरे धीरे टपा टपा पैर रखता है कि कहीं कोई जीव न मर जाये। यह सुन कर मछली बोली कि:—

श्लोक।

वकः किं वर्ण्यते रामं येनाहं निष्कुलो कृता। सहवासी विजानीयात्, चरित्रं सहवासिनः॥

अर्थ– हे राम ! बगुले की आप क्या प्रशंसा करते हैं इसने तो हमें निर्वंशी कर दिया । महात्मन् ! आप इसे क्या जाने ? क्योंकि जो जिसके पास रहता है वह उसके गुण अच्छी तरह जानता है सो महाराज इस बगुले को हम जानती हैं ।

---

१३८ (डफोल शंख)

एकबार एक ब्राह्मण घर से धन की खोज में निकले परन्तु चारों ओर संसार में पर्य्यटन कर आये पर कहीं धन का ठीक न लगा । अनायास एक महात्मा से इनकी मुलाकात होगई और इन्होंने बाद दण्डवत् प्रणाम के अपनी सारी व्यवस्था कह सुनाई 'कि महाराज ! धन की अभिलाषा से निकले और चारों ओर दुनियां मंझा डाली पर मुझे एक कौड़ी भी कहीं न मिली जिसके कारण महाराज ! मैं अत्यन्त दुःखी हूं । महात्मा ने ब्राह्मण को विशेष दुखी देख एक काञ्चनीमुद्रा इस प्रकार की दी कि जो रोज् एक अशरफ़ी दिया करती थी और पण्डितजी से कहा कि ' अब आप इसे ले जाइये यह नित्य एक अशरफ़ी आप को दिया करैगी कि जिस से आपका दुख दूर हो जायगा ' । ब्राह्मणजी उस काञ्चनी-

मुद्रा को लेकर चल दिये परन्तु दिल में पूर्णरूप से यह विश्वास न था कि यह काञ्चनीमुद्रा रोज़ एक अशरफ़ी देगी इस लिये चित्त में यह लगी थी कि कहीं उतरें और स्नान पूजन करके इस से अशरफ़ी मांगे फिर भला देखें कि यह देती है या नहीं ब्रह्मदेव ने ऐसा ही किया। मार्ग में एक गांव मिला जहां एक शिवालय और कुआ बड़ा अच्छा बना था और पास ही एक बनिये की दूकान थी। यह देख ब्रह्मदेवजी शिवालय में उतर पड़े और कुये पर स्नानकर शिवालयमें पूजन करने लगे। वहां पास की दूकान वाला बनिया भी बैठा था ब्रह्मदेव ने पूजाकर उस काञ्चनीमुद्रा से कहा कहा कि 'हे काञ्चनीमुद्रा महाराणी ! अब एक अशरफ़ी दीजिये' यह सुनते ही काञ्चनीमुद्रा ने एक अशरफ़ी दे दी। बनिया देखकर दंग हो गया और मनमें सोचने लगा कि हम दिन भर मिहनत करते हैं तब मुश्किल से दो आने पैसे पदा होते हैं और यह काञ्चनीमुद्रा तो बहुत ही अच्छी है कि बिना मिहनत एक अशरफ़ी दिया करती है, यह समझ बनिये ने मन में ठान ली कि ब्रह्मदेव की यह काञ्चनीमुद्रा किसी प्रकार लेनी चाहिये, अतः दोपहर के बाद जब ब्रह्मदेवजी वहां से चलने लगे तो उस बनिये ने ब्रह्मदेवजो से बड़ी कुछ लल्लो चप्पो की कि महाराज ! अभी

धूप है, और दिन थोड़ा है कहां कष्ट उठाते फिरोगे और यह तो आप का घर है, आप हमारे पूज्य हैं, आपकी सेवा करना हमारा धर्म है, भला आप लोगों की सेवा हमें कहां मिल सकती है ? आप को यहां कोई तकलीफ न होने पावेगी, अतः आप प्रातःकाल उठकर चले जाइये'। यह सुन आखिर ब्राह्मण ही ठहरे दया आही गई और ब्रह्मदेवजी ठहर गये। बनिये ने ब्रह्मदेव की बड़ी सेवा की और जब रात को ब्रह्मदेवजी सोगये तो सेठजी ने ब्रह्मदेव की काञ्चनीमुद्रा तो निकाल ली और उसकी जगह एक दूसरी बटिया रख दी। ब्रह्मदेवजी प्रातःकाल उठ के चल पड़े लेकिन इन के मन में अभी यह शंका लगी थी कि काञ्जनीमुद्रा ऐसा न हो कि एक दिन अशरफी देके रह जाय और दूसरे दिन न दे सो स्नान और पूजा करके अशरफी मांगे—देखें यह रोज की अशरफी देने वाली है या नहीं अतः ब्रह्मदेव ने नदी में स्नान और पूजा कर बोले कि 'हे काञ्जनी मुद्रा ! 'ले अब एक अशरफी दीजिये' परन्तु अब वहां अशरफी कौन दे ? काञ्जनीमुद्रा जो थी वह तो गई सेठ के पास, उस के स्थान में एक पत्थर की बटिया थी, भला वह अशरफी कब दे सकी थी। जब काञ्जनीमुद्रा ने उस रोज अशरफी न दी तो ब्रह्मदेव

ने समझा कि महात्माजी ने हमारे साथ बड़ा धोखा किया, कहा यह था कि यह काञ्जनीमुद्रा तुम को रोज़ एक अशरफ़ी देगी सो यह एक दिन ही देकर रह गई। यह सोच ब्राह्मण फिर महात्मा के पास पहुंचा और हाथ जोड़ बोला कि 'महाराज! आपने हमको बड़ा धोखा दिया, आप कहते थे कि यह काञ्जनीमुद्रा आप को रोज़ एक अशरफ़ी देगी सो महाराज इसने तो सिर्फ़ एक ही रोज़ अशरफ़ी दी दूसरे दिन इससे हम बहुत कुछ मांगते रहे पर इस ने अशरफ़ी न दी। महात्मा यह सुन के हैरान हो गये और सोचने लगे कि कारण क्या है जो ऐसा हुआ पुनः महात्मा ने ब्राह्मण से पूछा कि तुम कहीं रास्ते में भी ठहरे थे? ब्राह्मण ने सारा मार्ग का क़िस्सा महात्मा को कह सुनाया। पुनः महात्मा ने ब्राह्मण को एक शङ्ख दिया और कहा कि इसको ले जाओ और जहां जिस सिवाले पर उस दफ़े ठहरे थे फिर ठहरना और वैसे ही पूजा करना और इस शंख से अशरफ़ी मांगना और रात को उस बनियेके यहां ठहर जाना यह शङ्ख तुमको वह काञ्जनी-मुद्रा जो बनिये ने तुम्हारी बदल ली है दिला देगा और फिर तुम जब काञ्चनीमुद्रा पाजाना तो सिवा घर के

और कहीं न ठहरना। ब्राह्मण ने वैसा ही किया। चलते २ उसी सिवाले पर आके ठहरा और कुये पर स्नान कर ब्राह्मण पूजा करने लगा और फिर वही बनियां ब्राह्मण के पास आकर बैठ गया और पूजा देखने लगा। ब्राह्मण पूजा कर शंख से बोला कि शंख महाराज! अब दो अशरफ़ी दीजिये। शंख बोला कल चार इकट्ठी दो रोज़ की दे दूंगा। पुनः जब ब्रह्मदेव चलने लगे तो बनिये ने अपने मनमें सोचा कि कांचनीमुद्रा तो एक ही अशरफ़ी रोज़ देती है यह तो दो रोज़ देता है इस कारण ब्राह्मण को आज रखना चाहिये, अतः बनिये ने ब्राह्मण की खुशामद कर फिर रख लिया और ब्राह्मण की बड़ी सेवा की। जब रात को ब्राह्मण सो गया तो सेठ ने पहिले की कांचनीमुद्रा तो ब्राह्मण के पास रख दी और शंख उठा लिया। अब प्रातःकाल ब्राह्मण तो कांचनीमुद्रा ले रवाना हुआ। रहे सेठ सो न्हा धो जब शंखजी से बोले कि 'शंखजी! कल चार देने को कहते थे अब आज चार दीजिये' शंखजी बोले 'कल आठ' जब दूसरे दिन सेठ ने कहा 'महाराज! शंखजी अब आज आठ दीजिये' तब शंखजी ने कहा 'कल सोलह' जब तीसरे दिन सेठ ने कहा कि 'शंखजी! अब आज १६ दीजिये' तो शंखजी बोले कि:—

श्लोक ।

पद्म शंख प्रदा मुद्रा,
'काञ्चनी' सागताऽबुध ! ।
अहं डफोल शंखोऽस्मि,
न ददामि वदाम्यहम् ॥

अर्थ—हे मूर्ख ! जो काञ्चनीमुद्रा पद्म और शंखों की देने वाली थी सो तो गई और मैं तो डफोल संख हूं कहता ही जाऊंगा दूंगा एक कौड़ी नहीं ॥

——

१३९ पतिव्रता स्त्री महाभारी आपत्ति पड़ने पर भी अपने धर्म को नहीं त्यागती ।

मालव देश में एक बड़ा विद्वान् और धनवान् एक अग्निदत्त ब्राह्मण रहता था। वह सदैव याचकों को धन दिया करता था । जैसा वह धर्मज्ञ था वैसे ही उसके दो पुत्र उत्पन्न हुए। बड़े का नाम शिवशङ्कर और छोटे का धर्मध्वज था । उन में से धर्मध्वज छोटा पुत्र

विद्याध्ययन के लिये पिता के यहां से कहीं चला गया और बड़े भाईने यज्ञ करनेके लिये धनके इकट्ठे करनेवाले उत्तम तथा परोपकारी यज्ञदत्त नामके ब्राह्मण की कन्या के साथ विवाह किया। (वह कन्या मैं हूं) समय पाकर मेरा श्वसुर स्वर्गवासी हुआ और मेरी सास भी उसी के साथ सती होगई। इसके उपरान्त मेरे पति ने तीर्थ-यात्रा के बहाने घरसे जाकर सरस्वती नदी में शोकान्ध हो शरीर त्याग दिया। जब उसके साथियों ने यह वृत्तान्त मुझ से कहा। तब मैं भी अपने शरीर त्याग ने का संकल्प कर वहां से चली। फिर मैंने सोचा कि मैं गर्भवती हूं मुझ को सती होना उचित नहीं ऐसा सोचकर अपने धर्म की रक्षा करती हुई दिन व्यतीत करने लगी। थोड़े दिन के बाद जिस गांव में मैं रहती थी उस गांव में अग्नि लगी और किन्हीं २ घरों को छोड़कर सब स्वाहा हो गया। तदनन्तर बचे हुये घरों को चोरों ने लूटा मेरा कुल सामान चोर ले गये तब मैंने तीन ब्राह्मणियों के साथ कुछ वस्त्र लेकर वहां से भाग चलना ही उत्तम समझा वहां से चलकर एक महीने तक बहुत कठिन कर्मों से जीविका करके अपने धर्म की रक्षा करती हुई एक ग्राम में निवास करने लगी। वहां के लोगों से राजा उदयन को अनाथों की रक्षा करने वाले धर्मज्ञ सुन कर उन

तीन ब्राह्मणियों के साथ वहां आई इस देश में आते ही उन तीनों ब्राह्मणियां के साथ रहते हुए एक ही साथ गर्भ की अवधि समाप्त हो जाने पर मेरे दो पुत्र उत्पन्न हुये शोक ! विदेश, दरिद्रता और एक साथ ही दो पुत्रों का उत्पन्न होना, ब्रह्मा ने मानो मेरे लिये आपत्ति का द्वार ही खोल दिया ! तब इन बालकों के पालन की कोई गति न समझ कर मैंने स्त्रियों के लज्जारूपी आभूषण को छोड़ कर राजा उदयन से प्रार्थना की और उनकी आज्ञा से रनवास में गई और हाथ जोड़ अपना नाम (पिंगलिका) बता कर नम्रतापूर्वक अपनी सब विपत्ति का पूर्ण वृतान्त रानी से कहा। तब ये मेरे ऊपर दयालु होकर कहने लगीं। कि हे पुत्री ! मेरे यहां धर्मध्वज नामक एक ब्राह्मण बहुत काल से रहता है और वह मेरा पुरोहित भी है। मैंने अच्छी तरह विचार लिया कि वही तेरा देवर है। पाठक ! रानी ने इस प्रकार उससे कहकर रात्रि में सब तरह से उसका सत्कार किया और अपने समीप ही रक्खा। प्रातःकाल होने पर रानी ने अपने पुरोहितजी को बुलाकर सब वृतान्त उससे पूंछा उस वृतान्त को सुन कर सबको निश्चय हो गया कि यह इस दीन ब्राह्मणी का देवर है। फिर रानी ने धर्मध्वज से कहा यह तुम्हारे बड़े भाई

की स्त्री तुम्हारी भावी है इसकी तुम रक्षा करो। धर्मध्वज को पिंगलका द्वारा पूर्ण परिचय होने पर और अपने माता पिता तथा ज्येष्ठ भाई की मृत्यु को जानकर उसको अपने घर ले गया और वहां जाकर अपने माता पिता व भाई का शोक करके अपनी भावी को धैर्य्य दिया। रानी ने भी उसके दोनों पुत्रों को अपने पुत्र के पुरोहित बनाये और बहुत सा धन देकर बड़े का नाम शान्ति-सोम और छोटे का नाम वैश्वानर रक्खा फिर इन सब के सुख से दिन व्यतीत होने लगे।

फल—यह संसार अन्धकारमय तथा दुखःमय है इसमें जीव पूर्वकर्मानुसार जाता है इसलिये मनुष्य को चाहिये कि कितनी ही विपत्ति क्यों न पड़े परन्तु पुरुषार्थ व धैर्य को कभी न त्याग कर धर्म पर दृढ़ रहना चाहिये। देखिये यह द्विज बधू कितनी आपत्ति पड़ने पर भी अपने धर्म से च्युत न हुई। धर्म के प्रताप से फिर सर्व सुख को प्राप्त हुई।

———

१४०—दुष्ट लोगों की परम्परा महात्माओं के लिये भी दुःख देने वाली होती है ।

कुसुमपुर नाम एक नगर है वहां हरस्वामी नामका एक ब्राह्मण तीर्थों का सेवन करनेवाला धर्मज्ञ रहा करता था वह ब्राह्मण गङ्गाजी के किनारे भिक्षावृत्ति करते हुए अपना पालन करता था। उसके शुद्ध आचरणों को देखकर उस गांव के मनुष्य उसको बहुत मानने लगे थे । एक समय वह ब्राह्मण भिक्षा मांग रहा था । उसके गुणों में दोष लगाने के लिये खोटा कर्म करनेवाले एक दुष्ट ने लोगों से कहा कि क्या तुम जानते हो। कि यह कैसा कपटी साधू है। इसने इस नगर के सब बालक खाए हैं यह सुनकर उस ही दुष्ट का साथी दूसरा बोला कि तुम ठीक कहते हो मैंने भी और मनुष्यों से ऐसा ही सुना है। उसके तीसरे साथी ने कहा जी हां यह बात मैंने भी अमुक से सुनी है यह बात ठीक है इसी क्रम से एक दूसरे के कान में होती हुई यह बात सम्पूर्ण नगर में फैल गई। उस नगर के लोग उस बात पर विश्वास करके अपने बच्चों को बाहर नहीं

निकलने दिया करते थे। यह समझ कि हरस्वामी हमारे लड़कों को पकड़ कर खा जायगा। इसके उपरांत उस ग्राम के सम्पूर्ण ब्राह्मणों ने लड़कों के नाश के भय से उसको नगर से निकाल देने की सलाह की और सब लोग इस भय से कि यह क्रोध करके हमको ही न खा जाय उसके पास न जा सके। तब उन्होंने उसके पास दूत भेजे। दूतों ने दूर से ही जाकर कहा। कि महाराज सब ब्राह्मणों की आज्ञा है कि आप इस नगर से चले जांय उसने बड़े आश्चर्य में कहा कि ब्राह्मण ऐसा क्यों कहते हैं तब दूतोंने उत्तर दिया कि जिस बालक को तुम देख पाते हो उसे मार कर खा जाते हो। यह सुन कर हरस्वामी ब्राह्मणों को समझाने के लिये आप ही उनके पास चले। महात्माजी को आते देख कर ग्राम के लोग भागने लगे। भय के मारे अपने २ मकानों के ऊपर चढ़ गए। सत्य है प्रायः मिथ्या अपवाद से मोहित हुए लोग विचार नहीं कर सकते हैं। इसके उपरान्त हरस्वामी ने नीचे खड़े होकर ऊपर के ब्राह्मणों से कहा कि हे ब्राह्मण लोगो! तुम्हें आज यह क्या अज्ञान हुआ है। अपने आपस में क्यों नहीं देखते हो। कि मैं ने किसके बालक कब खाए हैं। यह सुन कर सब ब्राह्मण लोगों ने आपस

में विचार किया तो सब को मालूम हुआ कि किसी का भी बालक उसने नही खाया। यह देखकर सब नगरवासियों ने कहा कि अरे हम सब मूर्ख लोगों ने इस महात्मा को मिथ्या ही दोष लगाया सबके बालक तो जीते हैं। इसने किसी के बालक नहीं खाए। इस प्रकार सब लोगों के कहने पर हरस्वामी अपनी शुद्धताको प्रकट करके नगर से जाने को तयार हुआ ठीक कहा है दुर्जनों के द्वारा लगाये हुए दोष के उपरान्त सम्पूर्ण नगरनिवासियों ने महात्माजी के चरणों पर गिर कर हरस्वामी को बहुत समझाया, बड़ा आग्रह करने पर उस ने वहां रहना स्वीकार किया।

१४१-(अनधिकार चेष्टा)

एक जङ्गल में एकवार दो बढ़ई एक शीशम की सिली चीर रहे थे। बढ़ई प्रायः जब लकड़ी चीरा करते हैं तो आरेके कुछ आगे एक छोटे काष्ठका खूंटासा छोलकर ठोक दिया करते हैं जिसको खटकिल्ली कहते हैं बढ़ई दो पहर को लकड़ी चीरना बन्द कर रोटी खाने चले गये। शीशम की सिली में खटकिल्ली ठुकी हुई थी जिस से कि सिली फैली हुई थी। इतने में एक बन्दर सिली पर आगे की ओर आकर बैठ गया।

बन्दर के अण्डकोश सिल्ली की दराज़ के भीतर होगये और बन्दर उस खटकिल्लीको पकड़कर हिलाने लगा इसलिये खटकिल्ली बाहर निकल पड़ी और सिल्ली के दोनों पल्ले जो फैले थे वे परस्पर मिल गये। अब तो जो बन्दर के अण्डकोश उस सिल्ली के दराज़ के भीतर थे दब गये जिससे कि बन्दर उसी समय मर गया। सच कहा है कि:—

श्लोक।

अव्यापारेषु व्यापारं योजनः कर्त्तुमिच्छति।
स खलु निधनं याति कीलोत्पाटीव वानरः॥

अर्थात् जो मनुष्य अनधिकारी हो और उस काम के करने की इच्छा करता है उसकी यही दशा होती है जैसे जंगल की सिल्ली से कील उखाड़ने में बन्दर की दशा हुई।

१४२—जिसकी बुद्धि आपत्ति आने पर ठीक रहती है वह बड़े बड़े दुःखों से तर जाता है।

एक बन्दर एकबार एक दरिया में तैर रहा था कि इतने में उस दरिया के रहनेवाले घड़ियाल ने

इसकी टांग पकड़ ली तब तो दूसरा बन्दर जो कि दरिया के किनारे बैठा था इस बन्दर को पैरने से ठहरा हुआ देख बोला कि "क्या हुआ, क्यों रुक गया" ? तब उसने उत्तर दिया कि "क्या बतावें ! एक घड़ियाल ने एक लकड़ी को अपने मुंह में दबा यह समझ रक्खा है कि मैंने बन्दर की टांग पकड़ ली"। यह सुन घड़ियाल ने बन्दर की टांग छोड़ दी सच है:—

श्लोक ।

विपत्तिकाले समुत्पन्ने बुद्धिर्यस्य न हीयते ।
स एव दुर्गन्ति तरति जलस्थो वानरो यथा ॥

अर्थ—आपत्ति के उत्पन्न होने पर भी जिसकी बुद्धि नहीं बिगड़ती वह बड़ी बड़ी कठिनाइयों से तरता है जैसे कि दरिया से बन्दर तर आया ।

——*——

१४३—(टके टके की चार बातें)

एक बादशाह शिकार खेलने गया लौटते समय देरी होजाने के कारण एक स्थान पर ठहर गया था। थोड़ी देर में क्या देखता है कि एक बान बटनेवाले का बान उरझ गया है, उस बानवाले ने अपनी स्त्री से कहा कि 'यदि यह मेरा बान तू सुरझा दे तो मैं तुझे एक २

टके की चार बातें सुनाऊं"। स्त्री ने बात सुरझा कर कहा कि 'अब आप वे चार बातें सुनाइये'। पुरुष ने कहा कि पहिली एक टके की बात तो यह है कि 'अपना काम किसी दूसरे के भरोसे न छोड़े और दूसरी बात यह है कि अपनी स्त्री को कभी मायके में न रक्खे' तीसरी बात यह है कि 'कमीने की नौकरी न करै' और चौथी बात यह है कि 'अपनी धरोहर कभी दूसरे के पास छिपा कर न रक्खे'। इन चारों बातों को बादशाह ने ध्यान से सुनकर मन में सङ्कल्प किया कि इन चारों बातों की परीक्षा अवश्य करनी चाहिये। यह सोच आते ही अपने राज्य का सम्पूर्ण काम मंत्री आदि के सुपुर्द किया और कह दिया कि 'अब छः मास तक मैं राज्य का काम बिलकुल न करूंगा, यहां तक कि मैं हस्ताक्षर भी न करूंगा'। यह कहकर बादशाह अपने महल में रहने लगा, परन्तु बादशाह की बीबी बादशाह के ससुराल में ही थी इसलिये बादशाह ने सोचा कि 'अपनी ससुराल चल स्त्री का भेद देखना चाहिये कि मायके में रहने से क्या हानि होती है, ऐसा विचार बादशाह ने एक हज़ार अशरफ़ी नक़द और एक लाल अपनी जांघ के अन्दर रख वेष बदल ससुराल का मार्ग लिया। वहां पर पहुंचकर सराय में जा ठहरा और अपनी एक हज़ार

अशरफ़ी चुपके से भटियारिन के पास रख दीं और कहा कि 'आवश्यकता पड़ने पर मैं तुम से ले लूंगा और पुनः एक महान् दीन का वेष बना यानी केवल एक लंगोटी लगा, मैली देहसे शहरके कोतवाल के पास जाकर हुक्का भरने के लिये केवल रोटियों ही पर नौकरी कर ली और उसी कोतवाल के पास बादशाह की स्त्री जो कि इसी हुक्के वाले आदमी (बादशाह) से व्याही थी आया जाया करती थी। एक दिन का वृत्तान्त है कि दोनों अर्थात् वह औरत और कोतवाल एक ही चार-पाई पर लोटे हुए थे। इतने में कोतवाल ने उस हुक्के वाले से कहा ' अबे हुक्के वाले! ज़रा हुक्का भरके रख जा ' और यह हुक्का भरके रखने गया कि बाद-शाह की लड़की यानी (इसकी स्त्री) इसकी सूरत देखकर समझ गई कि हो न हो यह मेरा पति बादशाह है मेरा हाल जानने के लिये इसने ऐसा स्वांग रचा है, अतः उस औरत ने कोतवाल से पूंछा कि यह आदमी आपने कब से नौकर रक्खा है? कोतवाल साहब ने उत्तर दिया 'कि इस को रक्खे हुये अभी तो दस पन्द्रह दिन हुये होंगे' तब तो उस औरत ने कहा कि ' इसे आप मरवा डालिये'। कोतवाल ने

बहुतेरा कहा कि 'इस बेचारे ने तुम्हारा क्या किया है? खाली रोटियों पर सारे दिन मिहनत किया करता है, न बेचारा बोलना ही जानता है क्योंकि बौरा है और न कुछ सुनता ही है, क्योंकि बहरा है' परन्तु बादशाह की लड़की के बहुत हठ करने पर कोतवाल साहब ने विवश होकर हुक्के वाले को जल्लादों के हवाले किया और जल्लादों से कह दिया कि 'इसे जङ्गल में मार के डाल आओ'। पुनः जल्लाद उस को लेकर जङ्गल में जा पहुंचे और अपने हथियार निकाल उसको मारने का इरादा किया। इतने में इस हुक्के भरनेवाले ने कहा कि 'आप लोग मुझ से एक हज़ार अशरफ़ियां ले लीजिये और मुझे छोड़ दीजिये'। बहुत वाद विवाद के पश्चात् जल्लादों ने आपस में यह निश्चय कर कहा कि 'एक हज़ार अशरफ़ियां लाइये' हम आप को छोड़ देंगे। 'हुक्केवाला जल्लादों को ले सराय में गया और भटियारिन से अपनी धरोहर यानी एक हज़ार अशरफ़ियें मांगी तब तो भटियारिन ने दपट कर कहा कि 'चलबे भड़ुये कल तक तो हमारे कोतवाल साहब के यहां रोटियों पर नौकर रहा और लंगोटी लगाये घूमता रहा तेरे पास कहां से अशरफ़ियां आईं तब बेचारा लाचार अपनी जांघसे लाल निकाल

जल्लादों को दे, अपनी जान बचा घर आया और यहां से कुछ दिन के बाद अपने ससुर को पत्र लिखा कि "अमुक मितीको विदा कराने आवेंगे"। यह समाचार सुन बादशाहज़ादी को ज्ञात हुआ कि हमारे बादशाह वह नहीं थे कि जिसको हमने शुभा से मरवा डाला। बादशाह ने विदाका पत्र स्वीकार कर लिया। बादशाह नियत तिथि पर विदा कराने पहुंच गया और दो तीन दिन बादशाह ने अपने दामाद की बड़ी खातिर की परन्तु दामाद कुछ सुम गुमसा उदासीन वृत्ति धारण किये रहा क्योंकि इसके पेट में तो और ही बात समाई हुई थी। पुनः ससुर ने पूछा कि "आप उदासीन क्यों हैं और आपने इस दफे हम से कोई चीज़ मांगी नहीं सो जो आपकी इच्छा हो सो मांगिये" अपने ससुर बादशाह का विशेष आग्रह देख इस बादशाह ने कहा कि "हमारे शहर का प्रबन्ध ठीक नहीं है इसलिये आप अपने शहर के कोतवाल को हमारे यहांके प्रबन्ध के लिये हमें दे दीजिये। दूसरे हमारे शहर की सरायों में बड़ी गड़बड़ी मची रहती है इस लिये आप अपने यहां की अमुक भटियारिन को भी दे दीजिये"। बादशाह का दामाद इन दोनों को दहेज में ले, विदा करा कर रुख़सत हुआ और कोतवाल तथा भटियारिन

दोनों रास्ते में बड़े प्रसन्न होते चले जाते थे कि अब तो हमारी खूब बनिआई। वहां जाकर सैकड़ों हमारी मातहती में रहेंगे और बड़ी हमारी इज्ज़त तथा तरक्की होगी। अब बादशाह ने अपने शहर में पहुंच कर दूसरे ही रोज़ आम दरबार किया और उन बान बटने वाले दोनों स्त्री पुरुषों को बुलवाकर पूंछा कि अमुक तारीख़ को अमुक महीने में अमुक वक्त जब तुमने अपना बान उरझने पर अपनी स्त्री से बान सुरझा देने की एवज़ में चार टके की चार बातें बतलाई थीं वे कौन सी बातें हैं? वह बेचारा डरके मारे कुछ बतला नहीं सकता था। पुनः बादशाह ने उसे धीरज देके कि 'तुम घबड़ाओ नहीं, बल्कि प्रसन्नतापूर्वक अपनी बातें कहो'। बान वाले ने कहा कि 'हुज़ूर! पहली बात तो एक टके की यह थी कि 'अपना काम किसी दूसरे के भरोसे पर न छोड़े' पुनः बादशाह ने जब अपने दफ़्तर की जांच की तो बड़ा ही उलट पुलट और बड़ी गलतियां मिलीं यहां तक कि करोड़ों रुपया लोग गमन कर गये बादशाह ने उन सब को उचित दण्ड दे बान वाले से कहा कि 'तुम्हारी यह बात एक टके की नहीं किन्तु एक लाख की थी पुनः बादशाह ने कहा कि 'आप अब अपनी दूसरी बात सुनाइये' तब तो बान वाले

ने कहा कि हुज़ूर दूसरी बात यह है कि 'अपनी स्त्री को भी मायके में न रक्खे' तब तो बादशाह ने अपनी बेगम को दरबारे आम में बुलाकर कहा 'क्यों हरामज़ादी ! तू मायके में रह कर कोतवाल से मोहब्बत करते हुए मुझ से इतनी विरुद्ध होगई थी कि मेरे मार डालने का हुक्म दे दिया था'। इतना कह बादशाह ने गरम तेल कराकर उसकी मूत्र इन्द्रिय में डलवाके मरवा डाला। पुनः बान वाले से कहा कि 'तुम्हारी दूसरी बात एक टके की नहीं बल्कि दो लाख रुपयेकी थी, अब आप कृपा कर अपनी तीसरी बात सुनाइये' बान वाला बोला कि सरकार तीसरी बात यह थी कि 'कमीने की नौकरी कभी न करे' यह बात सुन बादशाह ने कोतवाल साहब को बुलाकर कहा "क्योंजी ! जब मैं आप के यहां रोटियों पर नौकर था और हुक्का भरता था तो आपने इस हरामज़ादी के कहने पर मुझे जल्लादों के सुपुर्द किस अपराध पर किया था" ? कोतवाल उत्तर ही क्या देता अतः बादशाद ने कोतवाल साहब को भी जहन्नुम रसीद किया और बान वाले से कहा कि यह तुम्हारी तीसरी बात एक टके की नहीं बल्कि तीन लाख की थी'। पुनः बादशाहने बान वाले से कहा

कि 'अब आप कृपा कर अपनी चौथी बात सुनाइये'। बान वाले ने कहा-'महाराज! चौथी बात यह है कि 'अपनी धरोहर किसी के पास छिपकर न रक्खे' इस बात को सुनकर बादशाहने भटियारी को बुलाकर कहा कि 'क्योंरी! हमने जो तेरे पास एक हज़ार अशरफ़ियां इस शर्त पर रक्खी थीं कि समय पड़ने पर ले लूंगा पुनः जब मैं जल्लादों के साथ तेरे पास अशर्फ़ियां मांगने गया तब तू साफ़ इनकार कर गई और ऊपर से मुझे अण्ड बण्ड बातें सुनाईं'। भटियारी हाथ जोड़ क्षमा मांगने लगी। तब बादशाहने कहा कि उस समय तुझे मेरी जान प्यारी थी तो इस समय मुझे तेरी जान क्यों कर प्यारी हो सकती है? अतः बादशाह ने भटियारिनको कमर तक गढ़वाकर शिकारी कुत्ते उस पर छोड़ नोचवा डाला और बान वाले से कहा कि 'तुम्हारी यह चौथी बात भी एक टके की नहीं बल्कि चार लाख की थी। इस प्रकार बान वाले को १० लाख दे विदा किया।

१४४-(राजा भोज का विद्या प्रचार)

यह बात भली भांति प्रसिद्ध है कि राजा भोज

के यहां जो कोई नई कविता करके ले जाता था उसको महाराज बहुत धन दिया करते थे। एकबार चार मूर्खों ने यह विचार किया कि बहुत से लोग कुछ न कुछ कविता बना जब महाराजा भोज के यहां से पुष्कल धन ले आते हैं तो हम तुम भी कोई कविता बनावें। सबों ने कहा यह बात बड़ी अच्छी है बस सब के सब कविता बनाने में प्रवृत्त हुये उनमें से एक बोला कि 'मुनुन मुनुन रंहटा मुन्नाय' लो हमारा तो बन गया। दूसरा बोला कि 'तेली के बैल खरी भुस खाय' मेरा भी बन गया। तीसरा बोला कि 'डगर चलन्ते तरकस बन्द' मेरा भी बन गया और चौथा बोला कि 'राजा भोज है मूसर चन्द' तुम्हारा सब का बन गया तो मेरा भी बन गया। अब तो चारों की यह सम्मति हुई की यह कविता चलके महाराज भोज को सुनावें और यह विचार चारों कर महाराज भोज की ड्योढ़ी पर पहुंचे परन्तु महाराज भोज की ड्योढ़ीपर प्रायः महाकवि कालीदास भी रहा करते थे। इन चारों ने कालीदास से कहा कि हम लोग कुछ कविता बनाकर लाये हैं वह महाराज को सुनाना चाहते हैं कालीदास इनकी शकल देख बोले कि क्या कविता बना लाये हो जो महाराज को सुनाना चाहते हो ? प्रथम

हमें तो सुनाओ । यह सुन उन में एक बोला कि 'मुनुन मुनुन रंहटा मुन्नाय' कालिदास ने कहा तुम्हारी कविता अच्छी है । दूसरा बोला 'तेली के बैल खरी भुस खाय' कालीदास ने कहा तुम्हारी भी अच्छी है । तीसरा बोला कि 'डगर चलन्ते तरकस बन्द' कालीदास ने कहा तुम्हारी भी अच्छी है । चौथा बोला कि 'राजा भोज है मूसरचन्द' कालीदास ने कहा कि तुम्हारी कविता अच्छी नहीं इस लिये तुम ऐसा कहना कि 'राजा भोज जैसे शरद् का चन्द' चौथे मूर्ख ने मान लिया और चारों महाराज भोज के पास पहुंचे और चारों महाराज को दण्ड-वत् प्रणाम कर बोले कि 'महाराज ! हम लोग आप को कुछ कविता सुनाने आये हैं' । महाराज ने इन की सकल देख और इन के मुख से ऐसा शब्द सुन बड़े प्रसन्न हो इन की ओर मुखातिब हो बोले कि 'तुम लोग अपनी कविता सुनाओ' उनमें से एक बोला कि 'मुनुन मुनुन रंहटा मुन्नाय' । महाराज ने इस विचारे की यह रुचि और साहस देख कि यद्यपि पढ़ा नहीं पर इस की इस ओर रुचि और इतना साहस तो हुआ जो इतने अक्षर जोड़ हमारे पास तक तो आया अतः महाराज ने कहा 'कि १००) रुपये इसे पार-

तोषिक दिये जांय'। दूसरा बोला कि 'तेलीके बैल खरी भुस खाय' महाराज ने इसे भी १००) रुपये के पारतोषिक की आज्ञा दी। तीसरा बोला 'कि डगर चलन्ते तरकस बन्द' महाराज ने उसे भी १००) रुपये पारतोषिक देनेकी आज्ञा दी। चौथा बोला कि 'राजा भोज जैसे शरद् के चन्द'। राजा भोज ने यह सुन विचारा कि इस का साथ तो इन तीन मूर्खों का है और यह भी कुछ पढ़ा लिखा नहीं मालूम पड़ता है अतः यह ये शब्द कहीं से पागया या किसीसे पूंछ आया है, नहीं तो ऐसे शब्द यह कभी नही बना सका अतएव राजा भोजने कहा कि इसे एक कौड़ी भी न दी जाय। यह चौथा मूर्ख बोला कि 'महाराज हमारा छन्द कलिदसवा ने बिगड़ा डाला'। महाराज भोजने कहा कि अच्छा जो तुमने बनाया हो वह कहो। पुनः वह चौथा मूर्ख बोला कि 'महाराज! पहिले हमारा छन्द ऐसा था कि 'राजा-भोज हैं मूसरचन्द' महाराज ने कहा कि 'अब ठीक है, अब इसे २००) पारतोषिक दिये जांय'। धन्य है महात्मा भोज और वे दिन जब कि ऐसा विद्या का प्रचार था।

१४५—जो किसी का कोई बुरा चाहै उसको भी बुरा फल मिलता है—

जैसे एक बगुला नित्य तालमें मछली खाता था। उसकेभी बच्चे वृक्ष पर थे वृक्षमें एक खखोडर था उस में एक सर्प रहता था। जब बगुला मछली खाने जाता तो सर्प निकल कर बगुले के एक बच्चे को खा जाता जब बगुले ने देखा कि यह सर्प मेरे बच्चों का खाये जाता है क्या करूं? एक रोज़ उसने मछलियों से कहा कि मेरे बच्चों को सर्प खा जाता है मैं क्या करूं मछली बोलीं कि हम बतावें। अगर कहीं न्योला हो तो हमको लेजाकर न्योले के बिल से सर्प के बिल तक हमारी पंक्ती लगा दो अतः बगुले ने ऐसा ही किया निदान न्योलेने मछलियां भी खालीं और सर्प को भी खा गया और बगुले के बच्चों को भी भक्षण कर गया अब तो बगुले को महान् ही दुःख हुवा सच है जो कोई दूसरों का बुरा चाहैगा और दुसरे का कुल नष्ट चाहैगा उस का स्वयम् हो जायगा। यह निश्चय समझना चाहिये।

१४६—(पुराने काल में यज्ञका प्रचार)

जिस समय महाराज रामचन्द्र और लक्ष्मणजी बनको जारहे थे और प्रयाग कुछ ही दूर रह गया था तो लक्ष्मण ने महाराज रामचन्द्रजी से पूछा कि:—

श्लोक।

किमयं दृश्यते तात! धूमपुञ्जोऽयमग्रतः?।

भाईजी! ये धुयें की पुञ्ज जो आगे उठ रही है सो क्या दिखलाई पड़ता है यह सुन श्रीरामचन्द्रजी ने उत्तर में कहा कि:—

प्रयागो दृश्यते तात! यजन्तेऽत्र महर्षयः॥

भाई लक्ष्मण! यह प्रयाग दिखलाई पड़ता है, यहां महर्षि लोग यज्ञ कर रहे हैं, उसका धुवां है। प्रिय लक्ष्मण इसका प्रयाग नाम ही इस लिये पड़ा है कि "प्रकृष्टेन यजते यस्मिन् स प्रयागः" जिस में प्रकृष्ट रूप से यज्ञ हो वह प्रयाग कहलाता है। पुनः किसी कवि ने कहा है:-

यदि कदाऽपि पुरा पतिताश्रवः श्रुतिगता हि द्विजा न च वाऽन्यथा। परमियं वसुधाऽत्र विना क्रतुं परिव्रताऽश्रुजलैरिति चित्रता॥

पुराने ज़माने में यदि कभी किसी के आंसू निकलते थे तो केवल यज्ञ के धुवां से, नहीं तो प्रजा की आंखों से कभी आंसू नहीं निकलते थे॥

१४७–विद्वान् को चाहिये कि धृष्ट जनके आगे बुद्धि से ही प्रत्युत्तर देवे ।

एक दीन ब्राह्मण राजा के पास याचक बन कर गया और द्रव्य मांगा । उस धृष्ट राजा ने सुनकर एक कलश जल का भरवा कर मंगाया और ब्राह्मण से कहा–"कि महाराज ! आपके पूर्वज महर्षि अगस्त्यजी ने अथाह समुद्र को तीन आचमनों से पान किया है। आप इस कलशे भरे जलको पान कीजिये। तो आपको कुछ द्रव्य दू" । इस पर ब्राह्मण महाराज ने सोच विचार कर एक छोटा सा पत्थर उठा कर राजा के सामने रख दिया कि "राजाधिराज ! पहिले क्षत्रिय कुल-भूषण श्रीरामचन्द्रजी महाराज ने पहाड़ों को जल पर तिरा कर समुद्र का सेतु बांधा था । आप इस ज़रा से पत्थर को इस कलशे में तिरा दीजिए" । राजा सुन कर निरुत्तर हुआ और प्रसन्न होकर ब्राह्मण को दक्षिणा दे विदा किया ।

फल—*बुद्ध्यैव योजयेद्विद्वान् धृष्टे प्रत्युत्तरन्तदा ।*
स्वकार्यं सफलं भूपाद्यथा प्रष्टो द्विजोलभत् ॥

बुद्धि से विचार कर उत्तर देने से धृष्ट राजा से भी ब्राह्मण को धन की प्राप्ति हुई ।

१४८—(इस ही पर दूसरा दृष्टान्त)

एक नवाब ने एक पंडित से कहा—'कि महाराज! आप हमको सन्ध्या करनी सिखाइये'। अब जो ब्राह्मण देव यह कहें कि तुम यवन हो तुम्हारा अधिकार नहीं? तो वह इन को तङ्ग करता। तब पंडितजी ने सोच विचार कर कहा—'बहुत अच्छा, आप कीजिये'। नवाब साहब सन्ध्या करने बैठे? ब्राह्मण ने कहा 'नवाब साहब! पहिले सन्ध्या में लिखा है। *'स प्रणव गायत्र्या शिखां बद्ध्वा'* सो आप पहिले अपनी शिखा बांध लीजिये फिर सन्ध्या कीजिए'। अब वहां शिखा बांधने को क्या था शिर पर हाथ फेरा तो "सफा चट मैदान" लाचार हुए? पण्डितजी पीछा छुटा कर घर आए।

———

१४९—(इस ही पर तीसरा दृष्टान्त)

एक सीधेसादे पंडित से नवाब ने पूछा कि कहिए महाराज! कितने वर्ण हैं उसने शुद्ध स्वभाव से कहा। हुजूर! वर्ण चार हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र राजा के मंत्री कायस्थ ने कहा! देखिए नवाब साहब! इन में आपका तो कुछ भी नाम नहीं नवाब ने यह सुन कर

ब्राह्मण को कुछ भी न दिया वह निराश होकर अपने घर लौट आया। थोड़े दिन बाद एक पंडितजी फिर नवाब साहब के यहां याचना करने गए। नवाब साहब ने वही प्रश्न इनसे भी किया। कि महाराज वर्ण कितने हैं। पंडितजी ने बुद्धि से विचार कर कहा हुज़ूर वर्ण आठ हैं। चार हमारे हिन्दुओं में चार आपके मुसलमानों में। तब तो नवाब साहब खुश होकर बोले। भला पंडितजी हमारे मुसलमानों में चार कौन २ हैं। पंडित ने कहा शेख, सय्यद, मुग़ल, पठान नवाब सुन कर प्रसन्न हुए और उसको बहुत सा इनाम दिया।

———*———
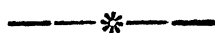
१५०—(इस ही पर चौथा दृष्टान्त)

एक बहुत गरीब ब्राह्मण किसी ग्राम में रहा करता था वह बहुत सीधा था कुछ पढ़ा लिखा न था। इससे उसको द्रव्य कहीं से भी न मिलता। एक दिन कालिदासजी ने उससे कहा कि हम राजा के पास चलते हैं तुम भी आना तेरा कुछ उपकार करा देंगे। यह कह कर ईख के दो टुकड़े अपने पास से आशीर्वाद देने को दिये। जब वह चले गए तो थोड़ी देर बाद वह ब्राह्मण भी गया और आकर एक ओर बैठ गया। वहां एक बदमाश ने

उस ब्राह्मण को बगल से ईख के दो टुकड़े निकाल कर उन की जगह पर लकड़ी के दो टुकड़े रख दिये। जब उस ब्राह्मण की बारी आई। तब उसने वह दोनों टुकड़े आशीर्वाद देने को बगल से निकाले। वे तो लकड़ी के थे ही। राजा उन्हें इन्धन रूप अपशकुन देख कर बहुत अप्रसन्न हुआ तब कालिदासने बुद्धिसे विचार कर कहा। कि धर्मावतार ! इस ब्राह्मणने अपना दरिद्र रूप इन्धन आप के आगे रख दिया। अब आप इसे भस्म कर डालिए। इस का यही अभिप्रायः है राजा सुन कर बड़ा प्रसन्न हुआ और उस ब्राह्मण के दरिद्रको फूक उसे धनवान् बना दिया।

फल--बुद्धि से विचार कर उत्तर देने में अवश्य सफलता प्राप्त होती है।

१५१—(बाल विवाह से हानि)

एक ब्राह्मण ने अपनी कन्या का विवाह आठ ही वर्ष की अवस्था में कर दिया। ब्राह्मण अपने घरका धनवान् था और कुछ पढ़ा लिखा भी था इस कारण यह अपनी कन्या को भी पढ़ाया करता था और ब्राह्मण का समधी और दामाद दीन होनेके कारण कलकत्ता में नौकर थे। ब्राह्मण का दामाद बड़ा ही छैल और

ग़रीब गुण्डा तथा बड़ा ही उजड्ड था, अपने बाप से बिलकुल नहीं दबता था। यह ब्याह होने के बाद सोलह वर्ष निरन्तर परदेश में रहा और ब्राह्मण की कन्या यहां पढ़ लिख कर बहुत कुछ योग्य होगई। बाद सोलह वर्ष के जब ब्राह्मण का दामाद आया तो ब्राह्मण ने बड़ा सत्कार किया। जब रात का समय आया तो ब्राह्मण की लड़की से उसकी सखी सहेलियों ने कहा कि 'तुम्हारे पति आये हैं, जाकर उनकी सेवा करो। उसने उत्तर दिया कि 'किसका पति, मेरा पति वह हर्गिज़ नहीं है'। यह सुन वे बोलीं क्यों तुम्हारे मा बापने तुम्हारा ब्याह उसके साथ नहीं किया? लड़की ने कहा कि तो वह मेरे मा बाप के पति होंगे, मा बाप उनकी सेवा करें, मैंने उस के साथ कोई प्रतिज्ञा नहीं की। सखियों ने कहा तुम छोटी थीं, तुम्हें याद नहीं, तुमने छोटेपन में प्रतिज्ञा की है। लड़की ने कहा जब कि मैं अपने ठीक ठीक होश हवाश में ही न थी तो प्रतिज्ञा कैसी? पुनः जब यह समाचार ब्राह्मण और उसकी स्त्री को मालूम हुआ तो उन दोनों ने अपनी लड़की को बहुत समझाया और बोले कि 'वह विदा कराने आये हैं तू ऐसा कहती है'? लड़की ने बाप से कहा कि 'तो आप ही विदा होके उस के साथ चले जाइये, क्योंकि आपने ब्याह किया और आप ही का वह पति है'।

आखिर यह मुक़द्दमा अदालत तक पहुंचा, वहां साहब मजिस्ट्रेट के पूछने पर लड़की ने कहा कि मेरा व्याह मुझे मालूम भी नहीं कि कब हुआ और किसने प्रतिज्ञा की, अब यह न मालूम कौन कहां से आगया, मेरा बाप कहता है कि तुम इस के साथ जाओ, मैंने तुम्हारा इस के साथ व्याह किया है तो मैंने बाप से कहा कि जब तुमने विवाह किया तो तुम्हीं इस के साथ विदा हो के चले जाओ मैंने इस के साथ कोई इक़रार नहीं किया। आखिर मुक़द्दमा खारिज होगया और लड़की को हुक्म हुआ कि तुम अपना व्याह अपनी मर्ज़ी के मुआफ़िक़ कर सक्ती हो।

———

१५२—(पूर्व स्त्रियों की विद्या और योग्यता)

पूर्व समय के स्त्रियों की विद्या और योग्यता के ग्रन्थ के ग्रन्थ भरे हुये हैं ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो भारत की देवी गार्गी, मैत्रेयी, कात्यायनी, सुलभा, आदि की ब्रह्मविद्या तथा कैकेयि, दुर्गावती, ताराबाई, संयोगिता, लक्ष्मीबाई की वीरता पद्मावती, सीता आदि का सतीत्व न जानता हो परन्तु

हमें तो दिखलाना यह है कि अभी गये गुज़रे समय में आप के यहां एक एक स्त्री इतनी योग्य और विदुषी होती थी कि जिसके लिये मैं आपके सामने महाराणी विद्योत्तमा का चरित्र उपस्थित करता हूं।

विद्योत्तमा एक बड़ी ही सुयोग्य और विदुषी कन्या थी यहां तक कि उसने एक विद्या का संग्रामरूपी यज्ञ रच रक्खा था और वह यह कि संसार भर में यह विज्ञापन दे रक्खा था कि जो मुझे शास्त्रार्थ में आकर जीत ले उसी के साथ मैं अपना व्याह करूंगी और रूप में भी यह एक ही रूपवती थी इस कारण बड़े बड़े विद्वानों ने आ आकर इस के साथ शास्त्रार्थ किये परन्तु उस संग्राम से पराजय हो अपनासा मुंह ले ले चले गये और विद्योत्तमा इस शोक में थी कि क्या संसार में मुझे कोई वर न मिलेगा। पुनः उन सब पण्डितों ने यह सम्मति की कि इसका व्याह ऐसे मूर्ख के साथ कराना चहिये कि जो एक अक्षर भी न जानता हो अतः एक जगह एक पुरुष एक वृक्षपर जिस डाली पर बैठा था वही डाली काट रहा था। पण्डितों ने यह दृश्य देख विचार किया कि इससे बढ़के मूर्ख शायद अब संसार भर में न मिलेगा। अतः विद्योत्तमा का व्याह इससे कराना चाहिये। बस पण्डितों ने विद्योत्तमा के सामने उस मूर्खको लाके

खड़ा कर दिया और कहा आज कल इन्होंने मौन व्रत धारण किया है अतः संकेत द्वारा आप इनसे शास्त्रार्थ कीजिये। विद्योत्तमा ने एक अंगुली उठाई जिसके माने यह थे कि ब्रह्म एक है या दो। पण्डितों ने इसे समझाया कि यह कहती है कि मैं तेरी एक आंख में यह अगुली घुसेर फोड़ दूंगी तब तो उसने दो अंगुली उठाकर मनमें बोला कि अगर तू मेरी एक आंख फोड़ेगी तो मैं तेरी दोनों फोड़ दूंगा। जिस का अभिप्राय पण्डितों ने यह समझाया कि कहता है कि दो हैं एक जीव और दूसरा ब्रह्म। पुनः विद्योत्तमाजी ने पांच अंगुलियें उठाईं जिसका मतलब यह था कि पांचों इन्द्रियें तुम्हारी वशमें हैं। पण्डितों ने इस मूर्ख से कहा कि कहती है कि थप्पड़ मारूंगी। इस मूर्खने मूठी बांध के घूसा उठाया और और मनमें बोला कि अगर तू थप्पड़ मारेगी तो मैं घूंसा मारूंगा। इसका अभिप्राय पण्डितों ने विद्योत्तमाजी को समझाया। कि कहता है कि पांचो इन्द्रियां मेरे मूठामें हैं। आखिर विद्योत्तमा का व्याह उस मूर्ख कालिदास से होगया पुनः जब रात में ये दोनों स्त्री पुरुष इकट्ठे हुये तो अनायास एक ऊंट उस समय किसी का छूट कर बलबलाता जा रहा था तब तो यह मूर्ख कालिदास बोला कि उट्टु उट्टु उट्टु यह सुन विद्योत्तमाने समझ लिया

कि ये मूर्ख है पुनः महाराणी विद्योत्तमाने उस मूर्ख कालिदास को इस प्रकार पढ़ाया। कि वही कालिदास रघुवंश और मेघदूत सरीखे काव्यों का रचयिता हुआ और संसार में जिसने महाकविकी उपाधि प्राप्त की यह सब उसकी स्त्री का ही प्रताप था। एक भाषा कवि का वाक्य है कि।

छन्द।

दमयन्ती सीता गार्गी लीलावती विद्याधरी।
विद्योत्तमा मन्दालसा थीं शास्त्रशिक्षा मे भरी॥
ऐसी विदुषी स्त्रियें भारत कि भूषण होगई।
धर्मव्रत छोड़ा नहीं गोजान अपनी खोगई॥

१५३—अन्धेर नगरी गंवरगंड राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा।

एक ग्राम बड़ा ही रमणीक और सुन्दर था। वहां प्रायः सभी चीज़ सदैव टके सेर बिका करती थी। एक गुरु और उनके दो चेले एकवार चलते चलते उसी गांव में पहुंच गये तो गुरु ने गांव के लोगों से पूछा भाई ग्राम का क्या नाम है लोगों ने कहा 'अन्धेर नगरी

चौपट्ट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा' तब तो गुरुने कहा कि चलकर तो देखें कैसी अन्धेर नगरी है। जहां सब टके सेर हो बिकता है। जब गांव में पहुंच बाज़ार में पहुंचे तो अनाज वालों से पूंछा कि 'भाई! जौ कितने सेर'? दूकानदारने कहा 'जौ टके सेर, गेहूं टके सेर, चावल टके सेर और सरसों टके सेर'। पुनः हलवाइयों के पास जा पूंछा कि 'अरे भाई हलवाई! बरफ़ी कितने सेर है' हलवाई ने कहा 'टके सेर, पेड़ा टके सेर, और बताशा टके सेर'। पुनः बजाजों से कहा 'भाई बजाजो! मारकीन क्या भाव है'? बजाज बोले टके सेर, मलमल टके सेर, रेशम टके सेर'। पुनः काछियों के पास जाकर पूंछा 'भाई! पालक क्या भाव'? काछी ने कहा 'टके सेर, बैंगन टके सेर'। गुरुने यह दशा देख चेलों से कहा अरे भई चेलो! सुनोः—

श्लोक।

छेदश्चंदनचूतचम्पकवने रक्षा करीरद्रुमे।
हिंसा हंसमयूरकोकिलकुले काकेषु नित्यादरः॥
मातङ्गेन खरक्रयः समतुला कर्पूरकार्पासयोः।
एषा यत्र विचारणा गुणिजनो देशाय तस्मै नमः॥

दोहा

सेत सेत जहँ एकसे, दधि अरु दूध कपास।
ताहि राज्य में ना करिय, भूलिकै कबहुं न वास॥

इसलिये चलो यहां से भग चलें। उन दो चेलों में से एक चेला बोला गुरुजी हम तो यहां से न जायगे, मजे से टके सेर मलाई ले ले उड़ावेंगे। गुरुजी ने कहा अच्छा बेटा! मत चलो पर एक बात हम कहे जाते हैं कि शायद तुम्हें कभी कोई आपत्ति आपड़े तो हम अमुक शहर में रहेंगे तुम हमें बुला लेना। पुनः गुरुजी एक चेला को लेकर चले गये और यह दूसरा चेला टके सेर मलाई खा खा खूब मोटा हुआ क्योंकि गांव के लोग तो विचारे बहुत ही दुबले और टके सेर की बिक्री से हैरान थे पर यह चेलाजी तो सब प्रकार से निस्सन्देह थे अतः खूब पुष्ट होगये।

परन्तु कुछ दिन के बाद जब वर्षाऋतु आई तो एक तेली की दीवार गिर पड़ी कि जिसे एक गड़रिये की भेड़ कचर गई दीवार वाले ने राजा के यहां जाकर नालिश की कि हुजूर! गड़रिये की भेड़ ने मेरी दीवार को कचर डाला। राजा ने गड़रिये को तलब किया और पूछा क्यों रे गड़रिये तेरी भेड़ ने तेली की दीवार को किस तरह कचर डाला? गड़रिया बोला

हुजूर राज ने दीवार ही इस प्रकार की बनाई कि जो भेड़ ने कचर डाला इसलिये राज का कसूर है अब गड़रियाजी बरी हुए और राज आया। राजा ने कहा क्योंरे राज ! तूने तेली की दीवार किस तरह की बनाई जो दीवार गिर गई। राज बोला–हुजूर ! गारेवालों ने गारा ढीला कर दिया इसलिये दीवार ऐसी बन गई और भेड़ ने कचर डाली इसलिये गारावालों का कसूर है। अब राज गया और गारा वाले आये। राजा ने कहा क्यों रे गारा वालो ! तुम लोगों ने गारा क्यों ढीला किया कि जिससे दीवार राजसे कमज़ोर बनी और दीवार को भेड़ ने कचर डाला ? गारेवालों ने कहा कि हुज़ूर हम क्या करें भिस्ती ने पानी ज्यादा डाल दिया इस लिये भिस्ती का कसूर है। गारेवाले गये भिस्ती आया। राजा ने पूछा–"क्योंरेभिस्ती ! तूने गारे में पानी ज्यादा क्यों डाला जिससे गारावालों से गारा ढीला होगया और राज से दीवार कमज़ोर बनी कि जिससे गड़ेरिये की भेड़ ने तेली की दीवार कचर डाली"। भिस्ती बोला "हुज़ूर हम क्या करें मशकवाले ने मशक बड़ी बना दी कि जिस से पानी ज्यादा आगया इसलिये मशकवाले का कसूर है"। भिस्ती गया और मशकवाला आया। राजाने पूछा–"क्योंरे मशक वाले ! तूने इतनी

भारी मशक क्यों बनाई कि जिससे भिस्ती से पानी ज्यादा गया और गारेवालों से गारा ढीला होगया और राज से दीवार कमज़ोर बनी कि जिससे गड़ेरिये की भेड़ ने तेली की दीवार को कचर डाला"। मशक वाले ने कहा कि "हुज़ूर! मैं क्या करूं अब की दफे शहर कोतवाल ने शहर की सफ़ाई अच्छी तरह नहीं कराई कि जिससे बड़े बड़े पशु मर गये और मशक बड़ी बन गई इस लिये कोतवाल का कसूर है"। अब मशकवाला गया और कोतवाल आया। राजाने कहा "क्योंजी कोतवाल! तुमने इस साल शहर की सफ़ाई क्यों नहीं कराई कि जिससे बड़े बड़े पशु मर गये और मशक वाले से मशक बड़ी बन गई और भिस्ती से पानी ज्यादा गया और गारे वालों से गारा ढीला होगया और राज से दीवार कमज़ोर बनी कि जिससे गड़ेरिये की भेड़ ने तेली की दीवार को कचर डाला। कोतवाल कुछ न बोला राजाने कोतवाल को एक दम सूली का हुक्म दिया। जब जल्लादों ने कोतवाल को ले सूली पर चढ़ाया और कोतवाल के दुबले होने के कारण फांसी ढीली हुई तब जल्लादों ने राजा से आकर कहा कि हुज़ूर! कोतवाल को ले जाकर सूली पर चढ़ाया लेकिन सूली ढीली होती है। यह सुन राजा ने कहा वह हमारी फांसी मोटा मांगती है। अच्छा शहर भर

जो मोटा आदमी मिले कोतवाल के बदले में चढ़ा दिया जाय। यह आज्ञा पा राजदूत शहर में मोटा आदमी ढूंढने निकले परन्तु उस नगर में मोटा आदमी कहां? अब तो वही गुरु के चेले जो गुरु के कहने पर नहीं गये थे और गुरु से कहा कि हम तो यहां टके सेर मलाई ले लेकर उड़ायेंगे और मजा करेंगे राजदूतों को मिल गये। राजदूतों ने इन्हें पकड़कर कहा चलिये आप को राजा ने फांसी का हुक्म दिया है। इन्होंने कहा मेरा अपराध क्या है, दूतों ने कहा अपराध कुछ नहीं। राजा की फांसी मोटा आदमी मांगती है। अब तो इन्होंने फौरन ही गुरु को खबर दी। जिस दिन यह सूली पर चढ़ने लगे कि त्यों हीं गुरुजी आगये अब तो इनसे पूछा गया कि तुम किसीसे मिलना चाहते हो? इन्होंने कहा कि हम अपने गुरु से मिलना चाहते हैं, अतः इन्हें गुरु से मिलने को आज्ञा दी गई। जब यह गुरु से मिलने गये तो गुरु ने इनसे चुपके से कह दिया कि 'तुम कहना हम फांसी चढ़ेंगे और हम कहेंगे हम चढ़ेंगे इस तरह तुम हम से झगड़ना तो हम फांसी से तुम्हें बचा लेंगे' बस ऐसा ही हुआ। वहीं फौरन दोनों झगड़ने लगे। चेला कहता था कि मैं फांसी चढ़ूंगा और गुरु कहता था कि मैं फांसी चढ़ूंगा। यह झगड़ा राजा के पास गया। राजाने पूछा

कि भाई ! तुम लोग क्यों परस्पर लड़ते हो ? गुरु बोले कि हुजूर ! आज ऐसा मुहूर्त्त है कि आज जो फांसी चढ़ेगा वह उस जन्म में पृथिवी भरका राजा होगा और अन्त में मुक्ति पद प्राप्त करेगा । तब तो राजाने कहा कि हटाओ इन मूर्खों को हमी फांसी पर चढ़ेंगे और राजा स्वयं सूली पर चढ़ गया ।

——*——

१५४ जितनी जिसकी आयु है उसे कोई मार नहीं सक्ता ।

एक राजा को कुष्ट का रोग था । राजा जिन्दगी से दुःखी हो उसने प्राणत्याग की, चेष्टा की और विष खा लिया और विष की खुश्की से प्यास लगी । तो विना ढका गिलास रक्खा था पानी से भरा उस में सर्प गरल डाल गया उसी को राजा ने बेहोशी में पी लियाः—

(विषस्व विष मौषधम्)

अनुस्वार उसका विष उतर गया तो आराम हुआ राजा ने वैद्यों से पूछा कि 'जो विष खाकर बचा

चाहै तो कैसे बचे' ? वैद्य बोले 'महाराज ! सर्प के गरल का पानी पीना चाहिये हमारे वैद्यकशास्त्र में ऐसा लिखा है'। तब तो राजा को वैधक में बड़ा विश्वास हुवा।

१५५–(अयोग्य श्रोता)

एक स्थान पर एक पण्डित वाल्मीकीय रामायण सुना रहे थे। जब रामायण समाप्त होगई तब श्रोताओं ने कहा कि 'पण्डितजी ! रामायण तो आपने सुनाई, परन्तु हम अब तक यही न समझे कि 'राम राक्षस थे या रावण' ? तब तो पण्डितजी ने उत्तर दिया कि 'न राम राक्षस थे और न रावण, राक्षस तो हम हैं जिन्होंने तुम सरीखे श्रोताओं को कथा सुनाई'।

१५६–(उल्लूवसंत)

एक उल्लूवसंत का बाप बहुतसा द्रव्य छोड़ मरा था परन्तु उसने अपने उल्लूपने में अपने द्रव्यका नाश यहां तक किया कि इसकी स्त्री और बच्चे भी भूखों

मरने लगे। स्त्री ने दुखी होकर कहा कि कुछ व्योपार किया करो, इस प्रकार कैसै पार होगी ? यह बोला कि अच्छा आज को आटा उधार ले आओ, कल व्योपार करूंगा। इसी प्रकार नित्य किया करता था। एक दिन उसकी स्त्री बैठ रही कि अब पड़ोसी भी नहीं देते, मैं कहांसे उधार ले आऊं और वास्तविक में यही दशा थी अतः उल्लूवसंत विवश हो बोला कि मुझे एक खुरपी लादे तो मैं घास छील लाऊं और उसे बेच लाऊंगा। स्त्री ने किसी पड़ोसीकी खुरपी मांगके लादी। यह खुरपी ले प्रातःकाल से इधर उधर घूमता घामता गया। और मरता हुआ १० बजे वनमें पहुंचा और वहां एक स्थान पर खड़ा होकर खुरपीसे अपने नख काटने लगा कि इतनेमें एक बटोही आनिकला और उसने कहा कि भैया खुरपीसे नख क्यों काटते हो ? यहखुरपी तुम्हारे हाथमें लग जायगी। यह बोला भला ऐसे कहीं हाथ कटा करते हैं ! बटोही थोड़ी दूर गया था कि इतने में इसका हाथ कट गया और यह हाथ के कटते ही खुरपी डाल कर बटोही की ओर दौड़ा और हाथ जोड़ कर उसके चरणों में गिर पड़ा और कहा कि महाराज ! आप तो साक्षात् परमेश्वर हो। उसने कहा यह कैसै ? उल्लू बोला यदि आप परमेश्वर न होते तो यह कैसै आगे से जान

लेते कि तेरा हाथ कट जायगा अतएव अब आप कृपा कर हमें यह बतादें कि हम कब मरेंगे ? बटोही ने यह सुनकर समझ लिया कि यह कोई पक्का उल्लू ही है। पुनः बटोही ने कहा कि जबतक तेरा डोरा नहीं टूटता तबतक तू नहीं मरेगा और जिस दिन तेरा डोरा टूट जायगा उसी दिन तेरी मौत है। बस यह उल्लूबसंत उसी समय में अपने घर आया और अपनी स्त्री से एक डोरा ले अपने कटि में बांध समझ लिया कि जबतक यह डोरा नहीं टूटता तबतक मेरा जीवन है। पश्चात् जिस पड़ोसन ने इस उल्लूबसंत की स्त्री को अपनी खुरपी मांगने में दी थी वह खुरपी मांगने आई। उल्लूबसंतकी स्त्री ने उल्लूबसन्त से कहा महाराज! वह खुरपी कहां है ? उसने कहा वह तो हम जगलमें डाल आये। स्त्री ने कहा तो अब मैं इसे क्या दूं ? उल्लूबसंत ने कहा हें हें हेंहेंहें हें हें हम क्या जाने ? इसने कहा और घास नहीं छील लाये खावेंगे क्या ? इसने कहा तूही लेआ कहीं से विचारी हैरान थी, क्या करती, फिर भी लाके खिलाया। एक दिवस स्त्रीने व्योपार को कहा और इसने इनकार किया पुनः दोनों में बड़ा ही धक्कमधक्का हुआ और इसका डोरा टूट गया तब तो इसने कहा अरे ससुरी हमारा डोरा टूट गया, हमतो मर गये, अब

देखूं किससे नाज मंगावेगी और पैर फैलाकर सोगया और चिल्ला २ कर कहने लगा 'अबे कुनबेवालो! हमको कफन ले आओ हम मरगये'। सब लोग बोले यह मूर्ख योंही बका करता है, कहीं मरे भी बोलते हैं? कोई पास तक नहीं आया। उल्लूबसंत बोला कि कुनबा तो कुनबा दुष्ट पड़ोसी भी नहीं सुनते हैं कि मुहल्ले में मुर्दा पड़ा है और सब लोग रोटी पानी खाते पीते हैं, यहां के लोग बड़े बदमाश हैं, मेरे पास भी नहीं आते हैं कि यह मुर्दा क्या कहता है खैर हम अपने लिये कफन आप ले आवेंगे यह कहकर बाजार में जाके बजाज़ से बोले कि भाई साहब! हम मर गये हैं आप मेहरबानी करके कफ़न दे दो, दफ़न आप ही हो जांयगे। बजाज़ ने समझ लिया कि यह उल्लूबसंत है अतः उसने कहा अच्छा दाम लाओ वह बोला किसी दिन दे जायंगे। बजाज़ बोला फिर किस दिन दे जावगे तुम तो दफ़न होजावगे, मैं किससे दाम पाऊंगा? वह बोला अरे यार! दफ़न होके नहीं आते? बज़ाज बोला मरे हुये नहीं आते अच्छा तो खैर हम वैसे ही गड जायगे। आप एक क़बर को खोद कर उसमें जा सोये। थोड़ी देर बाद भूख ज़्यादा लगी तब एक आदमी आया। उसकी पीठ से गठरी बंधी और एक लड़का कंधे पर बैठार के चला आता था उसको देख

उल्लू ने सोचा कि इसके पास रोटी ज़रूर होगी, अतः इस से मांगनी चाहिये। जब वह आदमी पास आया तब एक साथ खड़ा हो क़बर से उठकर आगे आके रोटी मांगने लगा। वह आदमी डर के बोला कि यह मुरदा तो नहीं कोई उल्लू है, बोला अच्छा रोटी हम देदेंगे पर इस लड़के को कंधे पर रख ले चल उल्लू बोला अच्छा ला भाई पर रोटी देदे। उसने रोटी दे दीनी। रास्ते में चलते जायं और कहते जायं कि देखो मरने पर भी सुख नहीं, यहां भी मजूरी करनी पड़ी और लोग कहा करते हैं कि जीने से मरजाना भला है यह सब झूठ है इससे जीना ही अच्छा है। ले भैय्या हम अब तक मरे सो मरे अब नहीं मरेंगे, जो मजूरी मरे पर यहां करी सो घर ही में करेंगे जिसमें आनन्द में घर तो रहें यहां क़बरों में सोना पड़ता है, यहां इतने मरे हुये आदमी हैं पर कोई किसीसे नहीं बोलता है सो अपना लड़का ले हम को रुख़सत करो; मजूरी करेंगे और खायंगे। बटोही ने लड़के को उतार लिया और इसको रुख़सत करदिया। हे भाइयो ! जो लोग माया के माते होते हैं उनके लड़के ज़्यादा बिगड़ते हैं। वे मजूरी के लायक़ कभी नहीं रहते हैं।

——(०*०)——

१५७—(इस ही पर दूसरा दृष्टान्त)

एक उल्लू का दादा उल्लूसिंह करके ज़ाहिर था सो उसका रोज़गार कहीं नहीं लगता था। एक वकील साहब को नौकर की चाहना हुई। दैवयोगसे उल्लूसिंह को तलाश करके नौकर रख लिया। वकील साहब ने कहा कि ये वर्दी पहले सिपाहीकी रक्खी है सो तुम पहन लो। कोट पायजामा साफा एक तलवार दे दोनी और कहा मेरे सामने पहर के दिखाओ। उस उल्लू ने कोट की बाहें पैरों में चढाईं और साफा कमरमें बांध लिया पैजामा हाथों में पहर लिया म्यान फाड़ के गले में डाल लिया और तलवार को पूछा कि इससे क्या करते हैं? वकील बोला कि यह उस वक्त काम आवेगी जब कोई हमसे बोलेगा उसी वक्त उसको मार देना यही तुम्हारा काम है उल्लू के पहनावे को देख वकील साहब खूब हंसे और पहनना सिखाया। एक दिन उस वकील का साला आया और वकीलसे बातें करने लगा तो उस उल्लू ने तलवार को निकाल कर एक हाथ ऐसा मारा कि साले साहबके दो टुकड़े होगये। वकील बोला अबे यह क्या किया? वह बोला मेरा क्या क़सूर है? आपने कहा कि कोई साला हमसे बोले उसे मार देना जो

साला तुम से बोला था मैंने मार दिया फिर तो पुलिस ने मुक़द्दमा क़ायम किया। वकील ने उल्लू से कहा कि क़लमदान उठाला, अर्ज़ी लिखूंगा। वह उल्लू इधर विधर देख बोला कि हुजूर क़लम दान न हो तो फुकनी उठा लाऊं वकील और पुलिस के लोग हंसने लगे और मुक़द्दमा ख़ारिज कर दिया।

—([*०*])—

१५८—(दुनियां में सबसे बड़ी बात)

एक राजाके दीवान के मरने के पश्चात् राजाने अपने नियमानुसार दीवान के लड़कों के पढ़ने का पूर्ण प्रबन्ध कर दीवान का स्थानापन्न दूसरा दीवान उस समय तक के लिये जब तक पूर्व दीवान के लड़के पढ़ लिखके योग्य न हो जांय नियत किया। कुछ काल के पश्चात् जब पूर्व दीवान के लड़के पढ़ लिखके योग्य हुये तब इस स्थानापन्न दीवान ने ९९ सहस्र मुद्रा पूर्व दीवान के नाम राजाके खाते में डाल दिये और जब राजा पूर्व दीवान के लड़कों को दीवान पद देने लगा तब इस

दीवान ने राजाके सामने खाता ले जाकर रख दिया और कहा कि अन्नदाता ! इन बच्चों के बाप के नाम ९६ सहस्र मुद्रा आपका पड़ा हुआ है जब तक यह सम्पूर्ण रुपया आप का न चुका दें तब तक यह पद न दिया जावे । राजा के भी समझ में ऐसा ही आगया अतः राजा ने लड़कों से कहा जब तक तुम हमारा सब रुपया न दे दोगे तब तक तुम्हें यह पद न मिलेगा पूर्व दीवान के लड़के तो बड़े ही चतुर और बुद्धिमान् थे अतएव बच्चों ने कहा श्रीमान् यदि हमें दीवान पद नहीं दिया जाता तो जब तक हम दोनों को कोई अन्य काम दिया जावे जिस से हमारे पेट का पालन हो और आपका रुपया भी पटे राजा ने बच्चों की प्रार्थना सुन एक बच्चे को अपनी ड्योढ़ीपर दरवानी का काम और दूसरे को बग़ीचे में माली का काम दे दिया । बच्चे बहुत दिन तक यह काम करते रहे परन्तु इन कामों में बच्चों को वेतन केवल उतना ही मिलता था कि जितने से उनके पेट का पालन हो सके अतः लड़कोंने सोचा कि इस प्रकार तो हम लोगों से कभी ९६ सहस्र रुपया नहीं दिया जा सकता है और न दीवान का पद ही मिल सकता है इसलिये कोई ऐसी युक्ति सोचना चाहिये कि जिस से राजा के ऋण से शीघ्र उऋण हो दीवान पद प्राप्त करें । पुनः लड़कों ने आपस में कुछ सम्मति कर दूसरे

दिन जब राजा बाहर निकले तो पूर्व दीवान के बड़े लड़के दरवानने पूछा कि 'महाराज ! दुनियामें सब से बड़ी चीज़ क्या है' ? राजा ने कहा 'मैं इसका उत्तर कल दूंगा, । दूसरे दिन राजा ने प्रातःकाल दरबार में आते ही इस बात को सम्पूर्ण सभा के लोगों से पूछा कि भाई सभा के लोगो ! दुनियां में सब से बड़ी चीज़ क्या है' ? किसीने कहा कि 'अन्नदाता ! सबसे बड़ा हाथी किसी ने कहा सबसे बड़ा ऊंट, किसीने कहा सबसे बड़ी खजूर, किसी ने कहा सबसे बड़ा ताड़, किसी ने कहा सब से बड़ा पहाड़, किसी ने कहा सबसे बड़ा रुपया, किसी ने कहा सबसे बड़ा बल । यह सब उत्तर राजाने दर्वान को दिये पर दवान ने इन एक को भी न माना । जब राजा के राज्य के सम्पूर्ण मनुष्य उत्तर दे चुके तो राजा ने सोचा कि अब केवल हमारे बगीचे का माली शेष है उससे और बुलाकर पूछना चाहिय कि वह क्या उत्तर देता है अतः राजा ने पूर्व दीवान के छोटे पुत्र माली को बुलाके पूछा कि दुनियां में सब से बड़ी चीज़ क्या है ? उसने कहा कि 'यदि मेरे बाप के नाम से ३२ सहस्र रुपया काट दिया जावे तो मैं आपके प्रश्न का उत्तर दूं' माली की यह बात सुन राजा तथा सम्पूर्ण सभा के लोग चकित होगये । अन्त में राजाने कहा कि

'तुम्हारे बाप के नाम से ३२ सहस्र रुपया काट दिया जावेगा तुम बताओ कि दुनियां में सब से बड़ी चीज़ क्या' माली ने कहा ' दुनिया में सबसे बड़ी बात' यह उत्तर सुन राजा के भी मनमें निश्चय होगया कि ठीक है और दर्वान ने भी मान लिया। पुनः दर्वान ने पूछा कि महाराज दुनियां में सबसे बड़ी चीज़ बात तो है पर वह रहती कहां है ? राजा ने फिर दर्वान से यही कहा कि मैं इसका उत्तर कल दूगा' अतः राजा ने सभा में आकर उसी भांति पूछा कि दुनिया में सबसे बड़ी चीज़ बात तो है पर वह रहती कहां है ? किसी ने कहा अन्नदाता ! धनवानों के पास, किसी ने कहा बलवानों के पास, किसी ने कहा विद्वानों के पास, राजा ने पूर्व की भांति यह सब उत्तर दर्वान को दिये पर दर्वान ने एक भी उत्तर स्वीकार न किया पुनः राजा ने बगीचे से माली को बुलवाकर यह प्रश्न किया कि दुनियां में सब से बड़ी बात पर वह रहती कहां है ? इसने कहा कि 'महाराज ३२ सहस्र फिर निकलवा दीजिये'। राजा ने यह सुन तुरन्त ही आज्ञा दी कि आप उत्तर दें ३२ सहस्र और निकाल दिया जावेगा'। मालीने उत्तर दिया कि दुनियां में सब बड़ी बात रहती है असीलों के पास'। सुनकर राजा ने मान लिया और राजा ने दर्वान को यही उत्तर दिया और दर्वान ने भी स्वीकार किया

पुनः दर्बान ने राजा साहब से प्रश्न किया कि दुनियां में सबसे बड़ी बात रहती है असीलों के पास और खाती क्या है ? राजा ने कल का वादा कर पुनः जाकर दूसरे दिन अपनी सभा में यह प्रश्न किया कि दुनियां में सब से बड़ी बात रहती असीलों के पास और खाती क्या है ? यह प्रश्न सुन सब सभा चकित होगई और कुछ काल सब के सभी मौन साध गये पश्चात् कुछ आदमियों ने सलाहकर कहा कि महाराज कहीं बात भी खाया करती है? राजा ने पुनः माली को बुलाके पूछा कि दुनियां में सबसे बड़ी बात रहती असीलों के पास और खाती क्या है। इसने कहा कि ३२ सहस्र रुपया जो मेरे पिता के नाम बाक़ी हैं यदि वह भी कटा दें तो मैं बता दूं कि वह खाती क्या है। राजा ने उसी समय स्वीकार कर कहा 'आप उत्तर दीजिये'। इसने कहा कि महाराज दुनियां में सबसे बड़ी बात रहती है असीलों के पास खाती है ग़म। राजा ने मान लिया और यही उत्तर दर्बान को दिया दर्बान ने भी मान लिया पुनः दर्बान ने राजासे प्रश्न किया कि दुनियां में सबसे बड़ी बात रहती असीलों के पास खाती है ग़म और करती क्या है ? राजाने फिर भी कल कहके दूसरे दिन अपनी

सभा में पूछा कि दुनियां में सबसे बड़ी बात, रहती है असीलों के पास, खाती है गम और करती क्या है? सभा के लोग थोड़ी देर तो चुप रहे पुनः बोले महाराज बात भी कहीं काम किया करती है? राजा ने पुनः बगीचे से माली को बुला कर पूछा कि दुनियां में सबसे बड़ी बात रहती असलों के पास, खाती गम, करती क्या है उसने कहा कि महाराज अबके हमारे बाप का दीवान पद हम दोनों भाइयों में से किसी को दिया जावे क्योंकि आप का ऋण भी पट गया और यह दीवान जो मेरे बाप के स्थान पर है इसलिये कि इसने मेरे बाप के नाम यह ६६ सहस्र रुपया बिल्कुल झूठा डाला है जहन्नुम रसीद किया जावे तो मैं आप के प्रश्न का उत्तर दे सकता हूं। राजा ने सच्चा हाल समझ स्वीकार कर लिया और कहा 'आप उत्तर दीजिये ऐसा ही होगा'। माली ने कहा महाराज! 'दुनियां में सब से बड़ी बात, रहती है असीलों के पास, खाती है गम और करती है वह काम जो धन, बल, विद्या किसी से न हो, राजा ने स्वीकार किया और इन बच्चों को दीवान पद दे झूठे दीवान को जहन्नुम रसीद किया।

लक्ष्मी जिह्वाग्रे,
जिह्वाग्रे मित्र बान्धवाः।
जिह्वाग्रे बन्धनं प्राप्तं,
जिह्वाग्रे मरणं ध्रुवम्॥

——(०)——

१५६ (रमखुदैया)

एक हिन्दू और एक मुसलमान साहब गंगा पार को जारहे थे रास्ते में जब गङ्गा पड़ी तो उस घाट पर नाव न होने के कारण दोनों सोच रहे थे कि क्या करना चाहिये परन्तु कुछ विचार में आया थोड़ी देर में हिन्दू ने तो कहा कि जय रामचन्द्रजी की मैं तो अपने एक तरफ से मझाता हूं और वह ऐसे उथले की ओर से गया कि पार हो गया। अब मुसलमान साहब सोचने लगे कि मैं कैसे पार जाऊं राम को सुमिरूं या खुदा को यह सोचते २ मझाना प्रारम्भ कर दिया और मझाने में भी यह विचार करता जाता था कि राम को याद करूं या खुदा को इस रमखुदैया के कारण इसका ध्यान बट गया और

यह गहरे में जाके डूब गया बस समझ लो कि रमस्नुदैया वालों की यही दशा होती है कि थोड़ा यह कर लें और थोड़ा वह अथवा यह करें वा वह ।

——०*०——

१६०—(एक पतिव्रता)

एक साहब किसी गांव में रहा करते थे और उनकी स्त्री बड़ी चतुर और पतिव्रता थी । पुरुष अत्यन्तही निकम्मा और मूढ़ था यहां तक कि कुछ कमाता धमाता न था दिन भर पड़ेपड़े बातें बनाया करता था और औरत बिचारी इसे जहां तहांसे उधार पुधार ला ला खिलाया करती थी यह पुरुष एक दिन बाज़ार में टहलने गया । वहां एक यवन से बहुतसी बातचीत होने के बाद यवन से किसी ने कह दिया कि इसकी औरत बड़ी खूबसूरत है अतः यवन ने इससे कहा कि 'यदि तू अपनी औरत को मेरे पास सुलादे तो मैं १००) रुपये तुझे दूंगा' । यह पागल उस यवन को अपने घर ले आया और अपनी औरत से कहा कि 'अगर तू आज इसके साथ सो रहे तो ये सौ रुपये देगा इसी लिये मैं इसे लिवा लाया हूं' यह सुन औरत उससे

बहुत ही अप्रसन्न हुई तब इसने कहा अच्छा तू प्रथम इसे दो रोटी बनाके खिलादे फिर देखा जायगा। औरतने कहा 'रोटी मैं दो क्याचार खिला दूंगी' परन्तु औरत अपने पतिकी बद हरकत को भली भांति जानती थी इस लिये बड़े ही असमंजस में पड़ गई कि ऐसे समय में इस दुष्ट से बचकर कैसे पातिव्रत रक्षा हो अतः औरत ने अपने पति से कहा आप कृपा करके एक रस्सा चारपाई में दावन लगाने के लिये और एक मूसल पीसना छरने के लिये क्योंकि घरका मूसल टूट गया है ले आइये जब तक तैं इस मुसाफ़िर के लिये रोटी का सामान लगाती हूं। औरत पावभर मिरचे निकाल सिल पर पीसने लगी और इसका पति रस्सा और मूसल लेने बाज़ार को चला गया। थोड़ी देर में यह औरत रोने लगी। मुसाफ़िर ने पूछा कि क्यों रोती है? औरत ने कहा जनाब! रोती इसलिये कि ये मेरा पति बड़ा ही बदमाश है और इसकी ऐसी बद-आदत है कि यह रोज़ बाज़ार से किसी न किसी मुसाफ़िर को ले आता है और अपने घर में उसके हाथ पैर रस्से से बांध उसके पाखाने के मुक़ाम में मिरचें भरा करता है और पीछे मूसर घुसेड़ देता है सो देखिये कि मिरचे तो मुझसे बटवा गया है सो मैं

पीसती हूं और रस्सा और मूसल टूट गया था ...
बाज़ार से लेने गया था सो देखो वह लिये आरहा है।
यवन ने यह दशा देख कि यह वास्तविक में रस्सा
और मूसल लिये आता है विश्वास मान चल पड़ा।
जब वह पुरुष अपने घर आया तो अपनी स्त्री से
पूछा कि मुसाफ़िर क्यों चला गया? औरत ने कहा
कि मैं मिरचें पीस रही थी तो मुसाफ़िर कहने लगा
कि ये मिरचें जो तू पीस रही है मये सिलके मुझे ऐसे
ही देदे मैंने कहा ऐसे मिरचें लेके आप क्या करेंगे? आप
ही के लिये पीसती हूं, रोटी बनाऊंगी तब खाना। बस
इससे गुस्सा होकर जाते है। पुरुष ने कहा अरे तूने
मये मिरचों के क्यों न ऐसी हो सिल देदी होती। अब
मैं दौड़ करके दे आऊं और यह पुरुष मय मिरचों के
सिल लेके दौड़ा और पुकारा कि ओ मियां ये लेते जाओ
और मियां ने जाना कि ये मेरे पाखाने के मुक़ाम में
मिरच भरने आता है इसलिये मियां भागे और ये
पीछे दौड़ा अब तो मियां को और निश्चय होगया
और मियां प्राण छोड़ भग गये।

———

१६१—(गम खाना)

एकवार किसी सख्ससे प्रश्न किया कि ये बनिये इतने मोटे क्यों होते हैं ? दूसरे ने जवाब दिया कि ये ऐसी वस्तु खाते हैं जो संसार में कोई नहीं खाता और न माने तो चल मैं तुझे दिखलाऊं। अब वह उस सख्स को लेकर गया तो क्या देखता है कि एक पुलिसमैन बनिये की दूकान पर आटा ले और अच्छे आटे को कहता था कि साले तूने इसमें चपड़ी मिलाई है और बदमाशने जुआर का आटा भी मिलाया है। गरज़ ये कि पुलिसमैन ने सैकड़ों गालियां दीं पर बनियां न बोला तब उसने उस सख्ससे कहा क्यों साहब समझ गये।

१६२—(निन्यानवे का फेर)

एक सेठजी बहुत धनवान् एक शहर में रहते थे और सेठके तिखण्डे मकानके समीप ही दीवार से दीवार मिली हुई एक दूसरे सेठ जो बहुत ही दीन थे रहा करते थे। धनाढ्य सेठ अपने घरमें खराब से खराब नाज की रोटी बनवाते और केवल नमकके साथ खाया करते थे और दीन सेठ नित्य अपने घर खीर पूड़ी हलुआ

अच्छी २ चीजें बनवाते थे अभिप्राय यह कि दीन सेठ जो कमाते थे वह खा पी डालते थे। धनाढ्य सेठकी स्त्री यह चरित्र देख हैरान थी और कहा करती थी हाय हमारे बापने क्या धनाढ्यके यहां व्याह किया, ऐसे धनसे क्या जो न भोगा गया न दान दिया गया, इससे तो यह कंगाल ही अच्छा। इसी प्रकार उस धनाढ्य सेठकी स्त्रीने अपने पतिसे कहा कि आपके धन होनेसे क्या लाभ ? न आप खाय ही सकते, न किसी को दे सकते, आप से तो ये कंगाल ही अच्छा जिसके यहां रोज़ हलुआ पूड़ी और खीर बना करती है। सेठने कहा कि यह अभी निन्यानवे के फेर में नहीं पड़ा। अच्छा आज म तुझे निन्यानवे रुपया देता हूं और तू कल यह रुपया एक कपड़े में बांध इस दीन सेठके घर डाल देना। धनाढ्य सेठ की स्त्रीने वह रुपया एक कपड़े में बांध दूसरे दिन वह रुपया दीन सेठके यहां डाल दिया। दीन सेठ की स्त्री ने वह रुपयों की पोटरी पा जब उसका पति आया तो उसने अपने पति को वह रुपयों की पोटरी दे दी। पति ने गिने तो रुपये निन्यानवे थे। उसने सोचा कि अगर मैं दो दिन हलुआ पुड़ी खीर न खाऊं तो ये सौ पूरे होजांय। पुनः ऐसा ही हुआ कि दूसरे दि से ही हलुआ पुरी खीर का होना बन्द होगया और अ

दो दिनमें सौ होगये तो फिर सोचा कि दो दिन और न खाऊं तो १०१ होजायें। जब दो दिनमें १०१ होगये तो सोचा कि दो दिन और न खाऊं तो १०२ होजांय। बस यह दशा देख धनाढ्य सेठ ने अपनी स्त्री से कहा कि देखो अब यह भी निन्यानवे के फेर में पड़ गया और इसी को निन्यानवे का फेर कहते है। परमात्मा न करे इस निन्यानवे के फेरमें कोई भी पड़े।

———※———
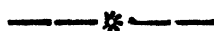
१६३–(एक तपस्वी और चार चोरों का साथ)

एक महात्मा किसी वन में तप कर रहे थे एक दिन रात को चार चोर पहुंच कर महात्मा से यह बोले महाराज! आप तो परोपकारी हैं इसलिये हमारे साथ चल कर परोपकार कीजिये। तपस्वीजी चोरों के साथ चल-दिये और मनमें यह सोचा कि इन दुष्टों को आज अपने परोपकार का परिचय दे देना चाहिये। जब ये महात्मा और चारों चोर एक धनिक के मकान पर पहुंचे तो चोरोंने धनिक के मकान में नकब लगा महात्मा से कहा महाराज अब आगे २ चलिये। पुनः महात्मा और चारों चोर अन्दर पहुंच गये और जब चोर कोठोंके अन्दर

घुस माल निकालने लगे तब महात्मा ने बाहर से कोठों की जंजीरें चढ़ा पास ही एक दालान में बाहर एक थाल में कुछ बर्फ़ियां रक्खी थीं और वहीं दीपक जल रहा था महात्मा बर्फ़ी देखकर ललचाये और इनकी जीभ लुपलुपाने लगी इसलिये महात्माने थालकी बर्फ़ियां उठा सोचा कि पहिले ठाकुरजी को नैवेद्य लगा लूं पीछे बर्फ़ियां खाऊं अतः धनिक के मकान की भीतरी चौक में आ थाल के चारों ओर पानी फेर अपना शंख बड़े ज़ोर २ बजाने लगे। इतने में घरके सब लोग जाग पड़े और मन्दिर की ओर कान लगाने लगे कि आज रात को मन्दिर में क्यों नैवेद्य लगाई जाती है। जब कुछ और ध्यान करके देखा तो घरवालों को मालूम हुआ कि यह तो हमारे घर ही में नैवेद्य लग रही है पुनः घरवाले उठके गये और महात्मा से कहा तुम कौन? इन्होंने कहा हम अमुक वन में रहते हैं इस प्रकार हमें चोर ले आये और चोरोंने आपके मकान में नक़ब कर हमें भी घुसेड़ा और जब चोर इस कोठरी से आप का माल निकालने लगे तो हमने बाहर से जंजीर चढ़ा आपके थालमें बर्फ़ी रक्खी देख, खानेकी इच्छा चली तो मैंने कहा कि पहिले ठाकुरजी को नैवेद्य लगा लूं फिर बर्फ़ियां खाऊं, सो अब नैवेद्य लग गई आप भी प्रसाद लीजिये

और चारों चोरों को कोठरी से निकाल प्रसाद दीजिये, धनिक अपने घरके कई आदमी रखते थे, अतः चोरोंको कोठरी से निकाल एक एक चोरको हजारहा जूतों का प्रसाद दिया। अन्त में उनको पुलिसके हवाले कर तीन तीन वर्ष की कैद दिलाई। पुनः महात्मा ने चोरोंसे कहा कहो हम परोपकारी हैं या नहीं ?।

——✻——

१६४-(लाल बुझक्कड़)

किसी गांव से एक हाथी होकर के निकल गया और उसके गोल गोल चकले के सदृश पैर भूमि में बने देख गांववालों ने कहा 'भाई ! ये किसके चिह्न हैं'। सबों ने अपनी २ समझ के अनुसार विचारा, पर कोई विचार निश्चय न हुआ। अन्तमें सबकी राय ठहरी कि लालबुझक्कड़ को बुलाना चाहिये और उनसे पूंछे कि यह किसके चिन्ह हैं। जब लालबुझकड़ आये तो सबों ने कहा 'गुरुजी ! यह बताओ ये किसके चिन्ह है'? लालबुझक्कड़ यह सुनकर बहुत हंसे। सबोंने कहा 'महाराज इस समय आप क्यों हंसे'? लालबुझक्कड़ ने कहा कि 'हम हंसे इसलिये आप लोग हमारे शिष्य

होकर भी यह ज़रासी बात न जान सके' । पुनः लाल-बुझक्कड़ बहुत रोया, यह देख फिर सबों ने कहा 'महाराज ! आप रोये क्यों' ? लालबुझक्कड़ बोला कि 'रोया इससे कि मेरे बाद तुम्हें कौन ऐसी ऐसी बातें बतावेगा, लो अब सुनो भूलना नहीं :—

जाने बात बुझक्कड़ और न जाने कोय।
पग में चक्की बांध के हिरना कुद्दा होय ॥

यह सुन उन सबों ने कहा ठीक है ।

इसी प्रकार किसी गांव वाले ने कभी कोल्हू नहीं देखा था एक आदमी अपना कोल्हू लादे जाता था परन्तु उसकी गाड़ी के बैल न चलने से वह उस कोल्हू को मय गाड़ी के छोड़ गया। अब गांव वाले उसी भांति फिर हैरानी में पड़े पुनः अन्त में उन्हीं लाल-बुझक्कड़ को बुला के पूछा कि 'महाराज ! यह क्या है' लालबुझक्कड़ ने कहाः—

जाने बात बुझक्कड़ और न काहू जानी।
पुरानी होकर गिरगई ये खुदाकी सुरमादानी ॥

सर्वों ने उसकी बुद्धि की बड़ी प्रशंसा की और कहा ठीक है महाराज ठीक है क्यों न हो।

'निरस्त पादपे देशे, एरण्डोऽपि द्रुमायते'

जिस देश में वृक्ष न हों वहां एरण्ड भी वृक्ष माने जाते हैं।

——o*o——

१६५ (भाग्यशाली कौन है)

एकवार यूरुप के किसी बादशाह ने एक आदमी से जिसका कि नाम सालिन था पूछा कि शायद मेरे समान तो दुनियां में कोई अन्य पुरुष भाग्यशाली न होगा। उसने एक कङ्गाल का नामले कहा 'हुज़ूर ! इससे ज्यादा खुशकि़स्मतशाली दुनियां में और कोई नहीं है' बादशाह ने कहा क्यों ? उसने कहा कि 'उसने अपनी सारी आयु सदाचार ही में व्यतीत की है और उसमें किसी प्रकार के किसी कलङ्क का धब्बा नहीं और संसार में उसका यश है और जिस समय वह मरा दुनियां उसके लिये रोती थी'। बादशाह ने समझा कि अगर यह सबसे ज्यादा' खुशकि़स्मत है तो दूसरा नम्बर मेरा ही होगा यह समझ कर पूछा कि 'इस के बाद

फिर कौन खुशकि़स्मत है' ? इसने एक दूसरे कङ्गाल का नाम ले कहा कि 'हुज़ूर ! यह उससे ज्यादा खुश· कि़स्मत है' । बादशाह ने कहा क्यों ? सालिन ने उत्तर दिया कि 'इसने जिस हैसियत में अपने बापसे गृह सामग्रो पाई थी नितान्त वैसी ही गृह सामग्री रखता हुआ, पुत्र पौत्र भ्राता आदिकों को छोड़ता हुआ, परमेश्वर का भजन करता हुआ और संसार की सम्पूर्ण आपत्तियों को छोड़ता हुआ आज प्राण छोड़ता है, बस इसी प्रकार जब आपकी बादशाहत अन्त तक बनी रहे और उसमें कोई आपत्ति न आये तो मैं आप को भाग्यशाली कहूंगा' । बादशाह ने यह सुनकर सालिमपर क्रोधित हो उसे राज्य से निकलवा दिया। पुनः थोडे ही दिन में अनायास उस बादशाह के ऊपर एक बादशाह चढ आया और उसने सारा राज पाट छीन और उसे क़ैद कर अपनी राज्य में ले जाकार थोड़े दिन में सूली का हुक्म दिया । जब यह बादशाह सूली पर चढ़ने लगा तो इसने बड़े ज़ोर से पुकार कर कहा कि 'सालिन ! सालिन ! सालिन ! सालिन !' तब तो यह वाक्य सुन उस बादशाहने कि जिसने इसको सूली दी थी इसको अपने पास बुलाकर कहा कि 'आप क्या कहते हैं' ? इसने उसके पूछने पर सारा

किस्सा सालिन और अपनी बातचीत का वर्णन किया और इसने कहा कि 'सालिन ठीक कहता था, देखिये थोड़े दिन हुये मैं बादशाह था और आज सूली पर चढ़ रहा हूं इसलिये मैं सालिन का नाम वार २ पुकार रहा हू' यह सुन कर बादशाह के होशहवास ठीक होगये और इसको सूली से मुक्त कर सारा राज पाट लौटा दिया ।

——

१६६—आजकल के शूरवीर ।

एकवार किसी गांव में दो दर्ज़ियों में परस्पर लड़ाई हुई, उसने अपनी सुई उठाई और उसने अपनी सुई उठाई, वह उसके सामने सुई उठाकर कहता था कि 'अरे दुष्ट ! क्या नहीं मानेगा ? और वह उससे कहता था, क्यों रे दुष्ट ! तू नहीं मानेगा' ? इतने हीं में एक स्त्री आई और बोली कि 'परमेश्वर ख़ैर करे, आज शूरों ने शस्त्र उठाये हैं' वाहरी शूरता और वाहरे ! शस्त्र । एक समय था किः—

ललाटदेशे रुधिरं स्रवतु,
शूरस्य यस्य प्रविशेच्च वक्त्रे ।

तत्सोमपानेन समं भवेच्च,
संग्रामयज्ञे विधिवत्प्रवेष्टुम् ॥

——(०)——

१६७ (आर्य्यवर्त)

एक संन्यासी एक महासुन्दर वन में अकेला रहता था, वह वन नाना प्रकार की औषधियों और हरी २ घास से उपवन सा बन रहा था। संन्यासी उसी वन में निःसन्देह, निर्भय और सुखपूर्वक अपने दिवस व्यतीत करता था। उसी वन में एक अति मनोहर तालाव स्वच्छ जल से पूरित था। एक दिन सायंकाल के समय तृषित हो तड़ाग पर गया। वहां जलपान कर के तालाब की मनोहर शोभा को अवलोकन करने लगा। वहां क्या देखता है कि भांति भांति के पक्षी तड़ाग के तटके वृक्षों पर नानाप्रकार की सुहावनी २ वाणियों से चहकार मचा मचा वनको गुंजार रहे हैं और अपने दिवस भर के छूटे हुये बच्चों से मिल बड़े हावभाव से प्यार कर कर सारे दिन के वियोग के दुःख को मिटा रहे हैं। दूसरी ओर वन

का रंग आकाश की लालिमा से अपूर्व रङ्ग का हो रहा है। संन्यासी इन सब पदार्थों को विलोकता और और इस शोभा को देख हर्षित हो रहा था, इतने में आकाश पर अचानक चन्द्रमा अपनी नक्षत्रों की सेना ले बड़े दल बल के साथ आकर प्रकाशित हुआ और उसने सम्पूर्ण आकाश पर अपना अधिकार जमाया और अपनी मन्द मन्द किरणों द्वारा पृथ्वी को सुशोभित किया। सांसारिक जन अपने २ कार्यों को त्याग, सुखपूर्वक हर्षित हो, अपने २ स्त्री समाज सहित एकत्र हो आनन्दित हुये और सारे दिन की थकावट को शान्त करने लगे। अब दो घण्टे के समीप रात्रि व्यतीत हुई, सब लोग अपने २ शयन करने के प्रबन्ध में हैं, जहां तहां मनुष्य मण्डली अभी तक नहीं सोई है, कोई खेल और कोई कौतुकों में मस्त है—

कोई भ्रष्ट पुस्तकों का पाठ कर रहा है, कोई ईश्वर को त्याग प्रकृति की उपासना में निमग्न है, और उस समय के विद्वान् तत्वज्ञान और परोपकार त्याग केवल अपने स्वार्थ में तत्पर हुए इस वाक्य के अनुसार कि "*स्वार्थी दोषं न पश्यति*" कर्म, अकर्म, सत्य और असत्य कुछ नहीं देखते।

महाशयो ! इसी अवसर में वह संन्यासी भी विचाररूपी समुद्र में गोते लगा रहा था कि यकायक उसका ख्याल एक बागीचे की ओर पहुंच गया, उसने वहां जाकर देखा कि यह कोई अपूर्ववाटिका है, क्योंकि इस में बहुत से रङ्ग बिरंगे पुष्प फल आदि विद्यमान हैं, और चित्र विचित्र भूषणोंसे भूषित शोभा दे रहे हैं विचारा तो ज्ञात हुआ कि यह वाटिका किसी बड़े ही बुद्धिमान् की सुसज्जित की हुई है, इस वाटिका की शोभा देख संन्यासी का चित चाहा कि इसे अवश्य देखना चाहिये वह संन्यासी उसी मनोहर-वाटिका की ओर देखने की लालसा से जाकर बाटिका के पास पहुंचा। वहां, क्या देखता है कि बाटिका की चार दीवारी बहुत ही ऊंची है, और उसकी दृढ़ता तथा सुन्दरता भी विलक्षण ही है।

यह सब आश्चर्यमय कौतुक देख संन्यासी महाराज का चित्त अन्दर जाने को चाहा इसलिये वाटिका का दर्वाज़ा वह संन्यासीजी ढूंढने लगे, परन्तु उन्हों ने दर्वाज़ा न पाया, कुछ देर के बाद उस संन्यासी को एक नहर देख पड़ी, जिससे कि उस वाटिका में पानी जा रहा था, यह वेचारा उसी नहर के तटपर बैठ गया

और अन्दर पहुंचने के यत्न सोचने लगा, इसी विचार में था कि अकस्मात् उसे एक मित्र मिल गया जिस का नाम बुद्धि था । संन्यासी ने अपने मित्र से निवेदन किया कि—

मुझे इस वाटिका के देखने को इसका दर्वाजा बताइये । पुनः उस संन्यासी ने अपने मित्र की बहुत काल तक सेवा की तब उस मित्रने उसका फाटक बतलाया । संन्यासी उस फाटककी सुन्दरता देख महा-सुखी हुआ । उस के मेहराब की वक्रता ऐसी बुद्धिमत्ता से बनाई गई थी कि जिसकी बनावट एक अपूर्व शोभा दिखला रही थी और उस मेहराब में नाना प्रकार के बहुमूल्य चमकीले पत्थरों से चित्रकारों ने ऐसी चित्र विचित्र रचना की थी कि जब दिवाकर की किरणें उस पर पड़ती थीं, तो ऐसा ज्ञात होता था कि मानों दूसरा सूर्य इस मेहराब में चमक रहा है । संन्यासी इस शोभा को देखकर आश्चर्य में था । उसके मित्र ने कहा, चलिये अब मैं तुम को वाटिका दिखलाऊं । संन्यासी मित्र के साथ अंदर गया पर फाटक की अपूर्व छटा उसे बार २ याद आती थी । कुछ देर में वह वाटिका में पहुंचा पुनः वाटिका की अनुपम छटा देख अत्यंत प्रफुल्लित हुआ

पुनः अपने मित्र के साथ इधर उधर घूम वाटिका को देखा और उसकी विचित्रता से संन्यासी दंग था, इसलिये कि उस के सम्पूर्ण पदार्थ ऐसी बुद्धिमत्ता के साथ चुने थे कि एक एक को देख संन्यासी चकित था और उस की बनावट पर जब अपनी बुद्धि दौड़ाता तब वह बाग़ के पेड़ों का मन्द २ उन्मत्तता से झूमना और पक्षियों की नाना प्रकार की प्यारी २ आवाज़ों का करना, बुलबुलों का फूलों पर गिरना, फूलों का खिलना, नरगिस की नज़रबाज़ी आदि विचित्र तमाशे देख संन्यासी अपने आपे में न रहा। थोड़े दिन वह उस बाग़ में रहा पुनः बाहर निकल भ्रमण करने लगा पुनः बहुत दिन बाद उसे पूर्व की दिशा में एक चार दिवारी नज़र जैसे कि उसने उस बाग़ में देखी थी चश्मा और नहर उस से बहुत कम चौड़ी थी परन्तु दर्वाज़ा खुला हुआ था और दीवार गिरी पड़ी और टूटी फूटी थी। चारों ओर से नये नये क़िस्म के पशु पक्षी आदमी आदि आ आकर अपने मन चाहे हुये पदार्थ निर्भयता से बैठे खा रहे थे और कोई तोड़ तोड़ ले जारहे थे और वाटिका के बाग़वान सब गाढ़ निद्रा में सो रहे थे। संन्यासी ने अपने मित्र से पूछा कि यह तो मुझे वही वाटिका ज्ञात होती है परन्तु नहीं मालूम कि इस

की यह दशा क्यों होगई ? न तो दीवार ही में वह सुन्दरता देख पड़ती है न दर्वाजे ही में वह शोभा है। नहर का पानी भी वैसा स्वच्छ नहीं देख पड़ता बल्कि उसके स्थान गदला और महामलिन जल बह रहा है। इस पर उसके मित्रने बतलाया कि यह वह वाटिका नहीं है बल्कि दूसरी है यह पतझड़ में ऋतु से शुष्क हो रही है और समय के हेरफेर यानी परिवर्त्तन से बर्बाद होगई है। यह सुन संन्यासी उस बाग़ के अन्दर जो गया तो उस को बाग़ के कुछ चिन्ह दिखलाई दिये परन्तु न वह स्वच्छता थी न वह चहलपहल ही थी। नहर में कुछ पानी बह रहा था मगर वह सफ़ाई और सुन्दरता न थी। फूल जितने थे सब कुम्हिलाये और मुरझाये हुये पड़े थे। जहां घास अपनी हरियाली से तरह २ की सुन्दरता दिखलाती थी वहां शुष्क हो हो कर काली होरही है, जहां सुन्दर त्रिविध समीर शीतल मन्द सुगन्ध मनको प्रफुल्लित करती थी वहां अब आंधी ज़ोर से हाहाकार उठा रही है। जहां पिक और कोयल आदि अपने अपने प्यारे स्वरों से चित्त को आनन्दित करते थे वहां अब नीच काक और उलूक घृणित स्वरोंसे चित्त को दुःखित कर रहे हैं वह संन्यासी यह सब देखता हुआ

नहर के तटपर पहुंचा। वहां क्या देखता है कि थोड़े से महास्वरूपवान् नवयुवक पुरुष आकर उस नहरमें डुबकी लगाकर नहाने और पानी पीने लगे। जब वह वहां से निकले तो उन लोगों की शकल पलटी हुई थी न वह धर्म कर्म, न वह बल बुद्धि और न वह शील स्वभाव ही था और सबके दो दो सींग निकल आये और एक दूसरे इस कवि वाक्य के अनुसार :—

लोकानन्दन-चन्दनद्रुमसखे। नास्मिन् वने स्थीयतां, दुर्वंशैः पुरुषैरसारहृदयैराक्रान्तमेतद्वनम्। ते ह्यन्योन्यनिघर्षजातदहनज्वालावलिसंकुलाः, नस्वान्येव कुलानि केवलमहो सर्वं दहयुर्वनम्॥

लड़ने लगे। किसी का हाथ किसी का पैर आदि टूटे यानी इसी प्रकार असभ्यता का संग्राम करते करते जारहे हैं। संन्यासी भारतरूपी उपवन की यह दुर्वस्था देख दुःखी हुआ और उसमें सुखपूर्वक रमण करनेवाली भारतसन्तान की यह दुर्दशा देख उसका दिल भर आया-और सरद आह भरकर बोला क्या ईश्वर इस उपवन का सुधारक कोई माली भेजेगा?।

१६८ शील

—:※※:—

एक ग्राम में दो भाई रहा करते थे उनमें से एक अत्यन्त ही विद्वान् मधुरभाषी सरल और शान्त तथा किसी दूसरे के विशेष क्रोध करने या साधारण दबाने पर बेचारा तत्काल ही दब जाता था और सदैव ऐसे स्थानमें बैठता था कि जहां से कोई उसे न उठा सके और दूसरा निरक्षर भट्टाचार्य्य अत्यन्त कटुवादी उद्दण्ड और दूसरे के किंचित् क्रोध पर उसका सिर फोड़ देनेवाला था इन दोनों में पहिला भाई अपने ग्राम में जिस किसी काम के लिये किसी के पास जाता तो लोग तुरन्त ही इसकी सहायताकरते थे और जब यह दूसरा किसी के पास जाता था तो लोग इससे वार्त्ता भी नहीं करते थे अतः इसने एक दिन अपने भाईसे पूछा कि 'भाई! तुम्हारे पास ऐसी कौन सी युक्ति है कि जिससे तुमसे सबसे मेल रहता है और आप सब जगहसे अपना काम कर लाते हैं पर हम जहां जाते हैं वहां लोग हम से वार्त्ता भी नहीं करते?' भाईने उत्तरदिया कि शान्ति शील मनुष्य के लिये मनुष्य ही नहीं किन्तु निम्नलिखित अग्नि आदि भी अपनी स्वाभाविक उष्णा-तादि गुण को छोड़ उसके कार्य साधक हो जाते हैं, यथा-

वन्हिस्तस्य जलायते जलनिधिः कुल्यायते तत्क्षणात्, । मेरुः स्वल्पशिलायते मृगपतिः सद्यः कुरंगायते । व्यालो माल्यगुणायते विषरसः पीयूषवर्षायते, यस्यांऽगेऽखिललोकवल्लभतमं शीलं समुन्मीलति ॥

अर्थ--अग्नि उस पुरुष को जल के समान जान पड़ती है और समुद्र स्वरूप नदी सा था मेरुपर्वत स्वल्पशिला के तुल्य जान पड़ता है शेर शीघ्र ही उस के आगे हरिन बन जाता है सर्प उसके लिये फूल की माला बन जाता है विषरस उस पुरुष को अमृत की वृष्टि के समान होजाता है जिस पुरुष के अङ्ग में समस्त जगत् का मोहनेवाला शील (नम्रता) प्रकाशमान है । बस यही युक्ति है सो आप भी धारण कीजिये । किसी भाषा कविका वाक्य है ।

दोहा ।

गिरि ते गिरिपरिबो भलो,

भलो पकरिबो नाग ।

अग्निमांहि जरिबो भलो, बुरो शीलको त्याग ॥

—:*:—

१६६—अत्यन्त दब्बू रहने से स्वरूप विस्मृति ।

एकबार एक शेर के बच्चे को एक गड़रिया जगल से उठा लाया और उसको अपनीभेड़ोंके साथ रखने लगा। शेर का बच्चा भेड़ों की ही रहन सहन की भांति रहा करता भेड़ों ही के साथ चरा करता था। जहां वे बैठतीं वहीं वह बैठा रहता, जहां से उठकर चल देतीं वह भी चल देता, जैसे वे घुटने तोड़कर पानी पीतीं थीं वैसे ही पानी पीता, जैसे वे मैं मियातीं थीं वैसे ही शेर भी बोला करता था। गड़रिया जिस प्रकार अपनी भेड़ों पर शासन रखता था इसी प्रकार शेर पर भी शासन रखता था यानी जिस समय गड़-रिया दूर ही से शेर को डांट बतलाया करता था तो शेर वहींसे वापिस आ बेचारा दीन हो चुपचाप खड़ा होजाता था। एक दिन ऐसा हुआ कि एक दूसरा बड़ा बलवान् शेर जहां गड़रिया जङ्गलमें भेड़ें चरा रहा था वहां आया

और आकर बड़े ज़ोर से दुर्णीका कि गड़रिये की सारी भेड़े भग गईं और गड़रिया मारे डरके एक वृक्ष के ऊपर चढ़ गया। उस दूसरे बलवान् शेर ने उन भागी हुई भेड़ों का पीछा किया। उन्हीं के झुण्ड में वह शेर भी था जो कि बचपन से भेड़ों के साथ तथा गड़रिये के दबाव में रहता था भेड़ोंके साथ भगा जारहा था कि थोड़ी ही दूर के बाद एक जलाशय पड़ा। शेर उसे उल्लंघन कर जलाशय के उस किनारे पर खड़ा होरहा और पीछे की ओर देखने लगा कि इतने में यह दूसरा बलवान् शेर भी जलाशय के इधर के किनारे पर पहुंच पुनः जा दुर्णीका तब तो भेड़ों के साथ के रहने वाले शेर ने जल में उस सिंह की परछाईं और अपनी दोनों की एक ही प्रकार की परछाईं देख सोचा कि मैं भी तो वही हूं कि जो यह है, मैं क्यों भागता हूं? बस इसे ध्यान आते ही कि मैंभी तो वही हूं अपने भूले हुये स्वरूप बल अधिकार का ज्ञान आगया और उस ने भी उस बलवान् सिंह की दुर्णीक सुन अपनी भी दुर्णीक लगाई। इस के दुर्णीक लगाते ही वह बलवान् शेर तो ढीला पड़ वहां से लौट गया क्योंकि उसने समझ लिया कि यह भेड़ों का समुदाय नहीं किन्तु सिंहों का

समुदाय है और भेड़ें भी इसकी दुर्णीक सुन इसके साथ से भी भग खड़ी हुईं और गड़रिया भी वैसा ही भय करने लगा जैसा इस बलवान् शेर से करता था। कहां तो इस पर शासन करता था, अपनी डांट के साथ इस को इधर उधर घुमाता था और कहां फिर उस के पास भी जानेमें भयभीत होने लगा।

पदस्थितस्य पद्मस्य मित्र वरुण भास्करौ।
पदश्च्युतस्य तस्यैव क्लेशदाहकरावुभौ ॥

—— ० ——

१७०—(शान्ति से लाभ)

सिकन्दर यूनान का एक बड़ा ही दिग्विजयी और प्रसिद्ध बादशाह था। उसने सुना कि अमुक स्थान में एक बड़े ही पहुंचे हुये सिद्ध महात्मा रहते हैं। सिकन्दर उन महात्माकी परीक्षार्थ वहां गया और समीप के ग्राम में ठहर कर एक दूत के हाथ कहला भेजा कि 'जाओ उस साधु से कह दो कि सिकन्दर बादशाह दिग्विजयी आया है और उस ने आप को बुलाया है। यदि आप नहीं चलेंगे तो आपको मरवा देगा'। महात्मा ने पूछा

कि 'दिग्विजयी का अर्थ क्या है' ? उसने कहा सब को जीतने वाला'। पुनः दूत ने कहा कि 'सबको मार के बस में करने वाला'। तब तो महात्मा ने पूछा कि सिकन्दर कितना करोड़ दो करोड़ मन खाता है'। तब तो दूतने कहा कि 'नहीं नहीं'। पुनः महात्मा ने कहा कि तो 'लाख दो लाख मन खानेवाला तो हो होगा'। तब दूतने कहा कि 'नहीं, महाराज आध सेर के समीप अन्न जितना कि अन्य लोग खाते हैं उतना ही सिकन्दर भी खाता है'। तब तो साधु ने कहा कि 'तुम्हारे बादशाह से तो यह वृक्ष अच्छा है जो बिला किसी की हिंसा किये मेरा पेट भर देता है'। पुनः दूतने सिकन्दर बादशाह से जाकर ऐसा ही कहा। तब तो दूत के वाक्य सुनते ही सिकन्दर के रोमाञ्च खड़े होगये और सिकन्दर जाकर उन महात्मा फ़कीर के चरणों पर गिर पड़ा और कहा कि 'जिस सिकन्दर ने बड़े २ राजों के सिर नीचे किये अथवा बड़े २ राजाओं के सिर अपने चरणों पर गिरवाये वही सिकन्दर आज तेरी शान्ति के सामने अपने सिरको आप के चरणों पर रक्खे है।

———*———

१७१—(बनावटी महात्मा)

एक पादरी साहब किसी शहरमें उपदेशार्थ गये। वहां एक मछरी बेचने वाले की दूकान के सामने जाके उपदेश करने लगे। कुछ देर के बाद जब दूकानवाले का चित्त कुछ इधर उधर हुआ तो पादरी साहब मछरी वाले की दूकान से एक मछरी चुरा, अपने पाकेट में डाल कर चल दिये पर यह समाचार दूकान वाले को ज्ञात होगया तब तो दूकान वाला वहां से दौड़, पादरीजी के पास आ, हाथ जोड़ के खड़ा होगया और कहा कि 'महाराज! पादरी साहब! आप के उपदेश से तो मुझे ईश्वर मिल गया और आयतें उतरने लगीं। पहिली आयत यह उतरीहै कि या तो मछली छोटी चुरावे या फिर पाकेट बड़ा रखावे।

आबद्धकृत्रिमसटाजटिलांसभित्ति
रारोपितो मृगपतेः पदवीं यदि श्वा।
मत्तेभकुम्भपरिपाटनलम्पटस्य,
नादं करिष्यति कथं हरिणाधिपस्य॥

—([*०*])—

१७२—बदमाशोंकी दशा और उत्तम स्त्रियों को दुष्टोंसे अपनी धर्म रक्षा ।

महाराज भोज के राज्य में एक वररुचि नामक ब्राह्मण पण्डित रहता था । इस ब्राह्मण से किसी अपराध होने के कारण राजाने ब्राह्मणको अपने राज्य से निकलवा दिया । ब्राह्मण जिस समय ग्रामसे जाने लगा तो अपनी स्त्री से कह गया कि 'मेरा इतना २ रुपया अमुक सेठ के यहां जमा है अतः जब तुझे आवश्यकता पड़े तब मंगवा लेना' । जब ब्राह्मण राज्य से चला गया तो कुछ कालके बाद वररुचि ब्राह्मण की स्त्री ने अपनी दासी को भेज उस सेठसे रुपया मंगवाया । तब तो सेठ ने दासी से कहा कि 'इस समय मेरी वही वगेरः सब राजा के यहां चली गई है, इस लिये रुपया नहीं मिल सकता' । दासी ने आकर ऐसा ही वररुचि की स्त्री से कह दिया । ब्राह्मणी यह सुनकर विवश हो कुछ दिन चुप रही । पुनः कुछ काल के पश्चात् वररुचि की स्त्री अपनी दासी के साथ अपने ग्राम के समीप जो नदी थी उसमें एक दिन स्नान करने गई । ब्राह्मणी स्नान करके लौटी आरही थी कि इतने में वह सेठ कि जिसके पास वररुचि महाराज का रुपया जमा था मिल-

गया और इन सेठ ने वररुचि की स्त्री को देख मोहवश हो दासी से पूछा कि यह किसकी स्त्री है' ? दासी ने कहा कि 'यह महाराज वररुचि की स्त्री है'। तब तो सेठने कहा कि 'इससे कह दो कि जब रुपये की आवश्कता पड़े तब मंगा ले'। तब तो वररुचि महाराज की स्त्री ने कहा कि 'खैर रुपये की तो जब आवश्यकता पड़ेगी तब मंगा ही लूंगी पर आप मुझे सायंकाल को मिलें, आप से कुछ कार्य्य है'। यह वार्त्ता हो ब्राह्मणी कुछ ही दूर चली थी कि मार्ग में ही इसे एक कोतवाल साहब मिले और यह ब्राह्मणी को देख मोहवश हो ब्राह्मणी से बोले कि 'तू किसकी स्त्री है, कहां गई थी' ? ब्राह्मणी ने कहा कि मैं वररुचि की स्त्री हूं, अमुक स्थान में रहती हूं'। पुनः कोतवाल ने ब्राह्मणी से कुछ बुरा संकेत किया तब ब्राह्मणी ने कहा कि 'आप दस बजे रात को मेरे मकान पर आइये'। पुनः जब ब्राह्मणी कुछ आगे चली तो एक दीवान साहब मिले और वह भी ब्राह्मणी को देख मोहवश हो पूछने लगे कि तू कहां रहती है, किसकी स्त्री है' ? वररुचि की स्त्री ब्राह्मणी ने इन्हें भी अपना समाचार बतला एक बजे रातको इसे भी बुलाया और ब्राह्मणी अपने घर पहुंची। पुनः सायंकाल को सेठजी बड़े उत्साह से सजधज कर वररुचि

महाराज के घर पहुंचे परन्तु ब्राह्मणी ने प्रथम ही अपनी दासी से तीन सकोरों में तीन प्रकार के रंग एक में काला दूसरे में लाल तीसरेमें पीला घुलवा के एक कोठरी में रख छोड़ा था और वहीं तीन बड़े २ सन्दूकचे मंगवा रक्खे थे पुनः जब सेठजी पहुंचे तो वररुचि महाराज की स्त्री ने कहा कि 'आप अन्दर चलिये और वहां यह दासी आपको स्नान करायेगी, तेल लगायेगी पुनः जब आप शुद्ध होजायेंगे तो मैं आप के पास आऊंगी जब सेठजी मकान के अन्दर कोठरी में पहुंचे तो दासी ने स्नान करा काले रंग का तेल सेठजी के सम्पूर्ण शरीर में लगाया कि इतने में ही कोतवालजी भी पहुंचे और पहुंचकर ब्राह्मणी की जंजीर खट खटाई, तब तो वररुचि महाराज की स्त्री ने कहा कि 'कौन है'? इस ने कहा कि मैं कोतवाल हूं खोलो किवाड़े'। तब तो सेठने कहा कि मैं कहां जाऊं, अब क्या करूं'? तब ब्राह्मणी ने कहा कि 'आप इस सन्दूक में बैठ जाइये'। यह सुन सेठ सन्दूक में बैठ गये पुनः ब्राह्मणी ने सन्दूक बन्दकर कोतवाल को किवाड़ें खोल कुछ वार्त्ता के बाद कोतवाल से भी वररुचि महाराज की ब्राह्मणी ने वैसा ही कहा कि 'आप मकान के अन्दर जाइये और आप को यह दासी स्नान वगैरः करा तेल लगायेगी, इस

भांति आप शुद्ध हूजिये पुनः मैं आऊंगी'। तब तो कोतवाल साहब अन्दर पहुंचे और दासी स्नान करा पुनः लाल तेल ले इनके सारे शरीर में मल दिया कि इतने ही में दीवान साहब पहुंचे और पहुंचकर दर्वाजे की जंजीर खट खटाई। तब ब्राह्मणी ने कहा कि 'कौन है'? तो दीवान साहब ने कहा कि 'मैं दीवान हूं'। यह सुन कोतवाल साहब ने कहा कि 'अब मैं कहां जाऊं, क्या करूं'? अगर दीवान जान गया तो मेरी नौकरी जायगी'। तब तो वररुचि की स्त्री ने कहा कि 'आप इस सन्दूक में बैठ जाइये पुनः कोतवाल साहब जा सन्दूक में बैठ गये तब तो ब्राह्मणी ने वह भी सन्दूक बन्दकर दर्वाजे के किवाड़ दीवान को खोल दिये पुनः दीवान से इसी प्रकार कहा कि 'आप अन्दर चल के शुद्ध हूजिये पुनः मैं आऊंगी'। जब दीवान साहब अन्दर पहुंचे तो दासी ने स्नानादि करा इन के शरीर भर में पीले तेल का रंग मल दिया कि इतने ही में वररुचि की स्त्री ने कहा कि 'हमारा एक आदमी आगया, आप ज़रा इस सन्दूक में बैठ जाइये, पुनः मैं आपको निकाल लेऊंगी'। जब दीवानजी भी सन्दूक में बैठ गये तब तो ब्राह्मणी ने शीघ्र ही सन्दूक बन्दकर और तान डुपट्टा सो रही प्रातःकाल होते ही राजा के यहां यह रिपोर्ट की

कि मेरे यहां चोरी होगई । जब राजा के यहां से सिपाही नक्ष देखने आये तब ब्राह्मणी ने कहा कि 'मेरा इतना इतना धन तो चोर लेगये और मेरे घरमें ये तीन सन्दूक छोड़ गये हैं सो लेजाइये' । पुनः राजदूत वे तीनों सन्दूकें आदमियों के सिर पर लदवा राजदरबार में पहुंचे और साथ ही वररुचि महाराज की स्त्री भी पहुंची । तब तो महाराज भोजने पूछा कि 'तू कौन है, क्या हुआ' ? ब्राह्मणी ने उत्तर दिया कि महाराज ! मैं वररुचि की स्त्री हूं, मेरे स्वामी अमुक अपराध से जब अपके राज्य से निकल गये तब मुझ से कह गये थे कि मेरा इतना २ रुपया अमुक सेठ के पास है सो जब तुम्हें आवश्यकता पड़े तब मंगा लेना सो मैंने उन सेठ के यहां से रुपया मंगाया परन्तु महाराज ! वह नाना प्रकार के बहाने करता है, रुपये नहीं देता और इस बात की मेरी ये तीनों सन्दूकें गवाह हैं' । पुनः राजा ने कहा कि 'यह कैसा' ? तब तो स्त्री ने एक सन्दूक पर फट फटा कहा "कहरे करिया देव । मेरा इतना रुपया सेठ पर है या नहीं" ? तब तो वह सेठ सन्दूकमें से बेचारा डरके कहता है कि 'हूंहूं' । इस भांति दूसरे से कहा कि 'कहरे पीले देव ! मेरा इतना रु० सेठपै है या नहीं ? इस ने भी कहा कि 'हूं हूं' । पुनः इसी भांति तीसरे को पुकारा पुनः

ब्राह्मणी ने राजा से सत सच्चा वृत्तान्त कहा कि 'महाराज! जब मेरा पति आप के राज्य से निकाला गया तो अमुक सेठ के यहां इतना रुपया बतला गया था। जब मैंने उससे मंगाया तब तो दिया नहीं पुनः एकदिन जब में स्नान करने के लिये नदी पर गई तो सेठ और आप के राज्यके कोतवाल और दीवान मुझे मिले और जब मुझ पर इन्होंने बुरी दृष्टि की तो मैंने इन्हें बुलाया और ये तीनों मेरे घर पर मेरी इज्जत लेने गये सो मैंने इस इस भांति इन्हें सन्दूकों में बन्द किया है सो आप इन्हें उचित दण्ड दें'। पुनः राजा ने सन्दूक से तीनों देवों को निकलवा उचित दण्ड दिया:—

—— o ——

१७३—(सुशिक्षिता माता का सुशिक्षित बेटा)

एकवार महाराज भोज अपनी पाठशाला में विद्यार्थियों की परीक्षा लेने गये। जब राजा सब ब्रह्मचारियों की परीक्षा ले चुकने पर अन्त में एक ब्रह्मचारी के सामने ज्यों ही पहुंचे तो उस ब्रह्मचारी ने तुरन्त ही यह श्लोक बनाकर पढ़ा कि—

त्वद्यशोजलधौ भोज ! निमज्जनभयादिव ।
सूर्येन्दुबिम्बमिषतो धत्ते तुम्बिद्वयं नभः ॥

अर्थ—महाराज ! आप के यशरूपी समुद्र में डूबने के भय से आकाश, सूर्य और चन्द्र के मिष से दोनों को तूंबी बना धारण किए हुए हैं यह सुन महाराज भोज ने बालक की इस कविता चातुर्य को देख अध्यापक महाराज से पूंछा कि 'श्रीमन् पण्डितजी ! इस बालक के विशेष चतुर होने का कारण क्या है' ? अध्यापकजी ने उत्तर दिया कि 'महाराज ! इस बालक की माता संस्कृत पढ़ी हुई है और उसने इसे प्रथम घर में ही कुछ साहित्य पढ़ाया है' ।

———*———
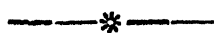
१७४—(सब से बड़ा देवता कौन ?)

एक राजा ने एक संन्यासी महाराज से पूंछा कि महाराज संसार में सब से बड़ा देवता कौन है' ? सन्यासी महाराज ने साधारण ही राजा साहब को शालिग्रामकी एक कालीसी बटिया उठाके दे दी और कहा 'यही सब से बड़े देवता हैं' । राजा साहब उस बटिया को अपने घर लेगये और उसकी नित्य पूजा करने लगे । एक

दिन राजा साहब ने शालिग्राम की बटिया पर कुछ अन्न का पदार्थ चढ़ाया था इस कारण उस बटिया पर एक चूहा आकर उसे खाने लगा। जब राजा ने यह दृश्य देखा तो कहा कि शालिग्राम को हम सब से बड़ा देवता मानते थे आज तो इन के सिरपर चूहा चढ़ा है, बस चूहा ही सब से बड़ा देवता है, पुनः राजा साहब चूहे की पूजा करने लगे। कुछ काल के पश्चात् एक दिन चूहा राजा साहब की पूजाका सामान खारहा थां कि इतने में बिल्ली आगई और बिल्ली ने चूहे की ओर ज्यों ही झपाटा मारा तो चूहा भगा। बस राजा साहब ने समझ लिया कि चूहा नहीं, किन्तु बिल्ली ही सबसे बड़ा देवता है, बस राजा साहब बिल्ली की पूजा करने लगे। कुछ ही कालके बाद एक दिन बिल्ली राजा साहब के पूजा के पदार्थ खारही थी कि इतने में एक कुत्ते ने बिल्ली पर धावा किया और बिल्ली भागी बस राजा साहब ने समझ लिया कि बिल्ली नहीं किन्तु कुत्ता ही सबसे बड़ा देवता है और उसी की पूजा करने लगे। कुछ दिन के बाद एक दिन ऐसा हुआ कि राजा साहब कुत्ते की पूजा की तय्यारी कर ही रहे थे कि इतने में कुत्ता जहां कि रानी साहब रसोई बना रही थीं चला गया पुनः रानी साहब ने एक चैला उठा उस कुत्ते के

जमाया अब तो राजा यह दृश्य देख दोनों हाथ जोड़ रानी के पैरों पड़ गये और कहा कि अरे बड़ा ही धोका हुआ, हम व्यर्थ इधर उधर ढूंढते रहे, सब से बड़ा देव तो हमारे घर में ही मौजूद था और उस दिनसे नित्य रानी की पूजा करने लगे। कुछ काल के पश्चात् राजा साहबको रानी साहब से किसी काम के बिगड़ जाने पर क्रोध आया और राजा साहब ने उठा रानी साहब के पांच छः हंटर रसीद किये पुनः सोचे कि रानी नहीं किन्तु सब से बड़े देवता तो हम हैं। बस राजा उस दिन से अपनी ही पूजा में निमग्न हो गये अर्थात् अच्छे प्रकार से अपनी उदरदरी की पूर्त्ति करने लगे। कुछ काल के बाद जब राजा साहब बीमार पड़े तो विशेष कष्ट होने पर इनके मुख से निकल गया "हा राम" बस राजा ने समझ लिया कि मैं भी कुछ नहीं, संसार में सब से बड़ा देवता राम है। पुनः राजा साहब उसी रामकी उपासना करने लगा और अन्त में मोक्ष प्राप्त किया।

---o---

१७५–(खुदा को दीमक खागई)

आप लोग सुनके चकित होंगे कि खुदा को दीमक

खागई यह कैसी आश्चर्यजनक बात है कि किस प्रकार खुदा का दीमक खागई—लीजिये सुनिये जिस प्रकार खुदा को दीमक खागई—

एक महादेव का मन्दिर जंगल में था। एक महाशय वहां पहुंचे तो देखा कि मन्दिर तो बड़ा अच्छा बना है पर इस में मूर्त्ति नहीं तो कुछ लोग पशु चरा रहे थे जब उन से पूछा तो मालूम हुआ कि इस में चन्दन के काष्ठ की मूर्त्ति थी उस को दीमक खागई। वाहरे महादेव जब तुम अपने को दीमक से नहीं बचा सके तो अपने उपासकोंको दुःखों से कैसे बचाओगे।

—— —— o —— ——

१७९—[अमृत नदी]

एक अंग्रेज़ ने लण्डन में यह सुना कि हिन्दुस्तान में एक अमृत नदी है अतः उसने इस नदी के अमृत जल पान करने की अभिलाषा से हिन्दुस्तान को पयान किया। जिस समय वह लण्डनसे कलकत्ता में आकर पहुंचा तो वहां के लोगों से पूछा कि 'क्यों भाइयो ! यहां पर अमृत नदी कौन

सी है' ? लोगों ने कहा कि 'यहां अमृत नदी तो हम लोगों ने सुनी भी नहीं पर गङ्गा नदी अवश्य है'। अंग्रेज़ ने समझा कि कदाचित् गङ्गा नदी ही का नाम अमृत नदी हो अतः उसने हावड़ा पुलके नीचे जहां गंगा का महा गदला जल था चिल्लू में उठा पान किया और कहा कि 'यह अमृत नदी तो नहीं बल्कि इसे नरक नदी कह सक्ते हैं' और उदासीन हो के लौट पड़ा और सोच रहा था कि मैं इतनी दूर से व्यर्थ आया। कुछ दूर चलने पर उसे एक पण्डित मिला और पण्डित ने साहब बहादुर को उदासीन देख पूंछा 'साहब आप उदासीन क्यों हैं' ? साहब ने कहा कि 'हिन्दुस्तानी लोग बड़े झूठे होते है'। पण्डित ने कहा 'कहिये तो कि 'हिन्दुस्तानी कैसे झूठे होते हैं' ? उसने एक अख़-बार निकाल कर दिखाया कि 'देखो इसमें यह छपा है कि हिन्दुस्तान में एक अमृत नदी है सो मैंने सर्वत्र पूछा पर कहीं पता न लगा और मैं लण्डन से यहां तक हैरान हुआ और व्यर्थ ख़र्चा उठाया'। पुनः पण्डित ने कहा कि 'आइये हम आपको अमृत नदी दिखलावें'। पुनः पण्डित ने साहब बहादुर को कानपुर लेजाकर उसी गंगा का जल पिलाया तब साहब बहादुरने कहा कि 'ये कुछ उससे अच्छा है'। पुनः पण्डित

ने कहा कि 'आप कृपा कर थोड़ा और आगे बढ़िये'। पुनः जब हरद्वार पहुंचे तो पण्डित ने कहा कि 'हुज़ूर यहां का तो जल पान कीजिये'। साहब ने कहा कि 'यह तो बहुत ही अच्छा जल है'। पुनः पण्डितजी ने साहब से प्रार्थना कर जब गङ्गोत्री पर ले जाकर जल पिलाया तो साहब ने कहा कि 'हां यह बेशक अमृत जल है और इसके पीने से यथार्थ में मनुष्य अमृत हो सकता है'। इसका दृष्टान्त यह है कि:—

साहब बहादुर ने जो शिक्षारूप अमृत नदी सुनी थी जब यहां आकर पूंछा कि यहां शिक्षा में अमृतनदी कौन है तो लोगों ने तंत्रों को बतलाया पुनः तंत्रों को देख साहब ने बड़ा शोक प्रकाशित किया पुनः पण्डित ने पुराणों को दिखलाया तो साहब ने कहा कि इसमें भी वही तंत्र शिक्षा घुसी है पुनः पंडितने स्मृतियों को दिखलाया तब साहब ने कहा 'हां, यह कुछ अच्छी हैं पर कुछ गदलापन अवश्य है'। पुनः पण्डितजी ने उपनिषद् दिखलाई तो साहबकी आत्मा बहुत शान्त हुई और कहा कि 'यह बड़ा ही उत्तम जल है'। पुनः पण्डितजीने जब गंगोत्री अर्थात् वेदोक्त शिक्षणरूप पथ दिखलाया तब तो साहब ने कहा कि 'हां यह बेशक

अमृत नदी है और इसके पीने से मनुष्य अमृत हो सकता है'।

——*——
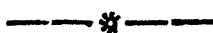
१७७-(सनातनधर्म की गाड़ी)

कुछ लोगों का समूह यात्रा करते जा रहा था पर मञ्जिले मक़सूद दूर होने के कारण लोगों ने सोचा कि यह मार्ग हम लोग विना किसी तेज सवारी के तै न कर सकेंगे। पुनः सोचा कि आजकल सब सवारियों में अगर कोई तेज सवारी है तो रेल है अतः वह झुण्ड यह विचार स्टेशन पर पहुंचा और टिकट ले लेकर गाड़ी पर सवार हुये पर गाड़ी में इञ्जन न था और बहुत काल तक जब इञ्जन न लगा तब तो कुछ लोग घबड़ा कर उतर के बाइसिकल पर सवार हो हो चल दिये। पुनः जब कुछ काल और गाड़ी खड़ी रही और न चली तो लोगों ने सोचा कि हम सब गाड़ी में बैठने वालों से तो वही अच्छे जो बाइसिकलों पर बैठ बैठ चले गये अतः यह सोच कुछ लोग गाड़ी से और उतरे और दो दो घोड़ों की बग्घियों पर सवार

हो हो चल दिये पर वह गाड़ी फिर भी न चली। पुनः कुछ काल के बाद लोगों ने सोचा कि हम लोगों से तो वही अच्छे जो दो घोड़ों की बग्घियों पर चले गये। पुनः उस गाड़ी से कुछ लोगों का झुण्ड और उतरा और उतर के उन में से कोई तो तीन भैंसों की गाड़ी पर और कोई २ गधों पर हो २ चल दिये। पर जो लोग धैर्य्य धारण किये बैठे रहे कि जब टिकट बटा है और हम गाड़ी पर बैठे हैं तो कभी न कभी यह गाड़ी भी चलेहीगी पुनः कुछ काल के पश्चात् एक ऐसा इञ्जन आया कि जिसमें दो लाल लाल सीसे सामने और एक हरा सीसा ऊपर लगा हुआ था। हाव हाव करते हुए आकर बड़े ज़ोरसे गाड़ी में टक्कर लगाई। टक्कर लगते ही कुछ गिरोह डर कर उतर पड़ा कि कहीं गाड़ी लौट न जाये बाकी और लोग बैठे रहे। कुछ ही देरके बाद वह गाड़ी भैंसे गाड़ी और गधों की सवारी वालों को मिली। अब तो गाड़ी को आगे जाता देख भैंसों की गाड़ी और गधों की सवारी वालों ने बड़ा ही पश्चात्ताप किया। पुनः थोड़ी ही देर बाद जो दो दो घोड़ों की बग्घियों पर रवाना हुये थे गाड़ी ने उन्हें भी पीछे किया तब तो उन लोगों ने भी बड़ा ही पश्चात्ताप किया। कुछ ही देर बाद

गाड़ी ने वाइसिकल वालों को भी पीछे किया तब तो वाइसिकिल वालेभी पछिताने लगे और सब के सब यह सोचने लगे कि 'यदि हम यह जानते कि यह गाडी सब से आगे निकल जायगी तो हम उससे कभी न उतरते पर अब पछिताने से होता ही क्या है ? अब दृष्टान्त तो यह हुआ पर इसका दार्ष्टान्त यहहै कि:-

यह वैदिकधर्मरूपी गाड़ी है सम्पूर्ण संसार के मनुष्यों को जो कि उसमें बैठे हुए थे मोक्षरूपी मञ्जिले मकसूद गन्तव्य मार्ग है।

महाभारत के कारण नाश होजाने से अनुभवी विद्वानों का अभाव ही इञ्जिन का न होना है प्रथम जो झुण्ड उतर वाइसिकलपर सवार हुआ वह वाममार्ग के बाद बौधमत हुआ जो 'अहिंसा परमोधर्मः' की वाइसिकल पर सवार हो चल पड़ा था पुनः जो दूसरा झुण्ड दो दो घोड़ोंकी बग्गियों पर चला था वह मज़हब इसलाम दो घोड़ोंकी बग्घी यानी खुदा और रसूल इन दो को मानकर चल पड़े पुनः तीसरा झुण्ड तीन भैंसों की गाड़ी तथा गधों की सवारी वाला ईसाई मत था जिसमें तीन भैंसोंकी गाड़ी पिता पुत्र पवित्र आत्मा गधे की सवारी आदि मानकर चलने लगे। पर कुछ काल के बाद उस

वैदिकधर्म की गाड़ी में स्वामी दयानन्द वाले ब्रह्मचारी रूप इञ्जन जिसके दोनों नेत्र सुर्ख और दिमाग़ विद्यासे सब्ज़ यही इञ्जिन के तीन सीसे थे पुनः हाव हाव करना उनका संस्कृत भाषण था पुनः उस इञ्जिन की ठोकर खण्डन मण्डन था जिस से कितने ही भयभीत हो कोई उन्हें अपना शत्रु समझ, कोई ईसाई आदि समझ गाड़ी से उतर पड़े और जो हिम्मत किये बैठे रहे उन सबको मय उस गाड़ी के वह इञ्जिन लेकर सबसे आगे निकल गया। अब तो अपने अपने पेट में सभी मतवादी चाहें ऊपर कुछ भी कहें पर इस गाड़ी में बैठने की इच्छा करते हैं पर इस गाड़ी में यह भाव नहीं कि आगे निकलने वालों को न बिठाले। यह इञ्जिन ऐसा है कि स्थान स्थान पर खड़ा हो हो आगे वाले भाइयों को बिठालता जाता है और एक दिन आवेगा जब आप लोग संसार को इसी गाड़ी पर सवार देखेंगे।

———○———

१७८—मूर्खों के अस्त्र शस्त्र भी उन्हीं की मौतके हेतु होते हैं।

एक वैश्य बड़ा ही धनाढ्य था उसने बहुत से बड़े २ मूल्य के हथियार मोल ले ले अपने घर में रख छोड़े थे। एकवार समय ऐसा आया कि सेठजी के घर में कई चोर घुस आये। उन्हें देख सेठानी ने कहा कि 'महाराज! आप के घर में चोर घुस आये'। यह सुन सेठजी ने कहा कि 'घुस आने दो, कुछ परवा नहीं, हमारे यहां बहुत से हथियार रक्खे हैं हम उनका ठीक २ इन्तिज़ाम कर देंगे'। पुनः जब चोर माल असबाब समेटने लगे तब तो सेठजी कहते हैं कि 'चल पांचसौ वाली तलवार और एक हज्जार वाली बंदूक' इन चोरों की खबर ले' पर आप जानते हैं कि जड़ हथियार यह सेठ का हुक्म कैसे सुन सक्ते थे? अतः चोर सबका सभी माल असबाब बांध लेगये और सेठजी पड़े २ ताकते रहे और पांचसौ वाली हज्जार वाली करते रहे। अन्त में जब चोर चले गये तो कहा कि देखें तो इस तलवारमें हमने पांच सौ डाले पर इसने कुछ भी काम न दिया जब तलवार म्यान से निकाल सेठजी देखने लगे तो तलवार की

धार कुछ सेठजी के हाथ में लग गई पुनः सेठजी बड़े ही क्रोधित हुये और तलवार की धार ऊपर को कर उसको भूमी में रख एक लात ज़ोर से मारी और बोले कि 'ससुरी घर में ही घाव करना आवै है बाहर न कुछ करतूत दिखलाते बनी' ॥

शेर ।

शराफ़त को मरे आफ़त,
दग़ा को अब दुआ समझे ।
पड़े इस अक्ल पर पत्थर,
अगर समझे तो क्या समझे ॥

—–o—–

१७६ (एक सेठ की चोरी)

एक सेठजी बड़े ही धनाढ्य और ऐश्वर्यशाली थे। अनायास एक समय सेठजी के घर में एकवार चोर घुस आये और सेठजी के घर का संपूर्ण माल असवाब बांध ले गये । प्रातःकाल होते ही सेठजी

के एक बेटे ने उठ कर देखा कि "हाय ! मेरा तो घर का घर ही लुट गया, कुछ बचा ही नहीं" । इस प्रकार महान् शोक करता रहा परन्तु फिर सोचा कि "खैर अब हुआ सो हुआ व्यर्थ सोच करने से क्या होगा ? और सोचा कि अब अपना घर तो बटोर झार कर देखूं कि कुछ बचा है या नहीं शायद कुछ घर बटोर ने ही से मिलजाये इस ख्यालको ले घरको बटोर झारकर एक जगह कूड़ा लगाया पर उस कूड़े में बहुत से लोह कहीं कांच वगैरः के टुकड़े थे जो सेठ के बेटे के कूड़ा खभोने में हाथों में इस प्रकार लगते थे कि सब हाथ फोड़े डालते थे पर थोड़ी देर के बाद ही सेठजी के बेटे को उसी कूड़े में एक चुम्बक पत्थरकी बटिया मिल गई जिससे कि सेठ के बेटेने सबके सब लोहेके टुकड़े खींच डाले और पुनःकूड़े को खभोने लगा। कुछ कालके बाद सेठके बेटे को उस कूड़े से तीन चीजें मिलीं एक सुई तथा एक धागा और एक लत्ता। पुनः सेठ के बेटे ने सोचा कि शायद इस कूडे में मुझे कुछ और मिल गया तो फिर उसे कहां रक्खूंगा इस लिये इस कपड़े की एक थैली ही सीं डालूं। ऐसा विचार थैली सींकर फिर कूड़े में ढूंढना प्रारम्भ किया । कुछ काल के बाद सेठ

के बेटे को चार छोटी छोटी ऐसी गाठें मिल गईं जिन में बहुत से रत्न भरे हुये थे। तब तो सेठ के बेटे को कुछ सन्तोष हुआ कि खैर अब हमारे भाइयों तथा बाल बच्चों का इतने धन से निर्वाह होजायगा और इतने से यदि हम फिर कुछ व्योपार करेंगे तो ईश्वर चाहेगा तो हम जैसे पहिले थे फिर वैसे ही हो जायंगे। महाशय दृष्टान्त तो यह हुआ पर इसका दार्ष्टान्त ये है कि:—

यह भारतवर्ष वही एक सेठ है जिसके पास एक अनुपम विद्यारूपी कोष था जिससे कि यह दुनियां के सभी हिस्सों से चढ़ा था पर कालान्तर के बाद अन्य मतावलम्बी रूपी चोर इसके घर में घुस इसका सारा विद्या भण्डार जो कुछ उनके ले जाने से गया ले गये शेष सबका सब यहीं जिस प्रकार कि लोग आग में लकड़ी जलाते हैं इसी भांति इसका मुख्य कोष वेद शास्त्र इतिहास आदि सारा लिटलेचर का लिट-लेचर भस्म कर दिया यहां तक कि उन्हीं वेद शास्त्रों से जल गरम होते थे। पुनः जब भारतवर्ष रूपी सेठ के एक बेटे ऋषि दयानन्द ने उठकर देखा तो कहा कि 'हाय! मेरातो सर्व नाश होगया कुछ घर में रहा ही नहीं, पर सोचकर उसने अपना घर बटोरना शुरू

किया और बटोर कर एक बड़ा भारी कूड़ा लगाया उस कूड़े में लोहे और कांच के टुकड़े जो उसके हाथों में लग लग हाथ फाड़ते थे वे तन्त्रादि थे । पुनः उसे चुम्बक पत्थररूप तर्कशास्त्र मिला जिससे उसने उन्हें अलग कर फिर कूड़ा टटोलना प्रारम्भ किया पुनः बुद्धिरूपी सुई, आर्य्यसमाज के नियमरूपी धागा, जन समुदायरूपी कपड़ा मिले जिससे कि उस बेटे ने आर्य्यसमाजरूप थैली सींकर फिर कूड़ा टटोलने लगा तो पुनः चार छोटी छोटी गाठें जिसमें अनेकों रत्न भरे थे वे ऋक् यजु साम अथर्व चारों वेद रूपी गाठें हैं और आर्य्यसमाजरूप थैली में रख यह विश्वास किया कि सब गया सो गया पर अब इतने धन से हमारे भाइयों तथा बाल बच्चों का निर्वाह होजा-यगा और यदि इतने धन से हमारे भाई वा बाल बच्चे व्योपार करेंगे तो हमारी पूर्व कैसी दशा फिर हो जावेगी ।

वेदे काञ्चनपत्तने प्रविलसद् वेदान्त दुर्गो महान्, मींमासा परिखा विभाति परितः शाब्दं महद् गोपुरम् । योग यामिनि जाग

एकानिश्चये सांख्यं विवेकात्मकं, सर्वें स्वार्थ-
तया विशन्ति बहुशो नैयायिकाः शाब्दिकाः॥

१८०– श्रेष्ट कार्यों में दीर्घ सूचना से हानि ।

कुरङ्गमातङ्गपतङ्गभृङ्ग ,
मीना हताः पञ्चभिरेव पञ्च ।
एकः प्रमादी स कथं न हन्यते,
यः सेव्यते पञ्च भिरेव पञ्च ॥

अर्थ—जब कि हिरन हाथी पतिंगा भौंरा मछली ये पांचों एक एक विषय के ग्राही होते हुए इन में फंस मौत को प्राप्त होते हैं तो भला मनुष्य जो कि पांचों यानी रूप रस गन्ध शब्द स्पर्श इनके प्रेम में निशि दिन इस कवि वाक्य के अनुसार फंसा हो कि-

बन्धनानि खलु सन्ति बहूनि·
प्रेम रज्जुकृतबन्धनमन्यत् ।
दारुभेदनिपुणोऽपिषड,
घ्रिर्निष्क्रियो भवति पङ्कजकोशे ॥

अर्थ—बन्धन तो संसार में बहुत प्रकार के हैं पर प्रेमरूपी रस्सी का बन्धन ही निराला है। देखो कड़ी से कड़ो और बांस की गांठ को काटने वाला भौंरा कमल के फूल में बंधकर उसकी मुलायम पांस को नहीं काट सकता और उसी में फंसा हुआ यह विचारता है कि:-

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं,
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पद्म जालम्।
इत्थं विचिन्तयति कोशे, गते
द्विरेफे हा हन्त हन्त नलिनीं गजउज्जहार॥

अर्थ—जब रात बीत जावेगी, प्रभात होगा तथा भुवनभास्कर अपनी सहस्रों किरणों से उदय होंगे और कमल खिलेगा तब मैं पुनः कल इस बन्धसे मुक्त हुआ इधर उधर घूमूंगा, अन्य फूलों का रस पान करूंगा। भौंरा ऐसा विचार कर ही रहा था कि अनायास एक हाथी उस ताल के तटपर आया कि जहां वह कमल के फूल में भौंरा बन्द था और उसने भौंरे को कमल के वृक्ष के समेत खींच लिया। बस फिर क्या था भौंरेजी का दम घुटकर काम तमाम हुआ और उस के विचार मन के मन में ही रह गये। इसका दार्ष्टन्त यह है कि यह

जीवात्मारूपी भौंरा संसाररूपी ताल शरीररूपी कमल में खुशबूरूप पक्ष विषय प्रेमरूप मायाजाल में पड़ा हुआ अच्छे उपदेश सुन सुन यह मनोर्थ किया करता है कि यह कल कर लूंगा, यह परसों कर लूंगा पर इसको यह विचार करते हुये ही अचानक काल-रूपी हाथी आकर मय कमल के खा जाता है और इसके विचार मन के मन ही में रहते हैं अतः—

दोहा !

काल करन्ते आजकर, आज करन्ते अब्ब।
पल में परलै होयगी, बहुरि करोगे कब्ब॥

—:[:०:०:]:—

१८१ (ईश्वर भक्ति)

जिस समय में यहां राजा विक्रमादित्य का राज्य था तो एक ब्राह्मण जो कि बहुत ही पढ़ा लिखा सुयोग्य पण्डित और सदाचारी तथा संतोषी था एक दिन उसकी स्त्री ने कहा कि 'आप इतने भारी तो पण्डित हो पर दीनता से इतना भारी क्लेश भोग रहे हो कि घर में

भोजनों के लिये अन्न भी नहीं, ऐसा संतोष किस काम का ? इस लिये आप बाहर जाकर कुछ धन इकट्ठा कीजिये जिस से यह कष्ट मिटे'। ब्राह्मण धन की चिन्ता में घर से निकल पड़े और चलते चलते एक वनमें एक महात्मा के पास पहुंचे महात्मा पूर्ण योगी और ब्रह्म-ज्ञानी थे अतः महात्मा ने इस ब्राह्मण को चिन्तित देख कर पूछा कि 'ब्रह्मदेव ! आप कुछ चिन्तित से प्रतीत होते हो, कहिये आप को क्या चिन्ता लग रही है' ? ब्राह्मण ने कहा कि 'महाराज ! मैं अपने घरका बहुत ही दीन हूं इस लिये मुझे धन की चिन्ता लग रही है। महात्मा ने पूछा कि 'भगवन् ! आपको कितने धन की आवश्यकता है' ? ब्राह्मण ने कहा 'जितना ही मिल जाय'। पुनः महात्मा ने कहा 'कुछ तो कहिये लाख दो लाख, करोड़ दो करोड़ वा चक्रवर्त्ती राज्य या कुछ इस से भी अधिक' ? ब्राह्मण ने पुनः वही उत्तर दिया कि 'जितना मिल जाय'। तब तो महात्माजी ने महाराज विक्रमादित्यजी को एक पत्र लिखा कि 'हमने आप को अमुक समय में इतनी योग क्रिया बतलाई थी उस के बाद अब जो शेष है उस के लिये आप इसी समय अपना सारा राज्य इस ब्राह्मणको देकर चले आइये मैं बतला दूंगा'। ब्राह्मण को यह पत्र दे

महाराज विक्रमादित्य के पास भेजा। ज्यों ही यह ब्राह्मण राजा के पास पहुंचा और पत्र हाथमें दिया तो राजा पत्र पढ़ते ही इतना प्रसन्न हुआ कि उसके आनन्द की सीमा न रही और ब्राह्मण को राज्य देने के लिये तैयार होगया। ब्राह्मण यह दृश्य देख महारानी मैत्रेयी की भांति अर्थात् जिस समय महाराज याज्ञवल्क्य अपनी दोनों भार्यों मैत्रेयी और कात्यायनी को छोड़ वन को चलने लगे तो कहा कि 'देखो प्रिया मैत्रेयि ! यह जो कुछ धन ऐश्वर्य है इसे तुम दोनों आधा आधा बांट लेना'। तब तो महारानी मैत्रेयी ने कहा कि:—

साहोवाच मैत्रेयी यन्नु मे इयं भगोः सर्वा पृथिवी वित्तेन पूर्णा स्यात् स्यामहं तेनामृता हो नेति नेति सहोवाच याज्ञवल्क्यो यथैवोपकरणवतां जीवितं तथैव ते जीवितꣳ स्यादमृतत्वस्य नाशास्ति वित्तेनेति ॥

अर्थ-महाराज यदि समस्त पृथिवी धन से परिपूर्ण हो और उस सब को आप मुझे दे देवें तो क्या मैं अमृत हो सकती हूं ? यह कईवार मैत्रेयीजी ने कहा

तो याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं कि 'भो मैत्रेयी ! तू अमृत नहीं किन्तु जिस प्रकार अन्य धनिक अपना जीवन व्यतीत करते है वैसा ही तू भी करेगी इस से धन से अमृत की आसा मत कर। यह सुन कर पुनः मैत्रेयी ने कहा कि:—

येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्याम्।
यदेव भगवान् वेत्थ तदेव मे विब्रूहीति ॥

महाराज जिस धन से मैं अमृत न हो सकूंगी उसे मैं ग्रहण करके ही क्या करूं ? सो आप जानते हैं, अतः मुझे वह उपदेश कीजिये जिस आनन्द के लिये आप सुन्दरी स्त्री घरबार सम्पूर्ण ऐश्वर्य छोड़कर वन को जाते हैं और किञ्चित् भी आप के मुंह पर मालीनता नहीं है। बस ठीक इसी प्रकार इस ब्राह्मण के भी हृदय में यह विचार उत्पन्न हुआ कि देखो एक ये हैं जो इस राज्य के छोड़नेमें इतने प्रसन्न होरहे हैं और एक मैं हूं जो इस राज्य को ग्रहण करता हूं। इस से यह ज्ञात होता है कि महात्माजी के पास इस राज्य से भी कोई विशेष सुख है जिस के लिये राजा आनन्दित होरहा है। यह सोच ब्राह्मण महाराज विक्रमादित्य से बोला कि 'महाराज ! मैं एकबार फिर महात्माजी के पास होआऊं

तब आके राज्य ग्रहण करूंगा'। राजा ने कहा कि 'जैसी आप की इच्छा हो'। ब्राह्मण पुनः महात्माजी के पास जाकर दोनों हाथ बांध महात्माजी के चरणों में लोट गया और कहा कि 'भगवन्! मैं राजा के पास आप का पत्र लेकर गया, राजा तुरन्त ही राज्य छोड़ने और आप के पास आने को प्रस्तुत होगया और उस के आनन्द की सीमा न रही, इस से मुझे ज्ञान हुआ कि उस राज्य सुख की अपेक्षा और कोई विशेष सुख आप के पास है जिस के लिये राजा हर्षित हुआ अतः आप दया करके मुझे उस सुख का उपाय बतलाइये'। महात्मा ने इसे प्रथम अधिकारी बना योग क्रिया सिखाना प्रारम्भ की और सिखाते सिखाते जब कुछ कुछ क्रिया शेष रही तो महात्माजी ने इस ब्राह्मण की परीक्षा ली। इसे एक दिन एक ग्राम में मट्ठा लेने को भेजा। यह ग्वालिनियों के यहां जाकर मट्ठा पूंछने लगा। ग्वालनियों ने कहा 'कुछ काल यहां बैठ जा, हमने अभी मट्ठा विलोया नहीं, विलोकर महात्माजी को मट्ठा दूंगी'। यह ब्राह्मण योगी ही था और आप जानते हैं कि जब मनुष्य निठल्ला होता है तो जिस काम में उसका अभ्यास होता है तथा जैसा स्वभाव होता है वही करने लग जाता है अतः ब्राह्मण ग्वालिनियों के घर से कुछ दूर पर

एक पुरानी दीवार थी उन के नीचे बैठ प्राणायाम करने लगा। इसे श्वास चढ़ाने का तो अभ्यास था पर उतारने का न था अतः ज्यों ही इसने श्वास चढ़ाई तो इसकी समाधी लग गई और वर्षा ऋतु होने के कारण दूसरे दिन इसके ऊपर वह दीवार कि जिस के नीचे यह बैठा था गिर पड़ी पर परमात्मा की कृपा से इसके कोई चोट न आई पर यह दीवार के अन्दर दब गया और श्वास निकलने का कोई छिद्र बना रहा अतः यह तीन मास पर्यन्त वहीं समाधि में डटा रहा। जब दीवार वाले ने अपनी दीवार की मिट्टी समेटने के लिये दीवार की मिट्टी खोदने लगा तो एकवार फावड़े की चोट कुछ इसके सिर में लग गई सो आप जानते ही हैं कि समाधी तब चार दशाओं में खुल-जाया करती है, यथा पानी के पड़ने, चोट के लगने आदि आदि अतः चोट से जब इस ब्राह्मण की समाधि खुली तो यह बोल उठा कि 'ला मट्ठा ला मट्ठा खोदने वालों ने समझा कि इस के भीतर कोई मनुष्य है अतः धीरज से जब ब्राह्मण को निकाला तो ब्राह्मण को होश आया और पूछने पर ज्ञात हुआ कि हम जब मट्ठा मांगने आये थे जब से तीन माह व्यतीत होगये। वहां महात्मा ने तो जान ही लिया था कि

जान पड़ता है कि मूर्ख ने कहीं समाधि लगा दी। जब तीन माह के पश्चात् यह महात्माजी के पास पहुंचे तो महात्माजी ने कहा 'कहिये तीन महीने तक मट्ठा ही मांगते रहे,। ब्राह्मण अत्यन्त संकुचित हो महात्मा के चरणों गिर क्षमा मांग शेष क्रिया भी सीख जीवन्मुक्त होगया। सच है असंख्यों चक्रवर्त्ती राज्यों का सुख मोक्ष सुख के कणके के बराबर नहीं हो सकता। महात्मा कपिल ने लिखा हैं कि :

उत्कर्षादपि मोक्षस्य सर्वोत्कर्षश्रुतेः।

——**——

१८२ (रईस और सईस)

एक पुरुष ने एक से पूंछा कि 'क्यों जी! दुनियां में रईस किस को कहते हैं और सईस किस को कहते हैं'? उस ने कहा कि 'दोनों के कामों को जांच कर जान लीजिये' क्या आप नहीं देखते हैं कि सईस प्रातःकाल उठते ही प्रथम घोड़े को थान के बाहर उस की लीद या पेशाब कराने के ख्यालसे निकालता है और आप उस के रात के थान को साफ़ कर पुनः खुरहरा ले घोड़े को खुजलाता है और खुजला कर

कुछ थोड़ी घास डालकर एक कूड़े में पानी तथा एक तौलिया ले उसे धोता पोंछता है पश्चात् आप घोड़े को घास डाल, खाश खुरपा ले घास छीलने को जाता है। वहां से आकर घोड़े को फिर कुछ घास डाल घास को झारता पीटता पुनः आप अपनी रोटी पानी बना खाकर चने ले घोड़े के लिये दाना दरकर उसे भिगोकर पुनः दूसरे समय फिर खुरहरा ले घोड़े को खुजलाता और यह भी देखा करता है कि घोड़ा कहीं दुबला तो नहीं होगया आदि आदि और रईस कल्पना कीजिये कि किसी रईस को किसी शहर को जाना है और रेलवे स्टेशन उसके ग्राम से दश या बारह मील है और वहां से उस शहर को गाड़ी दस बजे प्रातःकाल जाती है। रईस यहां प्रातः काल उठ अपने नैत्यिक कार्यों से निवृत्त हो ठीक आठ बजे सईस को यह हुक्म देता है कि 'साईस! मैं अमुक स्टेशन को जाऊंगा, इस लिये घोड़ा तैयार करो'। साईस अपने मालिक की आज्ञा पाकर घोड़े को तैयार कर ले आता और कहता है कि "महाराज! घोड़ा तैयार है"। रईस अपने कपड़े लत्ते पहिर ठीक नौ बजे चाबुक ले घोड़े पर

सवार हो इस ख्याल को भुला कि चाबुक मारने से घोड़े के लगेगा या दौड़ाने से घोड़ा थकेगा अपने रेल के टाइम का पूरा ख्याल रखते हुये सड़ासड़ चाबुक लगाता हुआ स्टेशन पर पहुंचता है। चाहे घोड़ा मरे चाहे रहे। पुनः स्टेशन पर पहुंच, घोड़े को छोड़, रेल पर सवार हो, अपने नियत स्थान पर पहुंचता है इसका दार्ष्टान्त इस प्रकार है कि जो मनुष्य प्रथम तो आठ बजे तक पड़े २ ठर्र२ सोया करते हैं पुनः आठ नौ बजे उठ मकानरूपी थानसे शरीररूप घोड़े को निकाल पाखाने आदि कराने जाया करते हैं पुनः पाखाने होकर मिट्टी तथा दंतधावन रूप खुरहरा ले शरीररूप घोड़े को खूब ही खुजलाते पुनः कुल्ला दतवन कर प्रायः लोग कुछ खाकर पानी पीते हैं वही प्रातःकालकी घास डालना है पुनः खाश खुरपा ले घास छीलने जाना यह कि बहुत मनुष्यों को कुल्ला दतवन पानी पीने के बाद यह पड़ती है कि "आज किसकी दाल बनेगी" कौनसा शाक या तरकारी बनेगी ? यह विचार कर मनमानी दाल तरकारी मंगा उसी के बीनने काटने में दुपहर तक लगे रहते हैं यही घास छीलना है पुनः कूंड़े में पानी और तौलिया ले घोड़े को धोना पोंछना दो २ चार २

कलसे पानी साबुन झमा आदि ले घंटों कहीं पैर कहीं मुख कहीं साबुन लगाना आदि घोड़े को धोना पोंछना पुनः दुपहर के भोजनरूप घास डाल पुनःपान पत्तों का लगाना तमाखू मलना आदि चने ले दाने का दरना है पुनः कुछ काल आराम कर दूसरे समय भङ्ग बूटी आदि का छनना घोड़े को मसाला आदि दे पुनः वही धोना मांजना सायंकाल से नौ बजे रात तक कहीं चौपड़ कहीं ताश कहीं शतरञ्ज कहीं तबला कहीं भाड़ों का तमाशा कहीं वेश्याओं के नृत्य ये घोड़े का टहलाना रूप कर्म है। बस जिन के प्रातःकाल से सायं-काल तक ये कर्म हों और धर्म कर्म परमेश्वर का भजन सन्ध्या गायत्री कुछ न हो वही पूरे सईस हैं और जो इस वाक्य के अनुसार कि "ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत" ४ बजे प्रातः के चाहे जितना जाड़ा हो, पाला पड़े आदि कष्टों के ख्याल को भुला, उठकर शौचादि क्रिया से निवृत्त हो, अपने नियमों का चाबुक ले इस शरीररूप घोड़े पर सवार हो शम दम उपरति तितिक्षा श्रद्धा समाधान आदि करता हुआ उसे अपने मौतरूपी स्टेशन से जो वायुरूप गाड़ी जिसमें जीव सवार होकर मोक्षरूप नियत स्थान पर जायगा ख्याल है कि आयु इतने दिन की है फलां समय तक इतना मार्ग तै करना

अर्थात् इतने २ कर्म कर शरीररूप घोड़े के मरने दुरने सहीसों की भांति डोरा ले ले कभी अपनी बाहें नहीं नापता कि आज कितने दुबले होगये या सीसा लेले सूरत नहीं देखता किन्तु सांसारिक कठिनाइयों की कुछ भी परवा न करता हुआ इस शरीररूप घोड़े पर चढ़ इसके नियमरूप चाबुक लगाता हुआ अपने कर्म धर्मरूप खुश्की के मार्ग को तै करके घोड़े को छोड़ रेल पर सवार हो नियत स्थान पर पहुंचते हैं वही पूरे रईस हैं। जैसे कि कठउपनिषद् में भी कहा है किः—

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेवतु।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेवच॥

अर्थ—अर्थात् इस शरीररूपी रथ पर आत्मारूपी रथी सवार है और मनरूपी पगड़ी को लिये हुये बुद्धि रूप कूंचवान इसे हांक रहा है, तथाः—

इन्द्रियाणि हयान्याहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।
आत्मेन्द्रियमनो युक्तः सीदत्याहुर्मनीषिणः॥

अर्थ—मन को वश में करनेवाले विद्वान् इन्द्रियों को घोड़े और विषयों को मार्ग तथा इसके फलको

आत्मा मन शरीर युक्त होकर भोगता है इसीलिये तो कहा है कि—"यस्तु विज्ञानवान् भवति" यानी जो इन घोड़ों को ठीक २ मार्ग पर चलाता है वह तो नियत स्थान पर पहुंच जाता है नहीं तो फिर घोड़े अपनी मनमानी कर रथ को मय सवार चकनाचूर कर देते हैं और इन रईसों सईसों का तो मुक़ाबला करते हुये ही मुझे इस कवि वाक्य के अनुसार कि:—

अग्निदाहे न मे दुःखं न दुःखं लोहताड़ने ।
इदमेव महादुःखं गुञ्जया सह तोलने ॥

—-—०—-—

१८३ (मोह)

एकवार एक मदारी जो बन्दरों को नचाया करते हैं एक बन्दर को पकड़ने गया और जिस बाग़ में बहुत से बन्दर रहा करते थे वहां एक इस प्रकार का गड्ढा खोदा जिसका कि ऊपरी सिरा संकुचित कम चौड़ा लम्बा और अन्दरूनी कुछ बड़ा था पुनः उस में एक रोटी ले बन्दरों को दिखाते हुये तोड़ तोड़

कर डाल दी और आप वहां से हट कर ओट में बैठ गया बन्दरोंने यह देखकर उस में से एक बन्दर उतर और गढ़े में हाथ डाल रोटी के टुकड़ों को मूठा में भर हाथ निकालने लगा पर गढ़े का सिरा कम चौड़ा होने तथा मूंठा बन्द होने के कारण बाहर न निकल सका तब तो बन्दर बहुत ही खीझा और बड़े ज़ोर २ से हाथ खींचता रहा तथा अपने ही हाथ को खींच २ काटता रहा पर हाथ तो जब निकले जब कि मूढ़ मूंठे की रोटी छोड़ दे तो हाथ पतला होजाय और हाथ निकल आये पर ऐसा न कर वह उसी रोटीके लालच मदारी के हाथ पकड़ा जाकर जन्म भर नचाया जाता है। इसका दार्ष्टान्त इस प्रकार है कि मनुष्यरूपी बन्दर संसार रूपी गड्ढे में पञ्च विषय वा पुत्र पौत्र रुपया पैसा रूप रोटी को पकड़ मूढ़ अपने सारे कर्म धर्मों को भुला देता और ब्रह्मरूप मदारी के हाथ पकड़ा जाकर बन्दरको तो मदारी एक ही जन्म नचाता है पर मनुष्यरूप बन्दरों को तो ब्रह्मरूप मदारी जन्म जन्मान्तर अनेक योनियों में नचाता है किसी कवि ने सच कहा है।

श्लोक ।

यस्मिन् वस्तुनि ममता मम तापस्तत्र तत्रैव।
यत्रैवायमुदास्ते मुदा स्वभावसंतुष्टः ॥

जिस जिस पदार्थ में मनुष्यों को ममता होती है वही वही दुःख है और जिस जिससे उदासीनता है वहां वहां स्वाभाविक संतुष्टता । अभिप्राय यह निकला कि ममता ही दुःखों की मूल है ।

—०—

१८४—पण्डितों में परस्पर एक दूसरे की निन्दा करनेका परिणाम ।

एकबार दो संस्कृतज्ञ पण्डित बड़े सुयोग्य विद्वान् एक स्थानपर पहुंचे और एक सेठजी के यहां उतरे । सेठजी ने दोनों को विद्वान् वेद शास्त्र सम्पन्न जानकर उन का बड़ा आदर सत्कार किया और उन दोनों विद्वानोंको कुछ जल पान करा स्नान करने को कहारोंसे पानी भरवा दिया, चौकियें डलवा दीं । पुनः पण्डितों से हाथ जोड़ के कहा कि 'महाराज ! आप दोनों महाशय अब स्नान

कीजिये'। सेठजी की यह प्रार्थना सुन उसने उस से कहा 'चलिये आप स्नान कीजिये' और उस ने उस से कहा कि चलिये आप स्नान कीजिये'। पुनः इन में से एक स्नान करने चौकीपर चला गया तब तो सेठजी ने इस पण्डित से जो बैठा था उस पण्डित की निस्बत कि जो स्नान करने चला गया था पूछा कि 'महाराज! पण्डित जो स्नान करने गये कैसे विद्वान् हैं'? पण्डित ने कहा कि 'उसे क्या आता है? वह तो निरक्षर भट्टाचर्य बैल है'। सेठ चुप रह गया पुनः जब वह स्नान करके आगये और ये स्नान करने गये तो सेठजी ने इन पण्डित से उनकी निस्बत पूछा कि 'महाराज! वे पण्डित जो कि स्नान करने गये कैसे विद्वान् हैं? इस ने कहा कि 'वह तो बिलकुल मूर्ख गधा है'। आखिर 'जब दोनों पण्डित स्नान करके आगये और अपनी सन्ध्या अग्निहोत्र पूजासे निवृत्त हुये तो सेठजी ने एक गट्ठा तो घास खूब ही हरी और एक डलिया भूसा अपने आदमियों के हाथ पंडितों को भेजा और आदमियों से कह दिया कि पण्डितों को जाकर ये दे देना और कह देना कि सेठजी ने ये आप दोनों साहबों के खाने के लिये भेजा है। आदमियों ने वैसा ही किया कि भूसा और घास ले जाकर पण्डितों से कहा कि 'महाराज! यह सेठजी ने आप दोनों साहबों के खाने

के लिये भेजा है'। दोनों पंडित घास और भूसा देख तथा आदमियों की बातें सुन बड़े क्रोधित हुये और कहा कि 'ज़रा सेठजी को इधर भेज देना'। आदमियों ने सेठजी से जाकर कह दिया कि 'पंडितों ने आपको बुलाया है'। सेठजी तुरन्त ही पंडितोंके पास पहुंचे तब तो पंडितों ने कहा कि 'सेठजी! क्यों आपने यह घास और भूसा हम लोगों के लिये भेजा है'? तब तो सेठ ने कहा कि 'महाराज! आप उन्हें बैल कहते और वह आप को गधा कहते सो गधे का चारा घास और बैल का चारा भूसा हमने भेज दिया'। पुनः दोनों पंडित वहां से विना खाये पिये कोरे कल्लांच गये।

—:[:०ॐ०:]:—

१८५ (आलस्य)

एकवार एक पुरुष ने कहा कि—

"पोस्तीने पी पोस्त नौ दिन चला अढ़ाई कोस"। तब दूसरे ने कहा 'अबे! पोस्ती न होगा वह कोई डाक का हरकारा होगा। पोस्तीने पी पोस्त तो कूंडी के इस पार या उस पार। जब तक एक बाग में दो

आलसी एक आम के वृक्ष के नीचे पास ही लेटे हुये थे उनमें से एक की छातीपर एक पका आम पड़ा हुआ था कि इतने में वहीं से होकर एक सवार निकला तब तो उन दोनों आलसियों में से एक बोला 'अरे ओ भाई सवार ! यह एक पका आम मेरी छातीपर पड़ा है सो इसे ज़रा मेरे मुंह में निचोड़ देना'। तब तो सवारने कहा 'तू बड़ा ही आलसी है, तेरी छातीपर पका आम पड़ा है और तू कहता है कि ये आम ज़रा मेरे मुंह में निचोड़ देना'। तब तो दूसरे ने कहा कि 'हां' साहब ! यह बड़ा ही आलसी है, रात भर मेरे मुंहको कुत्ता चाटता रहा और मैंने इससे कहा कि ज़रा दुतकार दे पर इसने दुत्त भी नहीं किया, ठीक है आलसियों के ये उद्देश्य है कि:—

शेर ।

दुनियां में हाथ पैर हिलाना नहीं अच्छा ।
मरजाना पर उठके कहीं जाना नहीं अच्छा ॥
बिस्तार पै मिस्ले लोथ पड़े रहना ही अच्छा ।
बन्दरकी तरह धूम मचाना नहीं अच्छा ॥
रहने दो ज़मी पे मुझे आराम यहीं है ।
छेड़ो न नक़्शे या है मिटाना नहीं अच्छा ॥

उठ करके घर से कौन चले यार के घर तक।
मौत अच्छी है पर दिल का लगाना नहीं अच्छा॥
धोती भी पहिने जब कि कोई गैर पिन्हाये।
उमरा को हाथ पैर चलाना नहीं अच्छा॥
शिर भारी चीज़ है इस तकलीफ़ हो तो हो।
पर जीभ बिचारी को सताना नहीं अच्छा॥
फांसी से मरिये पर न कोई काम कीजिये।
दुनियां नहीं अच्छी है ज़माना नहीं अच्छा॥
सिजदे से गर बहिश्त मिले दूर कीजिये।
दोज़क ही सही सरका झुकाना नहीं अच्छा॥
मिल जाय हिन्द खाक में हम काहिलों को क्या।
ऐ मीर फर्श रञ्ज मिटाना नहीं अच्छा॥

——*——

१८६ [आजकल का संस्कृत अध्ययन]

एक ब्राह्मण का बालक काशी संस्कृत अध्ययन करने के निमित्त गया। वहां जाके जब एक संन्यासी महाराज से कहा कि 'महाराज! मेरी इच्छा संस्कृत पढ़ने की है'। तब तो संन्यासी ने कहा कि:—

पठितव्यं तदपि मर्त्तव्यं न पठितव्यं तदपि।
मर्त्तव्यं फिर दन्त कटा कटेति किं कर्त्तव्यम्।"

यह सुन एक दूसरे पण्डित ने कहाः—

स्वातव्य तदपि मर्त्तव्य न स्वातव्यं ।
मर्त्तव्यं फिर अन्न भसाभसेति किं कर्त्तव्यम्‌ ।

अतः बालक से ऐसा क्यों कहते हो ? आ बच्चे ! मैं तुझे संस्कृत पढ़ाऊंगा । बच्चा पीछे चल पड़ा और उन महाराज के पास पहुंच बहुत दिन तक पढ़ता रहा। एक दिन यह बच्चा अपने गुरुसे बोला कि 'महाराज! मुझे बहुत दिन पढ़ते होगये पर मुझे संस्कृत बोलना अब तक नहीं आया'। पण्डितजी बोले कि 'विद्या तो गुरुओं की कृपा से आती है, रटने से विद्या नहीं आती। जब गुरु कुञ्जी बतला देते हैं तो ताला की भांति कपाट खुल जाते हैं'। सुन संस्कृत बोलने की युक्ति यह है कि जितने शब्द हैं उन के ऊपर बिन्दु लगा देने से संस्कृत बन जाती है, यथा--पुस्तकं, कलमं स्याहिं, लोटं, थारिं, शाकं, दालं, भातं। यह सुन बच्चा बड़ा ही प्रसन्न हुआ और दूसरे दिन यह बच्चा यह श्लोक बना कर ले गया कि

बापं आजां नमं स्कृत्यं परं पांज तथैं वंच ।
मंयां शिवं दत्तं दांसन गीतां टीकां करौं म्यंहं ॥

और यह संस्कृत का अभिमानी बन कर चला

...ि कि बिना सत् विद्या के इस कवि
...ुसार कि—

...द्यया बिना सौख्यं, नराणां जायते ध्रुवम्
...तो धर्मार्थ मोक्षेभ्यो विद्याभ्यासं समाचरेत् ॥

अन्यथा इस हुरदंगपन से कभी सुख नहीं मिल सक्ता।

——०——

१८७—(सत् पुरुष)

सत् पुरुष—वह है कि जो दूसरों का उपकार करै और कभी जबान पर न लावै।

गुणवान् वह है—जो सदा विद्या गुण के खोज और विचार में रहता है।

धैर्यवान् वह है—जो सुख दुख धन क्षीणता और वृद्धि में सामान्य रहता है।

रूपवान् वह है—जो विद्या और नम्रता लज्जा सत्य शीलता और धर्म के सद्गुणों से अलंकृत हो।

बुद्धिमान् वह है—जो समय का रंग देखकर का... करता है।

विचारवान् वह है-जो अपने अवगुणों और दूसरे के गुणों

की याद रखता है और कोई वचन बे समझे मुख से नहीं निकालता।

ज्ञानी वह है—जिसके मन में संसार के सुख दुःख से विकार उत्पन्न नहीं होता तथा सत् असत् का ज्ञाता हो।

सन्तुष्ट वह है-जो किसी आशा से बद्ध नहीं।

बलवान् वह है-जो इन्द्रियों के प्रबल वेग को रोके।

सब का प्रिय वह है-जो केवल अपना लाभ और स्वार्थ नहीं विचारता।

भाग्यवान् वह है-जो दूसरों की दशा देखकर अपनी सुधारे।

अभागी वह है-जिस की दशा देख कर ज्ञानियों को भय हो।

१८८ (जीवन और मौत)

१ ईश्वर की उपासना जीवन	प्रकृति की उपासना मौत।
२ विद्या जीवन	अविद्या मौत।
३ ब्रह्मचर्य्य जीवन	दुराचार मौत।
४ सत्सङ्ग जीवन	कुसङ्ग मौत।
५ पुरुषार्थ जीवन	आलस्य मौत।
६ परोपकार जीवन	स्वार्थ मौत।

७ अहिंसा जीवन	हिंसा मौत।
८ सचाई जीवन	झूंठ मौत।
९ सादगी जीवन	आरायश मौत।
१० पवित्रता जीवन	अपवित्रता मौत।
११ स्वाध्याय जीवन	अनध्याय मौत।
१२ अस्तेय जीवन	चोरी मौत।
१३ त्याग जीवन	ख्वाहिस मौत।
१४ यज्ञ जीवन	भ्रष्टता मौत।
१५ वीरता जीवन	कायरता मौत।
१६ धैर्य्य जीवन	अधैर्य्य मौत।
१७ दृढ़ता जीवन	शिथिलता मौत।
१८ साहस जीवन	असाहस मौत।
१९ उत्साह जीवन	निरुत्साह मौत।
२० प्रियवाक्य जीवन	कटुवाक्य मौत।
२१ कीर्ति जीवन	अकीर्त्ति मौत।
२२ एकता जीवन	फूट मौत।
२३ शान्ति जीवन	अशान्ति मौत।
२४ न्याय जीवन	पक्षपात मौत।
२५ कर्त्तव्य जीवन	अकर्त्तव्य मौत।

संसार में प्रत्येक मनुष्य मौत से डरता हुआ देखा जाता है अतः मौत से डरो और जिन्दगी की ख्वाहिश करो।

१८९ (याद रखने योग्य १० बातें)

१ ईश्वर के साथ नम्रता और उससे स्तुति प्रार्थना ।
२ सर्वसाधारण के सा ा न्याय और शील ।
३ इन्द्रियों के साथ दमन ।
४ विद्वों के साथ सत्सङ्ग ।
५ वृद्ध और बड़ों के साथ सेवा ।
६ बराबर वालों से मित्रता छोटों के साथ प्रेम ।
७ वैरियों के साथ सहनशीलता ।
८ मित्रों के साथ सत्कार शान्ति शीलता और मोहब्बत ।
९ मूर्खों के साथ मौनावलम्बन ।
१० बुद्धिमानों के साथ मान और प्रतिष्ठा ।

(पांच के पांच शत्रु)

१	विद्या का शत्रु	घमण्ड ।
२	दान की शत्रु	कृपणता ।
३	बुद्धि व अक्ल का शत्रु	क्रोध ।
४	सन्तोष का शत्रु	लालच ।
५	सच का शत्रु	झूंठ ।

१९०—(खुदा का बेटा)

एक पादरी से एक गांववालेने पूंछा कि सं
को मोक्ष देनेवाला ईशामशीह कौन है और कहां र
हैं ? पादरी साहब ने कहा कि 'वह परमेश्वर (खुद

का बेटा है और परमेश्वर ही के साथ रहता है'। गांव-वाले ने पूछा 'भला परमेश्वर अभी जीते हैं वा मरगये'? पादरी साहब ने कहा 'भाई ! वह कभी मरता नहीं'। तो गांववाले ने कहा कि 'क्या आप बाप बेटे में फूट कराया चाहते हैं कि बाप के जीते जी हमसे कहते हो कि मोक्ष बेटा देगा ? हमारे यहां की तो चाल ऐसी नहीं है, इस लिये हम तो जब तक बाप जीता रहेगा उसी को मानेंगे और उसी से सब कुछ मागेंगे, जब वह न रहेगा तब तो बेटा ही मालिक है।

ब्रह्माजीका उपदेश।

एकबार ब्रह्माजी के पास संसार के तीनों कोटि के पुरुष यानी देवता, मनुष्य और राक्षस पहुंचे और हाथ जोड़ प्रथम देवताओं ने कहा कि 'महाराज ! हमारे लिये कुछ उपदेश कीजिये' तो ब्रह्माजीने कहा कि 'द' पुनः मनुष्यों ने कहा कि 'महाराज हमें भी कुछ उपदेश कीजिये' तो ब्रह्माजी ने उन से यही कहा कि 'द' पुनः राक्षसों ने भी कहा कि 'महाराज! हमें भी कुछ उपदेश कीजिये' तो ब्रह्माजी ने उन के लिये भी वही 'द' अक्षर कह दिया। पुनः ब्रह्माने तीनों को अपने पास २५ बुला के पूछा कि 'तुम हमारे उपदेश को समझे'? तो तीनों ने कहा कि 'हां, महाराज ! समझे'। तब देवताओं ने कहा कि महाराज ! हम 'द' अक्षर से यह समझे कि तुम सब दमन करो' और मनुष्यों ने कहा